भूगोल में क्षेत्रीय कार्य एवं प्रयोगशाला प्रविधियाँ

कक्षा XI—XII के लिए पाठ्यपुस्तक

भूगोल में क्षेत्रीय कार्य एवं प्रयोगशाला प्रविधियाँ

कक्षा XI—XII के लिए पाठ्यपुस्तक

एल० एस० भट्ट
असलम महमूद

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्
NATIONAL COUNCIL OF EDUCATIONAL RESEARCH AND TRAINING

आमुख

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् द्वारा विद्यालयों के लिए निर्मित कक्षा ग्यारहवीं और बारहवीं के पाठ्यक्रम के दृष्टिकोण को ध्यान में रखते हुए यह पुस्तक लिखी गई है।

प्रो० मुनीस रज़ा की अध्यक्षता में माध्यमिक एवं उच्चतर माध्यमिक स्तर की दृष्टि से भूगोल विषय के लिए एक संपादन-मंडल का निर्माण किया गया। संपादन-मंडल ने पर्याप्त समय लगाकर नवीं, दसवीं, ग्यारवीं तथा बारहवीं कक्षाओं के लिए भूगोल के पाठ्यक्रम को विकसित किया। तत्पश्चात् इस पाठ्यक्रम पर आधारित विभिन्न पुस्तकों की पाण्डुलिपियाँ तैयार की गईं।

प्रस्तुत पुस्तक "भूगोल में क्षेत्रीय कार्य एवं प्रयोगशाला प्रविधियाँ" कक्षा ग्यारह तथा बारह के लिए प्रणीत है। यद्यपि यह एक पृथक पुस्तक है किन्तु यह दृष्टि में रखा गया है कि चारों सत्रों के लिए निर्धारित भौगोलिक सिद्धान्तों से सम्बद्ध विभिन्न भागों के साथ क्षेत्रीय कार्य एवं अन्य सम्बन्धित क्रियाएँ पूरी की जाएँ।

हम प्रो० मुनीस रज़ा तथा उनके संपादन-मंडल के सहयोगियों के प्रति आभार प्रकट करते हैं जिन्होंने इन पुस्तकों के पाठ्यक्रम तथा पाण्डुलिपियों को तैयार करने में सहायता दी। हम प्रो० एल० एस० भट्ट तथा श्री असलम महमूद के प्रति भी आभारी हैं जिन्होंने इस पुस्तक की पाण्डुलिपि तैयार की और जिन्हें विचार-विमर्श के पश्चात् संपादन मंडल ने अपनी स्वीकृति प्रदान की। इस पुस्तक के मानचित्र तथा आरेख दिल्ली विश्वविद्यालय के श्री कृष्णकुमार द्वारा तैयार किए गए। हम शिक्षा विभाग, दिल्ली प्रशासन के श्री एस० एस० रस्तोगी तथा श्री एस० सी० शर्मा के प्रति भी कृतज्ञ हैं जिन्होंने अल्पकाल में इस पुस्तक का हिन्दी अनुवाद किया।

पाठ्यक्रम तथा पाठ्यपुस्तक के निर्माण के लिए पर्याप्त कुशलता तथा अनुभव की आवश्यकता होती है। पुस्तक के निर्माण में सुनिश्चित योजना अनुवेक्षण तथा पुनर्विलोकन अत्यंत अनिवार्य है। अंत में मुद्रण के समय भी यथोचित पर्यवेक्षण की आवश्यकता होती है। इन सबके लिए मैं सामाजिक विज्ञान एवं मानविकी शिक्षा विभाग के अपने सहयोगियों, विशेष रूप से प्रो० बी० एस० पारख और श्रीमती सविता सिन्हा तथा उनकी सहायक डा० श्रीमती सविता वर्मा के प्रति भी आभार प्रकट करता हूँ। वास्तव में श्रीमती सविता सिन्हा की निष्ठा तथा अनवरत परिश्रम के फलस्वरूप ही यह पुस्तक प्रकाशित हो सकी।

पाठ्यक्रम-निर्माण तथा शैक्षणिक सामग्री का विकास एक सतत विकासशील प्रक्रिया है अतः शिक्षकों द्वारा दिए गए सुझावों का हम सहर्ष स्वागत करेंगे और इन सुझावों का इस पुस्तक के संशोधित संस्करण में उपयोग भी करेंगे।

शिव कुमार मित्र
निदेशक
राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्

नई दिल्ली

प्राक्कथन

नई शिक्षा-प्रणाली के अन्तर्गत +2 स्तर, पाठ्यक्रम की कार्य-शृंखला में एक आवश्यक कड़ी है। इसके द्वारा यह अभीष्ट है कि विद्यालयों में पहले दस वर्षों में प्राप्त सामान्य शिक्षा की नींव पर आधारित शिक्षा के अनुसार विद्यार्थी किसी एक शाखा में विशिष्ट ज्ञान प्राप्त कर सकें। तदनुसार यह आवश्यक है कि इस निर्णायक स्तर पर विद्यार्थियों के भूगोल के ज्ञान को विस्तृत तथा सुदृढ़ किया जाए जिससे जो विद्यार्थी इस विषय को वैकल्पिक विषय के रूप में पढ़ना चाहते हैं, उनमें इसके प्रति गहरी बौद्धिक रुचि का विकास हो सके, जो उनके दैनिक जीवन में तथा विशेषज्ञता के क्षेत्र में उपयोगी हो सके। इसके अतिरिक्त भूगोल एक ऐसा विषय है जो अन्य विषयों—विशेषतः प्राकृतिक विज्ञान के क्षेत्र में अर्थशास्त्र, राजनीति विज्ञान, समाजशास्त्र सदृश अन्य विषयों के अध्ययन में सहायक होता है।

इसी पृष्ठभूमि को ध्यान में रखते हुए सम्पादन-मंडल ने अनेक शिक्षकों तथा विभिन्न शिक्षा संस्थानों, जिनकी रुचि भूगोल-शिक्षण में सुधार लाने में थी, के सहयोग से, विभिन्न स्तरों के लिए सम्बद्ध रूप में, पाठ्यक्रम की एक रूपरेखा तैयार की है। इसमें दो सत्रों (अर्द्ध वर्षीय) के लिए क्रमबद्ध भूगोल तथा शेष दो सत्रों के लिए भारत के भूगोल के शिक्षण की योजना बनाई गई है।

भौतिक भूगोल की पुस्तक ग्यारहवीं कक्षा के पहले सत्र के लिए है जिसके पहले दो अध्याय विषय के रूप में भूगोल की प्रकृति एवं क्षेत्र से तथा ज्ञान-जगत में इसके स्थान से संबंधित हैं। वास्तव में ये दो अध्याय चार सत्रों में विभक्त पूरे पाठ्य विषय की भूमिका हैं।

दूसरी पुस्तक मानव भूगोल के संबंध में है। इन दो खण्डों में जिन सिद्धांतों के समन्वय पर विचार किया गया है, उनका व्यावहारिक रूप में विवेचन अन्य दो खण्डों में किया जाएगा। इनके नाम हैं (1) भारत का सामान्य भूगोल (2) भारत का प्रादेशिक भूगोल। भारत तथा प्रादेशिक भूगोल का महत्व स्वतः स्पष्ट है।

संपादन मंडल का यह विचार है कि प्रयोगशाला एवं क्षेत्रों में व्यावहारिक पक्ष का अध्ययन उतना ही आवश्यक है जितना कि सैद्धांतिक पक्ष का। अतः इन दोनों के अध्ययन के अभाव में भूगोल का अध्ययन तथा उसकी प्रकृति एवं कार्य का अनुमूल्यन अपूर्ण रह जाएगा। अतः इस पाठ्य विषय में पर्याप्त क्षेत्र-कार्य एवं व्यावहारिक कार्य को स्थान दिया गया है और इसी शृंखला में प्रस्तुत पुस्तक 'भूगोल में क्षेत्रीय कार्य एवं प्रयोगशाला प्रविधियाँ' का निर्माण किया गया है।

प्रस्तुत पुस्तक के लेखकों ने प्रो० जॉर्ज कुरियन एवं प्रो० भा० स० पारख द्वारा संपादित परिषद् की पुरानी पुस्तक 'प्रयोगात्मक भूगोल' से भी सामग्रियाँ ली हैं। अतः यह संपादन-मंडल उस समय की भूगोल पाठ्यपुस्तक समिति के सदस्यों एवं 'प्रयोगात्मक भूगोल' की पुस्तक के संपादकों का भी धन्यवाद ज्ञापन करता है।

इसके अतिरिक्त कक्षा 11 और 12 के लिए 'भूगोल अभ्यास पुस्तिका' संपादन-मंडल द्वारा निर्मित पाठ माला की दूसरी पुस्तक है। इस प्रयास की शिक्षकों द्वारा व्यापक रूप से प्रशंसा हुई है।

मैं प्रो० एल० एस० भट्ट तथा श्री असलम महमूद के प्रति आभारी हूँ जिन्होंने इस पुस्तक का प्रणयन किया। मैं प्रो० सी० डी० देशपाण्डे तथा प्रो० लियरमंथ का भी हार्दिक रूप से धन्यवाद देता हूँ जिन्होंने इस पुस्तक की पाण्डुलिपि का निरीक्षण किया तथा इसके विकास के लिए अपने उपयोगी सुझाव भी प्रस्तुत किए। इस पुस्तक के मानचित्र तथा आरेख दिल्ली विश्वविद्यालय के श्री कृष्णकुमार द्वारा बनाए गए हैं। इस कार्य के लिए हम उनके प्रति कृतज्ञ हैं। अंत में हम शिक्षा विभाग, दिल्ली प्रशासन के श्री एस० एस० रस्तोगी तथा श्री एस०सी० शर्मा की चर्चा करना नहीं भूलेंगे जिन्होंने अल्पसमय में इस पुस्तक का हिंदी में अनुवाद किया।

मैं राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् की श्रीमती सविता सिन्हा को विशेष रूप से धन्यवाद देता हूँ जिनके सतत परिश्रम के फलस्वरूप इस पुस्तक का प्रकाशन संभव हो सका। यह पुस्तक उनके निष्ठापूर्ण एवं संलग्नशील कार्य का प्रतिफल है।

पाठ्यक्रम तथा पाठ्यपुस्तकों का निर्माण एक निरंतर गतिशील प्रक्रिया है अतः अनुभवी शिक्षकों के सुझाओं का सहर्ष स्वागत है। इस पुस्तक का नया संस्करण तैयार करने में इन सुझावों का उपयोग किया जाएगा।

मुनीस रज़ा
अध्यक्ष
भूगोल का संपादन-मंडल

नई दिल्ली
जुलाई 22, 1977

विषय-सूची

आमुख

प्राक्कथन

चित्रों की सूची

अध्याय 1 भूगोल में क्षेत्रीय अध्ययन एवं प्रयोगशाला विधियों का महत्व 1

अध्याय 2 मानचित्र बनाना 3

मापनी : उनका प्रयोग तथा रचना—मानचित्र पर मापनी का निरूपण; रेखीय मापनी; विकर्ण मापनी; किसी क्षेत्र का क्षेत्रफल ज्ञात करना; मानचित्र को बड़ा या छोटा करना; मानचित्र प्रक्षेप विकासनीय और अविकासनीय भू पृष्ठ; मानचित्र प्रक्षेपों का वर्गीकरण; पृथ्वी के ग्रिड का प्रक्षेपण; प्रक्षेपों का चयन; सर्वेक्षण—सर्वेक्षण विधियाँ; भूगोल में सर्वेक्षण की आवश्यकता।

अध्याय 3 मानचित्र विधियाँ 30

सांख्यिकीय आरेख; मानचित्र की विधियाँ; बिन्दु मानचित्र; सममान रेखा मानचित्र; वर्णमात्री मानचित्र; प्रवाह मानचित्र; रंगारेखी मानचित्र; वर्गित प्रतीक मानचित्र।

अध्याय 4 मानचित्रों की व्याख्या 49

मापनी के आधार पर वर्गीकरण; कार्यों के आधार पर वर्गीकरण; रूढ़ चिह्नों का प्रयोग; मानक रंगों का प्रयोग; भौतिक लक्षणों की व्याख्या; उच्चावच लक्षणों का निरूपण; ढाल के विभिन्न रूप; अनुप्रस्थ परिच्छेद खींचना; स्थलाकृतिक मानचित्रों की व्याख्या; मानचित्रों की व्याख्या करने की विधि; कुछ चुने हुए स्थलाकृतिक मानचित्रों की व्याख्या।

अध्याय 5 मौसम का अध्ययन 73

तापमान का मापन; वायुमंडलीय दाब का मापन; वर्षा की माप; पवन दिशा एवं गति; मौसम सेवा विभाग; मौसम का प्रेक्षण; हवाई चित्र तथा उपग्रही चित्र।

अध्यात 6 क्षेत्र-अध्ययन 85

क्षेत्र-अध्ययन की योजना; भूमि-उपयोग सर्वेक्षण; विद्यालय का स्रवण क्षेत्र; किसी बाजार का सर्वेक्षण; किसी उद्योग का सर्वेक्षण; उच्चावच के लक्षणों को पहचानना। मानचित्र बनाना तथा व्याख्या करना।

अध्याय 7 मात्रात्मक विधियाँ 98

आँकड़े और सारणीयन; सारणियों के प्रकार; केन्द्रीय प्रवृत्ति; केन्द्रीय प्रवृत्ति की माप; विक्षेपण और केन्द्रीकरण की माप; विभिन्न चरों की संयुक्त माप; सूचकांक; सम्बन्धों की माप।

Appendices 134

I Representative Fractions with their Metric and British Epuivalents

II Important Properties of some common Projections

III Topographic Maps of the Survey of India

IV Altitudes Pressures and Temperatures

V Relative Humidity as a Percentage

VI The Beaufort scale for Estimating wind speed

शब्दावली 141

चित्रों की सूची

1. रेखीय मापनी 5
2. रेखीय मापनी की रचना 6
3. विकर्ण मापनी की रचना 7
4. वर्ग विधि द्वारा क्षेत्रमापन 8
5. वर्गों की विधि से घटाना 9
6. सरल बेलनाकार प्रक्षेप 14
7. बेलनाकार समक्षेत्र प्रक्षेप 16
8. एक मानक अक्षांश रेखा का सरल प्रक्षेप 17
9. खमध्य समध्य प्रक्षेप 18
10. जरीब के अंग 21
11. सरल जरीब सर्वेक्षण के लिए त्रिभुजों का रेखाचित्र 22
12. जरीब सर्वेक्षण के लिए मापांकन पुस्तिका 24
13. सर्वेक्षण पट्ट तथा दर्श रेखक 25
14. ध्रुवतारा तथा सप्तर्षि मंडल 26
15. दंड की छाया और अन्तर 27
16. घड़ी द्वारा दिशाओं का पता लगाना 27
17. चुम्बकीय कपास का डायल 28
18. रैखिक ग्राफ 31
19. आयात चित्र 32
20. बहु रेखा चित्र 33
21. वृत्तों के लिए अंशांकित रेखीय मापनी 33
22. भूमि उपयोग के दिखाने के लिए वृत्ताकार आरेख 34
23. दंड आरेख (लंबवत्) 35
24. बहु दंड आरेख 36
25. वर्ग विधि 37
26. A सेवा तथा सुविधाओं का स्थानीय प्रतिरूप 38
26. B अनुपातिक वृत्त-नगर-आकार 38
27. पवनारेख एवं तारा आरेख 40

28. आयु लिंग पिरैमिड-भारत की जनसंख्या (1971) 41
29. परिक्षेपण आरेख 41
30. बिन्दु मानचित्र (जनसंख्या का वितरण) 43
31. सममान रेखा-मानचित्र 44
32. वर्णमाली मानचित्र 45
33. प्रवाह मानचित्र 46
34. रंगारेखी मानचित्र 47
35. रूढ़ चिह्न 52
36. समोच्च रेखीय मानचित्र 53
37. A पहाड़ी छाया करण द्वारा उच्चावच प्रदर्शन 54
37. B हैश्यूर द्वारा उच्चावच प्रदर्शन 54
38. समोच्च रेखाओं एवं हैश्यूर द्वारा उच्चावच 55
39. समोच्च रेखाओं का अन्तर्वेशन 56
40. शांकव पहाड़ी 57
41. पठार 57
42. कटक 58
43. टेकरी युक्त मैदान 58
44. घाटी और पर्वत-स्कंध 59
45. भृगु 59
46. जल प्रपात 59
47. उत्तल और अवतल ढाल 60
48. समोच्च रेखाओं से परिच्छेदिका खींचना 61
49. सिक्स का अधिकतम तथा न्यूनतम थर्मामीटर 75
50. शुष्कार्द्र बल्ब थर्मामीटर 76
51. वायुमंडलीय दाब का मापन 77
52. फोर्टीन का बैरोमीटर 78
53. वर्षा का माप 79
54. भारतीय मौसम मानचित्र 82
55. भूकर मानचित्र खेतों की सीमाओं के साथ 86
56 भूकर मानचित्र भूमि-उपयोग दिखाते हुए 87
57. वर्ग अन्तरालों का चयन और मानचित्र 113
58. लोरेंज वक्र 121
59. अवस्थिति वक्र-जनजातियों की जनसंख्या का संकेन्द्रण 123
60 कृषीय उत्पादकता की संयुक्त सूची 127
61. दो चरों के मध्य सम्बन्ध प्रदर्शित करने वाला प्रकीर्ण आरेख 130
62. प्रकीर्ण आरेख 131
63. Reference map of Topographic Sheets Published by the Survey of India 137

अध्याय 1

भूगोल में क्षेत्रीय अध्ययन एवं प्रयोगशाला-विधियों का महत्व

सामाजिक अथवा प्राकृतिक विज्ञान के किसी भी विषय की भाँति ही भूगोल में भी विश्लेषण करने के अपने साधन और विधियाँ हैं। आप जानते हैं कि पृथ्वी मानव का घर है और हम सब अपनी-अपनी जीविका के लिए इस पर विभिन्न प्रकार के क्रिया-कलाप करते हैं। अतः पृथ्वी का ज्ञान हमारे लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है। विज्ञान और तकनीकी विकास के साथ यह ज्ञान अधिकाधिक जटिल होता जा रहा है। पृथ्वी के प्रत्येक भाग पर मनुष्य रहता है और उसकी तथा वातावरण के बीच क्रियाओं और अंतर्क्रियाओं के परिणामस्वरूप वह भाग अपना एक विशिष्ट व्यक्तित्व रखता है। अतः भूगोलवेत्ता का सर्वप्रथम कार्य भूतल के विभिन्न लक्षणों का अध्ययन करना है। इसके बाद वह इन विभिन्न लक्षणों के बीच के अंतर्संबंधों का विश्लेषण करता है। तदुपरान्त वह भौगोलिक दृश्य-भूमि के विभिन्न भागों को उनकी समानता और विविधता के अनुसार एक-दूसरे से अलग करत है।

पृथ्वी का मनुष्य के निवासस्थल के रूप में अध्ययन करने के लिए भूगोलवेत्ता के प्रमुख साधन ग्लोब, मानचित्र, आरेख, फोटोग्राफ, ग्राफ तथा उच्चावच-मॉडल और साथ ही कई प्रकार के उपयोगी आँकड़े, संदर्भ-पुस्तकें, एटलस तथा लेख होते हैं। आजकल कृत्रिम उपग्रहों द्वारा पृथ्वी के अनेक चित्र खींचे गए हैं। इन उपग्रही चित्रों से हमें भूतल के विविध लक्षणों जैसे स्थलरूपों, वनस्पतियों, खनिजों आदि के अध्ययन में बड़ी सहायता मिली है। ग्लोब मनुष्य द्वारा निर्मित पृथ्वी का एक नमूना (मॉडल) है। इससे पृथ्वी के निकटतम स्वरूप का ज्ञान होता है। ऐसे मॉडल द्वारा हमें पृथ्वी के आकार और प्रकृति को समझने में सहायता मिलती है। पृथ्वी के विभिन्न भागों की खोजों के प्रारम्भिक काल से ही मनुष्य विभिन्न कार्यों के लिए मान-चित्रों का प्रयोग कर रहा है। विभिन्न मापनी पर बने मानचित्र भी पृथ्वी के विविध भागों के अध्ययन में मॉडल का कार्य करते हैं। किसी क्षेत्र के साधनों की जानकारी, उनके उपयोग एवं विकास की योजना बनाने में मानचित्रों का महत्व दिन-पर-दिन बढ़ रहा है। भूगोलवेत्ता किसी भी घटक के विश्लेषण में मानचित्र का उपयोग प्रमुख साधन के रूप में करता है। मानचित्र कई प्रकार के होते हैं। उदाहरणार्थ, भारतीय सर्वेक्षण विभाग स्थलाकृतिक मानचित्र बनाता है। इन मानचित्रों का उपयोग भू-आकारों, प्राकृतिक वनस्पति, बोया गया क्षेत्र, ग्रामीण तथा नगरीय बस्तियों, यातायात तथा संचार-व्यवस्था आदि का अध्ययन करने के लिए किया जाता है।

इसके अतिरिक्त भूगोलवेत्ता को भूतल पर हो रहे परिवर्तन-स्वरूपों का भी अध्ययन करना होता है। इसके लिए उसे प्राकृतिक वातावरण के सभी पहलुओं, भौतिक तथा मानवीय साधनों और उनके अंतर्संबंधों आदि पर क्षेत्रीय कार्य द्वारा आँकड़े एकत्रित करना होता है अथवा पहले से उपलब्ध सांख्यिकीय आँकड़ों का वह प्रयोग करता है। इस कार्य में सांख्यिकीय मानचित्र और आरेख अत्यन्त उपयोगी साधन होते हैं। भौगोलिक अध्ययन में विश्लेषण की सभी मानचित्रण एवं सांख्यिकीय विधियाँ अपनाई जाती हैं। भौगोलिक अध्ययन में गत दशक से बहुत बड़ा परिवर्तन आया है। अब बिजली से चलने वाली कम्प्यूटर और परिकलन मशीनें उपलब्ध हैं जो आँकड़ों को शीघ्र ही संकलित एवं संसाधित कर देती हैं। मानचित्र बनाने में भी अब कम्प्यूटर मशीनों का प्रयोग होता है। कम्प्यूटर लेखाचित्रों द्वारा भूतल के विभिन्न लक्षणों के बीच अति

जटिल संबंधों को भी समझना आसान हो जाता है।

भौगोलिक विशेषताओं की अनेकानेक विषमताओं से युक्त भारत एक अति विशाल देश है। इतने बड़े देश को एक सुगठित स्वतंत्र राष्ट्र के रूप में बाँधे रखने के लिए अनेक शक्तियाँ कार्य कर रही हैं। ऐसे देश की अधिकाधिक जानकारी प्राप्त करने के लिए मानचित्रों, आरेखों और फोटोग्राफों का बहुत अधिक योगदान है।

प्रस्तुत पुस्तक, आधुनिक भूगोल के मूलतत्वों को प्रयोगात्मक ढंग से स्पष्ट करने के उद्देश्य से लिखी गई है। भूगोल के अंतर्विषयी स्वरूप, भूतल के प्राकृतिक एवं मानव-कृति लक्षणों से इसका संबंध, बदलते हुए प्रतिरूपों पर इसमें दिया जाने वाला बल और भूगोल के कई पूरक दृष्टिकोण का विकास इस पुस्तक की विशेषताएँ हैं।

पुस्तक में आपको सर्वप्रथम मानचित्र बनाने की कला और मानचित्र के प्रमुख लक्षणों से परिचय कराया गया है। मानचित्र बनाने में मापनी का महत्वपूर्ण स्थान है और इसकी जानकारी आपको मानचित्र के अनुभाग तथा उस पर दिखाए विभिन्न ब्यौरों के बीच संबंध को अच्छी तरह समझने में मदद देती है। इसके अतिरिक्त हम मापनी के ज्ञान द्वारा मानचित्र पर विभिन्न स्थानों के बीच वास्तविक दूरी तथा वनीय या जलीय अथवा कृष्य भूमि के क्षेत्रफल और अन्य प्रकार का मापन कर सकते हैं। ये सभी बातें वैज्ञानिक भूगोल के लिए अति आवश्यक हैं।

मानचित्र बनाने की कला सर्वेक्षण के समुचित ज्ञान पर आधारित है। आप भूगोल के अध्ययन में विभिन्न प्रकार के मानचित्रों का प्रयोग करेंगे। ये नगर या ग्राम के बहुत बड़ी मापनी पर बने मानचित्रों से लेकर भारतीय सर्वेक्षण विभाग के कई मापनियों पर बने स्थलाकृतिक मानचित्र तक हो सकते हैं। अतः सर्वेक्षण-विधियों की मौलिक जानकारी से प्रत्येक प्रकार के मानचित्र की विशेषताओं को समझना और भी आसान हो जाता है, यद्यपि इस प्रकार के सर्वेक्षण में आप मूल मानचित्र बनाने की भाँति कोई व्यापक सर्वेक्षण नहीं करते। फिर भी क्षेत्रीय कार्य में आपको कुछ-न-कुछ मूल मानचित्रण अवश्य ही करना होता है, क्योंकि बड़ी मापनी पर बने मानचित्र प्रायः उपलब्ध नहीं होते जिन पर आप क्षेत्र के विभिन्न लक्षणों को देखने के साथ अंकित कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त मानचित्र प्रक्षेप का ज्ञान भी बहुत आवश्यक है, क्योंकि इसकी मदद से ही आप एटलस, पाठ्यपुस्तक और समाचारपत्रों में प्रयुक्त विभिन्न प्रकार के मानचित्रों के गुण और दोषों को जान सकते हैं। मानचित्रण कार्य के अनुसार उचित प्रक्षेप का प्रयोग न किया जाय तो मान-चित्र पर प्रदर्शित वितरण-प्रतिरूप भी विकृत होंगे।

उपर्युक्त आरेखों और मानचित्रण-विधियों की मदद से विभिन्न वितरण-प्रतिरूपों का अध्ययन करना भी प्रयोगात्मक भूगोल का अभिन्न अंग है। इस कार्य के लिए आपको सांख्यिकीय आँकड़ों और आधारी मानचित्रों की आवश्यकता पड़ती है। मानचित्रों की व्याख्या करने के लिए विशेष प्रकार की कुशलता चाहिए। उदाहरणार्थ आपको मानचित्रकला में प्रयुक्त विभिन्न प्रकार के चिह्नों और प्रतीकों का बहुत ही अच्छा ज्ञान होना चाहिए। स्थलाकृतिक मानचित्र और मौसम मानचित्रों की व्याख्या पर इस पाठ्यपुस्तक में आपको पर्याप्त सामग्री मिलेगी।

भौगोलिक अध्ययन में क्षेत्रीय कार्य का महत्वपूर्ण स्थान है। इसके अंतर्गत कुछ विशिष्ट परियोजनाओं की अभिकल्पना, उनके उद्देश्यों का स्पष्ट रूप से वर्णन, आधारी मानचित्रों का निर्माण, आँकड़ों के इकट्ठा और संकलन करने के लिए परिपत्रों का बनाना और स्थानीय पूछ-ताछ के लिए प्रश्नावली तैयार करना आदि बातें सम्मिलित हैं। इस पुस्तक में आपके द्वारा क्षेत्रीय कार्य करने के लिए पाँच योजनाओं की रूपरेखा दी गई है। आपसे आशा की जाती है कि इनमें से कम-से-कम एक परियोजना पर आप क्षेत्रीय अध्ययन अवश्य करेंगे। परि-योजना का चयन इस बात पर निर्भर करेगा कि आपका विद्यालय कहाँ स्थित है अर्थात् वह ग्रामीण क्षेत्र में है अथवा औद्योगिक केन्द्र में या व्यापारिक नगर में, आदि।

जैसाकि शुरू में बताया गया है कि भौगोलिक अध्ययन का कार्य सांख्यिकीय आँकड़ों और विश्लेषण की पद्धतियों से अधिक प्रभावी होता है। इस उद्देश्य को पूरा करने के लिए पुस्तक में सामान्य सांख्यिकीय विधियों और भौगोलिक समस्याओं के निराकरण हेतु उनके उपयोग पर पर्याप्त प्रकाश डाला गया है।

अध्याय 2

मानचित्र बनाना

मापनी : उनका उपयोग तथा रचना

मानचित्र पृथ्वी की सतह के किसी भाग का एक रूढ़ निरूपण अथवा प्रतिरूप है। हम जानते ही हैं कि भौगोलिक अध्ययन में मानचित्र का कितना अधिक महत्व है। हम इस बारे में चर्चा पहले कर चुके हैं। अब यहाँ हम उन सभी विषयों पर विचार करेंगे जो मानचित्र बनाने में महत्वपूर्ण योगदान देते हैं। सर्वप्रथम हम उन लक्षणों को लेंगे जो सभी मानचित्रों में सामान्यतः पाए जाते हैं। इनमें से मापनी का सबसे अधिक महत्व है। पृथ्वी का चित्र अथवा उसका प्रतिरूप बिना उसे छोटा किए बनाना असम्भव है। अतः हमें किसी मानचित्र पर विचार करते समय देखना चाहिए कि उसका पैमाना कैसा है, उदाहरणार्थ, भूमि के किसी एक छोटे टुकड़े पर नया मकान बनाने के लिए तैयार किया नक्शा अपेक्षाकृत बड़ी मापनी पर होता है, एक नगर, तहसील या कस्बा का मानचित्र मध्यम मापनी पर बनाया जाता है और कक्षा में प्रयोग किए जाने वाले दीवारी मानचित्रों और एटलस के मानचित्रों की मापनी बहुत छोटी होती है। जब हम कहते हैं कि किसी मानचित्र का पैमाना एक सेंटीमीटर एक किलोमीटर को निरूपित करता है तो इसका अर्थ यह है कि मानचित्र पर कहीं भी एक सेंटीमीटर की दूरी जमीन पर एक किलोमीटर की दूरी के अनुरूप होती है। मानचित्र पर मापनी हमेशा रेखीय मापनी के रूप में व्यक्त की जाती है। मानचित्रों का विभाजन बड़ी मापनी और छोटी मापनी में किया जाता है। बड़ी मापनी पर बने मानचित्रों में उनके द्वारा निरूपित किए क्षेत्रों के विभिन्न भौगोलिक लक्षणों के बहुत से ब्यौरे दिखाए जाते हैं। बड़ी मापनी पर बने मानचित्रों द्वारा पृथ्वी की सतह के एक बहुत छोटे भाग को ही प्रदर्शित किया जाता है। परंतु छोटी मापनी पर बने मानचित्रों से संपूर्ण पृथ्वी या उसके बहुत बड़े भाग को दिखाया जाता है। छोटी मापनी के मानचित्रों को बहुत बड़े क्षेत्र के मुख्य-मुख्य लक्षणों को दिखाने के लिए बनाया जाता है। इस प्रकार छोटी मापनी के मानचित्रों में जानकारी कम आ पाती है, अतः इसमें चुनी हुई सूचनाएँ ही दी जाती हैं। किसी मानचित्र के लिए उचित मापनी का चयन मानचित्र के उद्देश्य पर निर्भर करता है। इसके अतिरिक्त मानचित्र पर दिखाए जाने वाले ब्यौरे, प्रदर्शित किए जाने वाले भूभाग का क्षेत्रफल और कागज की लम्बाई तथा चौड़ाई जिस पर मानचित्र बनाना है, आदि ऐसे कारक हैं जो मापनी के चयन को प्रभावित करते हैं।

मानचित्र पर मापनी का निरूपण

मानचित्र पर मापनी को व्यक्त करने की तीन प्रमुख विधियाँ हैं : 1. मापनी कथन द्वारा, 2. संख्यात्मक भिन्न द्वारा, 3. ग्राफीय काट द्वारा।

1. मापनी कथन द्वारा : इस विधि में मापनी को शब्दों द्वारा व्यक्त किया जाता है, जैसे—*एक सेंटीमीटर बराबर एक किलोमीटर* या *एक इंच बराबर एक मील* आदि। इसका अर्थ यह हुआ कि मानचित्र पर एक सेंटीमीटर भूमि पर के एक किलोमीटर को व्यक्त करता है या मानचित्र पर की एक इंच दूरी जमीन पर एक मील दूरी को निरूपित करती है। इस विधि में दो कमियाँ हैं। पहला, इस विधि को केवल वही व्यक्ति समझ सकते हैं जो माप की इकाइयों

से परिचित हैं। दूसरा, जब किसी मानचित्र को बढ़ाया या छोटा किया जाता है तो उसकी मापनी बदल जाती है। इसके अलावा इस विधि का प्रयोग करने पर फुटे का इस्तेमाल और गुणाभाग भी करना होता है।

2. **संख्यात्मक भिन्न द्वारा :** इस मापनी को *प्रतिनिधि भिन्न* या *निरूपक भिन्न* (नि० भि०) भी कहते हैं और साधारणतया यह सूक्ष्म रूप से 'आर० एफ०' के नाम से पुकारी जाती है। इसमें मानचित्र पर की दूरी तथा भूमि पर की संगत दूरी का अनुपात भिन्न द्वारा प्रदर्शित किया जाता है। अंश मानचित्र की दूरी को व्यक्त करता है और हर द्वारा भूमि की दूरी का बोध होता है।

इस प्रकार निरूपक भिन्न (आर० एफ०) $=\frac{\text{मानचित्र पर की दूरी}}{\text{भूमि पर की दूरी}}$। इसमें अंश सदैव इकाई या एक रहता है।

निरूपक भिन्न को दो तरह से लिख सकते हैं जैसे $\frac{1}{50000}$ अथवा 1 : 50000 इसका अर्थ यह है कि मानचित्र पर एक इकाई भूमि पर उन्हीं 50000 इकाइयों को निरूपित करती है। यह इकाई सेंटीमीटर अथवा इंच या कोई अन्य इकाई हो सकती है। निरूपक भिन्न का प्रयोग करते समय यह अवश्य ध्यान में रखना चाहिए कि अंश और हर के मापने की इकाई एक ही हो। अतः इस विधि में मापनी का प्रदर्शन माप की किसी भी इकाई द्वारा नहीं किया जाता। इसे किसी भी माप की इकाई में परिवर्तित कर सकते हैं। अतः मानचित्र बनाने और पढ़ने में निरूपक भिन्न का सर्वत्र उपयोग होता है। अर्थात् इसे किसी भी देश में वहाँ की सामान्य स्वीकृत इकाई के रूप में प्रयोग कर सकते हैं। इसमें भी मापनी कथन की भाँति यह कमी है कि मानचित्र को बड़ा या छोटा करने पर निरूपक भिन्न बदल जाती है।

निरूपक भिन्न पर कुछ उदाहरण :

1. निरूपक भिन्न निकालिए जब कि मानचित्र की मापनी पाँच सेंटीमीटर एक किलोमीटर के बराबर है।
   मानचित्र का 5 सेंटीमीटर भूमि के 1 किलोमीटर या 100,000 सेंटीमीटर के बराबर है।
   निरूपक भिन्न में अंश अर्थात् मानचित्र की दूरी सदैव एक होती है।

$$\therefore \text{निरूपक भिन्न} = \frac{\text{मानचित्र पर की दूरी}}{\text{भूमि पर की दूरी}}$$

$$= \frac{5}{100,000}$$

$$= \frac{1}{20,000} \text{ या } 1 : 20,000$$

2. मानचित्र का पैमाना एक इंच बराबर दो मील है। निरूपक भिन्न मालूम करिए।

मानचित्र की मापनी है : 1 इंच = 2 मील अर्थात् मानचित्र पर का 1 इंच = भूमि पर के 2 मील के।

चूंकि निरूपक भिन्न में अनुपात की दोनों इकाइयाँ समान होती हैं, इसलिए 2 मील को इंचों में बदलना आवश्यक है।

1 मील = 63,360 इंच

2 मील = 63,360 × 2 = 126,720 इंच

अर्थात् मानचित्र का 1 इंच निरूपित करता है भूमि के 126,720 इंच को।

अब निरूपक भिन्न सदैव भिन्न के रूप में व्यक्त की जाती है और इसका अंश सदैव 1 होता है।

$$\therefore \text{निरूपक भिन्न} = \frac{\text{मानचित्र पर की दूरी}}{\text{भूमि पर की दूरी}}$$

$$= \frac{1}{126,720} \text{ या } 1 : 126,720$$

3. एक भारतीय मानचित्र का पैमाना है 1 सेंटीमीटर = 10 किलोमीटर। इसे ब्रिटिश प्रथा की माप इकाई में परिवर्तित कीजिए।

भारतीय मानचित्र की मापनी है : 1 सेंटीमीटर = 10 किलोमीटर अर्थात् मानचित्र का 1 सेंटीमीटर भूमि पर के 10 किलोमीटर या 10 × 100,000 सेंटीमीटर का निरूपक है।

$$\therefore \text{निरूपक भिन्न } \frac{1}{1,00,00,00} \text{ या } 1 : 10,00,000$$

इस निरूपक भिन्न को ब्रिटिश प्रथा की माप इकाई में बदलने का अर्थ है कि मानचित्र का 1 इंच = भूमि पर के 10,00,000 इंच के

∵ 1 मील = 63,360 इंच

∴ मानचित्र का 1 इंच निरूपक है भूमि पर $\frac{10,00,000}{63,360}$ मील के = 15·78 मील

अत: ब्रिटिश माप के अनुसार मानचित्र की अपनी 1 इंच=15·78 मील या 1 इंच=15·8 मील या 1 इंच=16 मील (लगभग)

3. ग्राफीय काट द्वारा :—इसे सीधी मापनी या रेखीय मापनी भी कहते हैं। यह मापनी एक सरल रेखा होती है जिसे विभागों तथा उप-विभागों में इस प्रकार विभक्त किया जाता है कि उसमें मानचित्र पर की दूरी प्रत्यक्ष रूप में नापी जा सकती है और भूमि पर उसकी अनुपातिक दूरी पढ़ी जा सकती है। इस मापनी की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि मानचित्र के फोटोग्राफी द्वारा बड़ा या छोटा करने पर भी यह बिल्कुल सही रहती है। इस विधि का दोष, कथन मापनी की भाँति, यह है कि यह उन्हीं लोगों के लिए लाभदायक सिद्ध हो सकती है जो मापनी में प्रयुक्त माप की इकाई से परिचित हों। अत: हर मानचित्र पर प्राय: निरूपक भिन्न और रेखीय मापनी अवश्य दिए होते हैं। कभी-कभी रेखीय मापनी पर माप की दोनों इकाइयाँ, ब्रिटिश पद्धति अर्थात् मील और मेट्रिक पद्धति अर्थात् किलोमीटर दी होती हैं।

रेखीय मापनी बनाते समय रेखा की लम्बाई इतनी बड़ी होनी चाहिए कि मानचित्र की दूरी उससे सुगमता से पढ़ी जा सके। यह प्राय: 12 से 20 सेंटीमीटर या 5 से से 9 इंच लम्बी बनाई जाती है। यह किलोमीटर या मील की इकाइयों के सुगम पूर्णांकों को निरूपित करती है। इसमें विभागों का मान प्राय: 10 के गुणक के रूप में रखा जाता है जिससे उसके उप-विभाग भी पूर्णांकों में आसानी से हो सकें। सुगमता के लिए प्रधान भाग शून्य के दाहिनी ओर बनाए जाते हैं और द्वितीयक भाग जो एक प्रधान भाग के उप-विभाग होते हैं, उन्हें शून्य के बाईं ओर बनाया जाता है।

उदाहरण :—एक मानचित्र का निरूपक भिन्न 1/63360 है। इसके लिए एक रेखीय मापनी बनाइए जिसमें प्रधान एवं द्वितीयक भाग दिखाए हों और जिससे 2 किलोमीटर की दूरी पढ़ी जा सके। निरूपक भिन्न= $\frac{1}{63,360}$ अर्थात् मानचित्र की एक इकाई भूमि की 63,360 इकाइयों को निरूपित करती है।

∴ मानचित्र का 1 सेंटीमीटर=63,360 सेंटीमीटर

अर्थात $\frac{63,360}{100,000}=6·336$ किलोमीटर भूमि पर।

अत: मानचित्र की मापनी कथन 1 सेंटीमीटर= 6·336 किलोमीटर

ऊपर बतलाया जा चुका है कि रेखीय मापनी रेखा की सुगम लम्बाई साधारणतया 12 और 20 सेंटीमीटर के बीच होनी चाहिए। मान लीजिए कि मापनी की लम्बाई 12 सेंटीमीटर है, तो यह $12\times6·336=76·032$ किलोमीटर को निरूपित करेगी।

यह एक विषम संख्या है और मापनी बनाने के लिए सुविधाजनक नहीं है। अत: 76·032 के निकटतम पूर्णांक 80 है।

अब 80 किलोमीटर को प्रदर्शित करने वाली रेखीय मापनी बनाने के लिए हमें मालूम करना होगा कि रेखा की ठीक लम्बाई कितनी हो।

6·336 किलोमीटर निरूपक है 1 सेंटीमीटर के।

80 किलोमीटर का निरूपक होगा= $\frac{1\times80}{6·336}=12·56$

अर्थात् 12·6 सेंटीमीटर (निकटतम)

रेखीय मापनी की रचना

एक सीधी रेखा A B 12·6 सेंटीमीटर लम्बी खींचिए। A से एक दूसरी रेखा A C न्यून कोण B A C बनाती हुई खींचिए। A C पर विभाजनी की सहायता से बारह बराबर भाग (a, b, c, d, e, f, g,…l) बनाइए। अंतिम बिन्दु l को B से मिलाइए। अन्य बिन्दुओं (a, b, c, d, e, f, l) lB के समानान्तर रेखाएँ A B को मिलाती हुई खींचिए। ये समानान्तर रेखाएँ A B को 12 बराबर भागों में विभक्त करेंगी और इनमें से प्रत्येक 10

चित्र—1 रेखीय मापनी
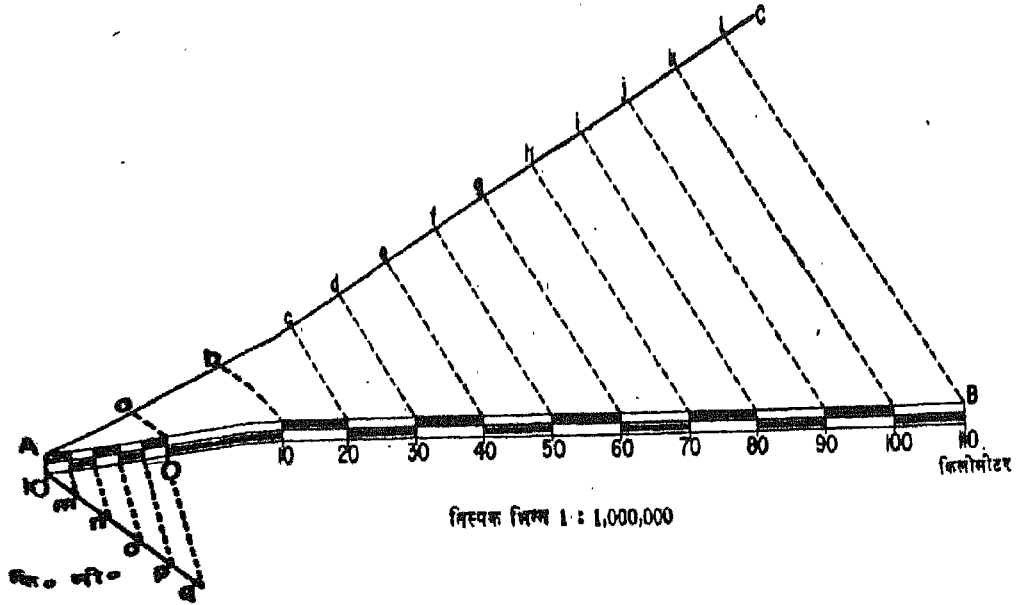
चित्र—2 रेखीय मापनी की रचना

मीटर को निरूपित करेगा। ये सभी *प्रधान भाग*

द्वितीयक भाग बनाने के लिए सबसे बाएँ के प्रधान को पाँच बराबर भागों में बाँटिए जैसा कि चित्र दिखाया गया है। इन द्वितीयक भागों में से प्रत्येक 2 किलोमीटर को प्रकट करेगा।

मापनी पर संख्या अंकित करते समय सबसे बाएँ के प्रधान भाग को छोड़कर शून्य लिखना चाहिए जिससे के बाईं ओर के किनारे पर 10 संख्या और शून्य के नी ओर प्रधान भागों की संख्या क्रमशः 10, 20, 30, 50, 60 तथा 70 लिखनी चाहिए। इस प्रकार संख्या- करने से हम पूर्णांक संख्या और उसके अंश मापनी ढ़ सकते हैं। इससे हमें सभी प्रधान भागों को यक भागों में बाँटने की आवश्यकता नहीं पड़ती।

र्ण मापनी

प्रधान भाग और द्वितीयक भाग के अतिरिक्त विकर्ण ो में एक द्वितीयक भाग से भी छोटे भाग ए जा सकते हैं। इस दृष्टि से विकर्ण मापनी ग्राफीय मापनी का एक विस्तृत एवं अधिक शुद्ध रूप है जिससे मानचित्र बनाने में अधिक शुद्धता आ जाती है। चित्र 3 में एक विकर्ण मापनी दिखाई गई है जिससे हम एक सेंटीमीटर के पचासवें भाग तक पढ़ सकते हैं। यदि हम दो सेंटीमीटर के स्थान पर एक सेंटीमीटर लम्बाई की एक रेखा लें तो हम एक सेंटीमीटर के सौवें भाग तक पढ़ सकते हैं।

दो सेंटीमीटर के बराबर एक रेखा A B खींचिए। A B पर A C तथा B D लम्ब डालिए। A C तथा B D पर किसी भी लम्बाई के दस बराबर भाग करिए और A C तथा B D के संगत बिन्दुओं को A B के समानान्तर खींची रेखाओं से मिलाइए। फिर A B तथा C D रेखाओं को दस बराबर भागों में अर्थात् प्रत्येक भाग 0·2 सेंटी- मीटर का काटिए और उन्हें 0, 1, 2··········और 10 की संख्या में दाहिनी से बाईं ओर अंकित कीजिए जैसाकि चित्र 3 में दिखाया गया है। अब A B रेखा के 0 को C D रेखा के 1 से तथा A B रेखा के 1 को C D के 2 से मिलाइए और इसी क्रम से अन्य बिन्दुओं को भी मिलाते जाइए जैसाकि चित्र में दिखाया गया है।
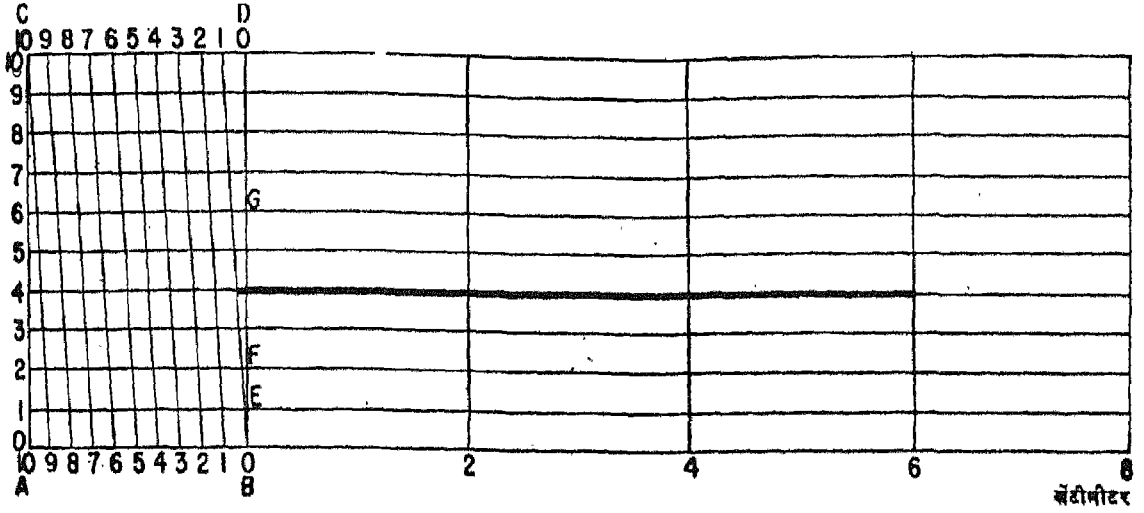
चित्र—3 विकर्ण मापनी की रचना

इस चित्र में A B और C D रेखाओं के प्रत्येक उपविभाग 0·2 सेंटीमीटर के बराबर हैं। अब विकर्ण रेखा 0 1 के दाहिनी ओर के छोटे-छोटे भागों पर ध्यान दीजिए। A B रेखा से एक भाग ऊपर जाने पर कर्णवत् रेखा 0 1 और E के बीच की दूरी 0·02 सेंटीमीटर के बराबर है। A B रेखा से दो भाग ऊपर F बिन्दु पर यह दूरी 0·04 सेंटीमीटर है और A B रेखा से 6 भाग ऊपर G बिन्दु पर यह दूरी 0·12 सेंटीमीटर आदि है।

यदि हमें 6·08 सेंटीमीटर की दूरी चित्र 3 में बनी विकर्ण मापनी पर मालूम करनी है तो छः सेंटीमीटर की रेखा में A B रेखा से ऊपर B D रेखा के चौथे स्थान और कर्णवत् रेखा 0 1 के बीच की दूरी जोड़ देनी होगी।

यदि आप इस मापनी पर 3·08 सेंटीमीटर की दूरी नापना चाहते हैं तो आप तीन सेंटीमीटर की रेखा में A B रेखा से चार भाग ऊपर विकर्ण रेखा 0 1 के दाहिनी ओर के छोटे से भाग की दूरी जोड़ दीजिए।

छोटी रेखा को कितने ही भागों में बाँटने का यह बड़ा ही अच्छा तरीका है। परन्तु यह हमेशा ध्यान रखने की जरूरत है कि सभी समानान्तर, लम्ब और विकर्ण रेखाएँ ठीक प्रकार से खींची होनी चाहिए।

किसी क्षेत्र का क्षेत्रफल ज्ञात करना

मानचित्र का विस्तृत अध्ययन करने के लिए उस पर दिखाए गए लक्षणों का क्षेत्रफल ज्ञात करना भी कभी-कभी आवश्यक एवं उपयोगी होता है। जिस भूखंड के किनारे सीधे व एक समान होते हैं उसका क्षेत्रफल गणितीय ढंग से ज्ञात किया जा सकता है। परन्तु टेढ़े-मेढ़े क्षेत्र का गणितीय ढंग से क्षेत्रफल निकालने में काफी परिश्रम करना पड़ता है। ऐसे क्षेत्र का क्षेत्रफल ज्ञात करने का सबसे सरल तरीका वर्गविधि होती है। परन्तु इससे जो क्षेत्रफल निकलता है वह बिल्कुल शुद्ध नहीं होता। इस विधि में मानचित्र के उस क्षेत्र को ट्रेसिंग कागज पर उतार लिया जाता है। फिर उस कागज पर उतारी गई आकृति में कई पूर्ण वर्ग बनाए जाते हैं। यदि ट्रेसिंग कागज पर ग्राफ बना हो तो इस कार्य में और भी आसानी होती है अन्यथा मानचित्र को प्रकाशित ट्रेसिंग टेबुल पर रखकर और उसके ऊपर ग्राफ पेपर लगाकर वर्ग बनाए जाते हैं जैसा चित्र 4 में दिखाया गया है।

अब क्षेत्रफल ज्ञात करने के लिए सर्वप्रथम बड़े-बड़े पूर्ण वर्गों की संख्या गिन ली जाती है। फिर उन सभी छोटे-छोटे पूर्ण वर्गों को गिना जाता है जो क्षेत्र की सीमा
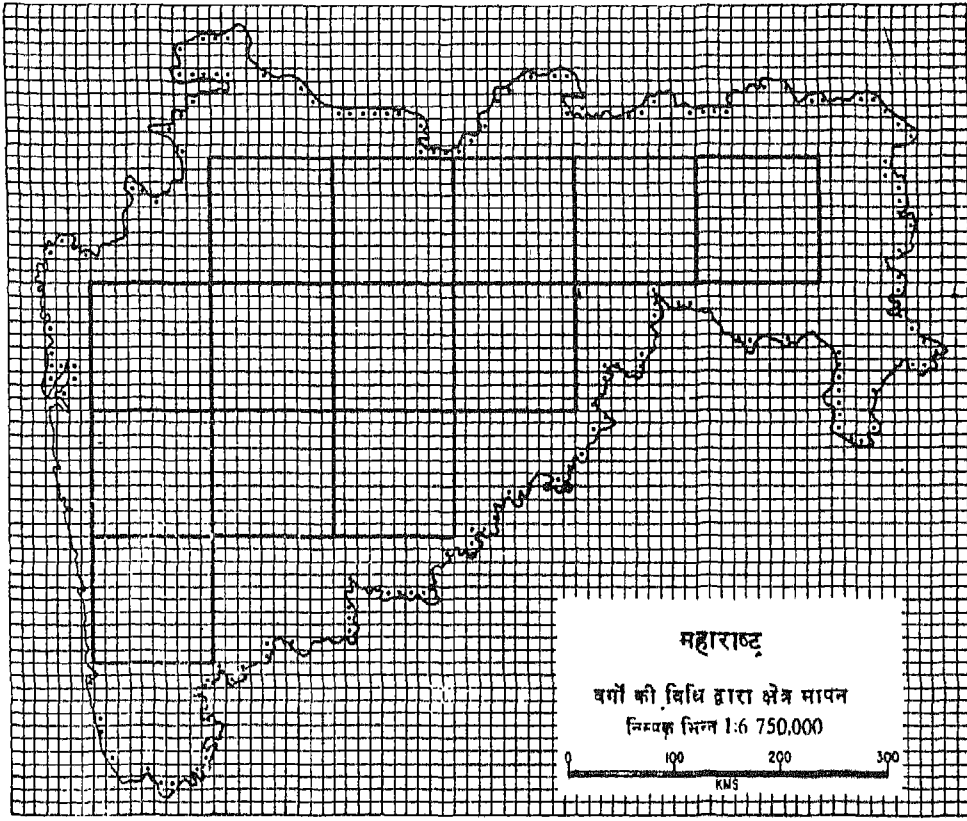
चित्र—4 वर्गविधि द्वारा क्षेत्र मापन

के भीतर पड़ते हैं। सीमा के भीतर पड़ने वाले जो वर्ग अपूर्ण हैं, उनमें से जिन वर्गों का भाग आधा या आधे से अधिक है उन्हें पूर्ण वर्ग मानकर गिन लिया जाता है और जो वर्ग आधे से कम हैं उन्हें छोड़ दिया जाता है।

मानचित्र को बड़ा या छोटा करना

किसी क्षेत्र के मानचित्र की कभी अलग-अलग आकारों (चित्र 5) में आवश्यकता पड़ती है, जैसे नगर आयोजन के लिए नगर का बड़ी मापनी पर मानचित्र चाहिए, पर्यटन कार्यों के लिए मध्यम मापनी पर और पाठ्यपुस्तकों के लिए छोटी मापनी पर उसका मानचित्र बनाना होता है। इसका अर्थ यह हुआ है कि मानचित्र के बड़ा या छोटा करने पर उसकी मूल मापनी भी बदल जाएगी। मानचित्र को चाहे बड़ा करना हो अथवा छोटा, यह कार्य सीधे पेंटोग्राफ और ईडोग्राफ जैसे यंत्रों से बड़ी आसानी से किया जा सकता है। फोटोग्राफी द्वारा मानचित्रों को बहुत जल्दी बड़े या छोटे रूप में बनाया जा सकता है और इस विधि से जो मानचित्र बनते हैं वे सबसे शुद्ध होते हैं।

मानचित्रों को बड़ा या छोटा करने का सबसे आसान तरीका ग्राफीय विधि कहलाती है। इस विधि में मूल मानचित्र पर सुविधाजनक आकार का एक वर्गजाल बना लिया जाता है। अब दूसरे कागज पर उतने ही वर्गों का इच्छित मापनी के अनुसार बड़ा या छोटा वर्गजाल बनाया जाता है। इस नए वर्गजाल में मूल मानचित्र के सभी लक्षण बड़ी सावधानी से मुक्त हस्त द्वारा उतार लिए जाते हैं। इस कार्य में ग्रिड के कटान बिन्दुओं पर पड़ने वाले प्रमुख लक्षणों पर विशेष रूप से ध्यान रखा जाता है और मूल मानचित्र के वर्गजाल के प्रत्येक वर्ग के लक्षणों को नवीन वर्गजाल के संगत वर्गों में बड़ी होशियारी से उतारा जाता है। इस प्रकार मानचित्र बड़ा या छोटा बना लिया जाता है और मानचित्र की मापनी दोनों कागजों पर बने वर्गों की भुजाओं का फुटे से नाप कर निकाल ली जाती है।
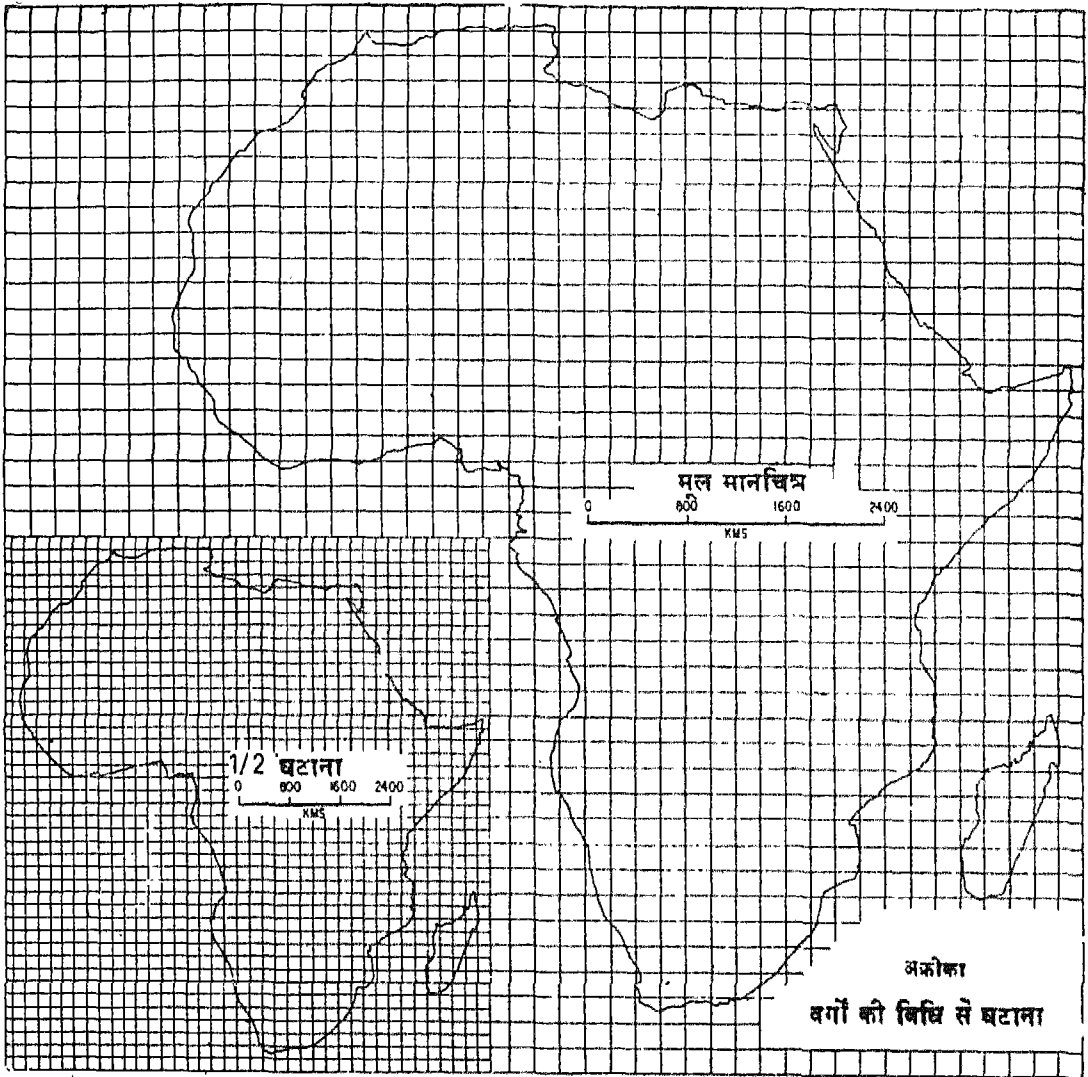
चित्र—5 वर्गों की विधि से घटाना

मान लीजिए कि आप एक मानचित्र इसके मूल आकार से दो-तिहाई छोटा बनाना चाहते हैं, तो मूल मानचित्र पर एक ऐसा वर्गजाल बनाइए जिसके प्रत्येक वर्ग की भुजा 1.5 सेंटीमीटर हो और उस वर्गजाल से मानचित्र पूरा-पूरा ढक जाए। किसी दूसरे कागज पर ऐसा ही वर्ग-जाल बनाइए, परन्तु इसमें प्रत्येक वर्ग की भुजा मूल वर्ग की भुजा की दो-तिहाई छोटी होनी चाहिए अर्थात् नए वर्ग की भुजा एक सेंटीमीटर होगी। अब इस नए वर्गजाल में, जो मूल वर्गजाल के आकार का दो-तिहाई है, वर्गानुसार सभी प्राकृतिक और सांस्कृतिक लक्षणों को ज्यों-का-त्यों उतार लीजिए। प्रमुख लक्षणों को पहले हल्के रूप में उतार लिया जाता है और फिर उसमें गौण बातें भर ली जाती हैं। जो स्थान ग्रिड के जितने ही निकट होगा उसकी स्थिति उतनी ही शुद्ध होगी।

इस विधि से सबसे महत्वपूर्ण बात यह जानने की है कि मापनी के वर्ग की भुजा की लम्बाई कितनी रखी जाए।

इसे जानने के लिए निम्नलिखित सूत्र का प्रयोग किया जाता है :

नए वर्ग की भुजा का अनुपात अर्थात् $य = \frac{\text{नई मापनी}}{\text{पुरानी मापनी}}$

उदाहरण

एक मानचित्र जिसे छोटा करना है उसका निरूपक भिन्न $\frac{1}{50,000}$ है और नया मानचित्र जो छोटा किया गया है उसका निरूपक भिन्न $\frac{1}{250,000}$ है

पुरानी मापनी है $= \frac{1}{50,000}$

$$\therefore य = \frac{\text{नई मापनी}}{\text{पुरानी मापनी}}$$

$$= \frac{\frac{1}{250,000}}{\frac{1}{50,000}}$$

$$= \frac{1}{250,000} \times \frac{50,000}{1}$$

$$= \frac{1}{5}$$

अत: नया मानचित्र मूल मानचित्र का पाँचवाँ भाग है अर्थात् 1/5 छोटा किया गया है।

अभ्यास

1. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लिखिए :
   1. मानचित्र क्या है ? इसे भूगोल का मुख्य साधन क्यों माना जाता है ?
   2. मापनी क्या है ? मानचित्र पर इसका क्या उपयोग है ?
   3. मापनी के चयन में किन-किन बातों का ध्यान रखना चाहिए ?
2. निम्नांकित पर टिप्पणियाँ लिखिए :
   1. निरूपक भिन्न
   2. विकर्ण मापनी
   3. मानचित्र पर मापनी को किन तीन विधियों से दिखाया जाता है ?
   4. अन्य स्तम्भों में दी गई संख्याओं को ध्यान में रखते हुए खाली स्थानों को ठीक-ठीक भरिए :

वास्तविक दूरी	मानचित्र की दूरी	निरूपक भिन्न
1. 4 किलोमीटर	4 सेंटीमीटर	....
2. 1 मील	....	1/63,360
3.	6 सेंटीमीटर	1/50,000

5. नीचे दिए दोनों स्तम्भों में से सही जोड़े बनाइए :

दिखाई जाने वाली दूरी	प्रयोग की जाने वाली मापनी
....	....
1. 80 किलोमीटर	1. रैखीय मापनी जिसमें मुख्य तथा गौण विभाग दिए गए हों।
2. 3 मील 6 फलाँग	2. विकर्ण मापनी
3. 6.56 सेंटीमीटर	3. साधारण रेखीय मापनी

6. निम्नलिखित कथन को सही विकल्प से पूरा करिए :

निरूपक भिन्न सार्वभौमिक प्रयोग की सुविधाजनक मापनी है, क्योंकि—

1. इसमें रेखीय या ग्राफिक मापनी की आवश्यकता नहीं पड़ती है।
2. मानचित्र के बड़ा या छोटा होने पर भी यह शुद्ध रहती है।
3. इसमें किसी विशेष माप की इकाई का प्रयोग नहीं होता।
4. इसकी मदद से मानचित्र पर दूरी सीधे मापी जा सकती है।

7. एक इंच, आधा इंच और चौथाई इंच मापनी वाले स्थलाकृतिक मानचित्रों के अलग-अलग निरूपक भिन्न निकालिए। और प्रत्येक मानचित्र का मापनी कथन मेट्रिक प्रणाली में अर्थात् एक सेंटीमीटर कितने किलोमीटर को निरूपित करता है बताइए।

8. आंध्र प्रदेश के एक रेखामानचित्र से :
   1. वर्ग विधि द्वारा आंध्र प्रदेश का क्षेत्रफल निकालिए।
   2. मानचित्र को उसकी दुगनी मापनी में बड़ा करिए।
   3. मानचित्र को उसकी आधी मापनी में छोटा करिए।
   4. प्रत्येक मानचित्र के लिए रेखीय मापनी बनाइए जिसमें उपयुक्त प्रधान और द्वतीयक भागों द्वारा किलोमीटर दिखाए गए हों।

मानचित्र प्रक्षेप

पृथ्वी का निरूपण करने वाले अब तक के सभी साधनों में ग्लोब सर्वश्रेष्ठ है। परन्तु ग्लोब का इधर-उधर ले जाना आसान न होने के कारण मानचित्र अपेक्षाकृत अधिक पसन्द किए जाते हैं। मानचित्रों को बड़ी आसानी से पुस्तकों में लगाया जा सकता है या उनको एकत्र करके एटलस बनाई जा सकती है और इस प्रकार उन्हें उठाकर लाने या ले जाने में ग्लोब की भाँति कोई कठिनाई नहीं होती। मानचित्र किसी भी मापनी पर बनाया जा सकता है और यह सम्पूर्ण पृथ्वी एवं उसके किसी भी छोटे या बड़े खंड को निरूपित कर सकता है। मानचित्र में पृथ्वी-सतह के अधिक से अधिक ब्यौरों को दिखाया जा सकता है जिन्हें साधारणतया ग्लोब पर दिखाना सम्भव नहीं होता।

पृथ्वी के वास्तविक और यथार्थ निरूपण के लिए ग्लोब सबसे अच्छा साधन है, क्योंकि पृथ्वी की भाँति ग्लोब भी त्रिविम होता है। इसके विपरीत मानचित्र द्विविम साधन है, जो पृथ्वी के उन धरातलीय लक्षणों को प्रकट करने का प्रयास करता है जिन्हें गोलाकार पृथ्वी की सतह से उतार कर मानो एक कल्पित समतल पर फैलाया गया हो। यहाँ यह बात हमेशा स्मरण रखनी चाहिए कि इस प्रकार के वक्रपृष्ठ को किसी समतल सतह पर सुगमता से फैलाना बिल्कुल असम्भव है, यदि ऐसे वक्रपृष्ठ को फैलाकर अधिक समतल किया भी जाय तो भूसतह पर उपस्थित लक्षणों का परस्पर भौगोलिक सम्बन्ध अवश्य ही विकृत हो जाएगा।

महत्वपूर्ण भौगोलिक सम्बन्ध ये हैं : 1. भूखंडों, महासागरों और राजनीतिक इकाइयों की आकृतियाँ, 2. उनके क्षेत्रफल, 3. स्थानों के बीच दूरियाँ, 4. प्रत्येक स्थान की अन्य स्थान के संदर्भ में दिशाएँ और 5. विभिन्न स्थानों या क्षेत्रों की सम्पूर्ण पृथ्वी के सम्बन्ध में स्थितियाँ।

अविकासनीय भूपृष्ठ (चपटी न होने योग्य पृथ्वी की सतह)

विकासनीय पृष्ठ वह सतह है जिसे खोलकर चपटे समतल के रूप में फैलाया जा सकता है अथवा वह एक ऐसी सतह है जिस पर कागज मढ़ने पर उसमें मोड़ या सिलवटें नहीं पड़तीं। इस प्रकार के विकासनीय पृष्ठ केवल तीन हैं—बेलन, शंकु और समतल।

गोलक या गोले की सतह अविकासनीय होती है। इसलिए गोलक पर उपस्थित लक्षणों को किसी समतल या कागज पर यथार्थ रूप में उतारना बिल्कुल असम्भव है। इस कार्य के लिए चाहे कोई भी विधि अपनाई जाए उसमें कोई-न-कोई त्रुटि अवश्य होगी। पृथ्वी भी एक गोला है, इसलिए इसका पृष्ठ अविकासनीय कहा जाता है।

अतः मानचित्रों की प्रवृत्ति और मौलिक कमियों के कारण पृथ्वी के किसी भी मानचित्र के लिए स्थल-खंडों और जलाशयों के शुद्ध रूप को प्रकट कर सकना असंभव है। इसके अतिरिक्त क्षेत्रफल, स्थिति और दिशा की दृष्टि से भी यह यथार्थ नहीं हो सकता और न सम्पूर्ण पृथ्वी को लगातार एक सतह पर बिना आकृति के बिगाड़े दिखाया जा सकता है।

इस वास्तविकता को ध्यान में रखते हुए मानचित्रकारों ने, अधिक से अधिक शुद्ध मानचित्र बनाने के लिए अनेक विधियाँ निकाली हैं। इन विधियों द्वारा, गोलीय पृष्ठ से समतल कागज पर भौगोलिक लक्षणों को स्थानान्तरित करते समय, ऊपर लिखे भौगोलिक सम्बन्धों में से एक या एक से अधिक सम्बन्धों को सही और शुद्ध रूप में बनाए रखना सम्भव होता है।

किसी भी लक्षण से सम्बन्धित मूल भौगोलिक तथ्य, पृथ्वी की सतह पर उसकी वास्तविक स्थिति है। पृथ्वी की सतह पर किसी भी बिन्दु की स्थिति अक्षांश और देशान्तर रेखाओं के संदर्भ में ठीक उसी प्रकार निश्चित की जाती है, जिस प्रकार एक ग्राफ पर मूल बिन्दु से किसी बिन्दु की स्थिति x तथा y निर्देशकों की सहायता से की जाती है। इसलिए किसी भी मानचित्र के लिए यह सिद्धान्त आधार है, जिसके अनुसार अक्षांश और देशान्तर रेखाओं को एक गोलाकार पृष्ठ से किसी समतल सतह पर स्थानान्तरित या प्रक्षेपित किया जाता है।

अक्षांश और देशान्तर रेखाओं के जाल को पृथ्वी का *ग्रिड* कहते हैं। इस ग्रिड को पृथ्वी के गोलाकार पृष्ठ से समतल सतह पर स्थानान्तरित करने की विधि को तकनीकी भाषा में *मानचित्र प्रक्षेप* कहते हैं। मानचित्र प्रक्षेप रेखाजाल के प्रत्येक खंड के लक्षणों को गोलाकार पृथ्वी से कागज की समतल सतह पर स्थानान्तरित करने का प्रयास करता है। *रेखाजाल* (ग्रेटिकुल) शब्द किसी भी ऐसे क्षेत्र के लिए अपनाया जाता है, जो किन्हीं दो अक्षांश और देशान्तर रेखाओं से घिरा हो।

कोई भी मानचित्र प्रक्षेप बिल्कुल शुद्ध नहीं होता। अतः मानचित्र प्रक्षेप का चयन हमेशा मानचित्र बनाने के उद्देश्य पर निर्भर करता है। यह बात उस समय और भी सही होती है जब हमें देशों, महाद्वीपों, महासागरों, गोलार्धों अथवा सम्पूर्ण पृथ्वी के धरातल जैसे बड़े-बड़े क्षेत्रों के मानचित्र बनाने के लिए ठीक प्रक्षेप का चयन करना होता है। इस उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए हम कुछ प्रमुख प्रक्षेपों का यहाँ अध्ययन करेंगे।

मानचित्र प्रक्षेपों का वर्गीकरण

क्षेत्रफल अथवा आकृति या दिशा जैसी प्रमुख विशेषताओं को कायम रखने के अनुसार मानचित्र प्रक्षेपों के वर्गीकरण की जानकारी बहुत लाभदायक होती है।

सामान्यत: मानचित्र प्रक्षेपों को चार वर्गों में बाँटा जाता है : (1) समदूरस्थ प्रक्षेप, (2) शुद्ध समक्षेत्र प्रक्षेप, (3) शुद्ध आकृति प्रक्षेप, तथा (4) यथार्थ दिक्‌मान अथवा खमध्य प्रक्षेप।

(1) **समदूरस्थ प्रक्षेप** (समदूरी प्रक्षेप) : गोलक की सभी दूरियों को एक स्थायी मापनी पर समतल पर दिखाना असम्भव है। अत: समदूरस्थ प्रक्षेपों में यथा-संभव मापनी की एकरूपता को बनाए रखने पर विशेष ध्यान दिया जाता है। इन प्रक्षेपों में मानचित्र पर दिखाये क्षेत्र के केन्द्र से सभी दिशाओं में मापनी को शुद्ध बनाए रखते हैं।

2. **शुद्ध समक्षेत्र प्रक्षेप** (समक्षेत्रफल प्रक्षेप) : प्रक्षेपों के इस वर्ग में इस प्रकार का ग्रिड तैयार किया जाता है कि ग्लोब के प्रत्येक रेखाजाल अर्थात् अक्षांश और देशान्तर रेखाओं के जाल के प्रत्येक खाने का क्षेत्रफल मानचित्र के संगत रेखाजाल के क्षेत्रफल के बराबर होता है। इन मानचित्र प्रक्षेपों में क्षेत्रफल की शुद्धता बनाए रखने के लिए समदूरी अथवा समरूप जैसी विशेषताओं को छोड़ना पड़ता है।

3. **शुद्ध आकृति प्रक्षेप** (समरूप प्रक्षेप) : इस वर्ग के सभी प्रक्षेपों में शुद्ध आकृति बनाये रखने का हर संभव प्रयास किया जाता है। इसके लिए एक स्थान से दूसरे स्थान पर मापनी को बदलना पड़ता है। इस प्रक्षेप में अक्षांश रेखाएँ और देशान्तर रेखाएँ एक-दूसरे को समकोण पर काटती हैं और उनकी लम्बाइयों में जो संबन्ध ग्लोब पर होता है वही संबन्ध मानचित्र में भी रखा जाता है। इसमें प्रत्येक स्थान पर अक्षांशीय मापनी और देशान्तरीय मापनी के बीच एक निश्चित अनुपात बनाए रखा जाता है, यदि किसी बिन्दु पर अक्षांशीय मापनी दुगुनी हो गई है तो उसकी देशान्तरीय मापनी भी दुगुनी हो जाती है। परन्तु सभी जगह इन दोनों मापनियों का अनुपात एक समान नहीं होता वरन् बदलता रहता है। यदि यह अनुपात एक बिन्दु पर 2 है तो दूसरे पर 5 और तीसरे पर 1/2 हो सकता है।

4. **यथार्थ दिक्‌मान** (शुद्ध दिशा प्रक्षेप) : इस वर्ग के प्रक्षेपों को खमध्य प्रक्षेप भी कहते हैं। इन प्रक्षेपों में दिशाओं अथवा दिक्‌मान की शुद्धता बनाए रखते हैं।

जिस प्रकार मानचित्र प्रक्षेपों का वर्गीकरण उनके प्रमुख गुणों या विशेषताओं के आधार पर किया जाता है उसी प्रकार उनके बनाने की विधि के आधार पर भी उनका वर्गीकरण किया जा सकता है। मानचित्र प्रक्षेप के चयन में ग्रिड बनाने की सुगमता भी एक महत्त्वपूर्ण कारक है। ग्लोब का रेखाजाल एक समतल पत्र पर अकेली क्रिया द्वारा संतोषपूर्ण ढंग से स्थानान्तरित किया नहीं जा सकता। सामान्यत: पहले उसे विकासनीय सतहों पर स्थानान्तरित करते हैं। अत: ग्लोब के पृष्ठ को समतल सतह पर प्रक्षेपित करने की वास्तविक क्रियाओं के आधार पर प्रक्षेपों के वर्गीकरण की दूसरी पद्धति मिलती है।

पृथ्वी या ग्लोब का ग्रिड तीन प्रकार से प्रक्षिपत किया जाता है— (1) बेलन पर, (2) शंकु पर, तथा (3) समतल पर और ये प्रक्षेप क्रमश: बेलनाकार, शांकव तथा दिगंशीय या खमध्य प्रक्षेपों के नाम से पुकारे जाते हैं।

बेलनाकार प्रक्षेप : इन प्रक्षेपों में यह कल्पना की जाती है कि एक बेलन ग्लोब पर लिपटा है या ग्लोब को किसी विशेष ढंग से काट रहा है। फिर बेलन को जिस पर ग्लोब प्रक्षेपित होता है एक उर्ध्वाधर रेखा, जो आधार से शीर्ष तक होती है, पर काट कर खोल लिया जाता है। और इस प्रकार बेलन एक समकोण चतुर्भुज का रूप ले लेता है।

शांकव प्रक्षेप : इन प्रक्षेपों में यह कल्पना की जाती है कि एक साधारण शंकु ग्लोब पर टिका है अथवा उसे किसी विशेष ढंग से काट रहा है। फिर शंकु को उसके आधार से शीर्ष तक की एक रेखा पर काट कर खोल दिया जाता है तो वह एक वृत्तखंड का रूप ले लेता है।

दिगंशीय प्रक्षेप : इन प्रक्षेपों में यह कल्पना की जाती है कि कोई समतल सतह ग्लोब को किसी विशिष्ट बिन्दु पर स्पर्श कर रहा है।

प्रक्षेपों की रचना

बेलनाकार प्रक्षेप : इन प्रक्षेपों की कल्पना एक ऐसे बेलन पर की जाती है जो ग्लोब को विषुवत वृत्त पर छूता हुआ उसे ढक रहा हो।

सरल बेलनाकार प्रक्षेप : (बेलनाकार समदूरस्थ प्रक्षेप) : इस प्रयोग में यह कल्पना की जाती है कि ट्रेसिंग कागज का एक बेलन ग्लोब पर विषुवत रेखा को छूता हुआ लिपटा है। इस कागज के बेलन पर विषुवत
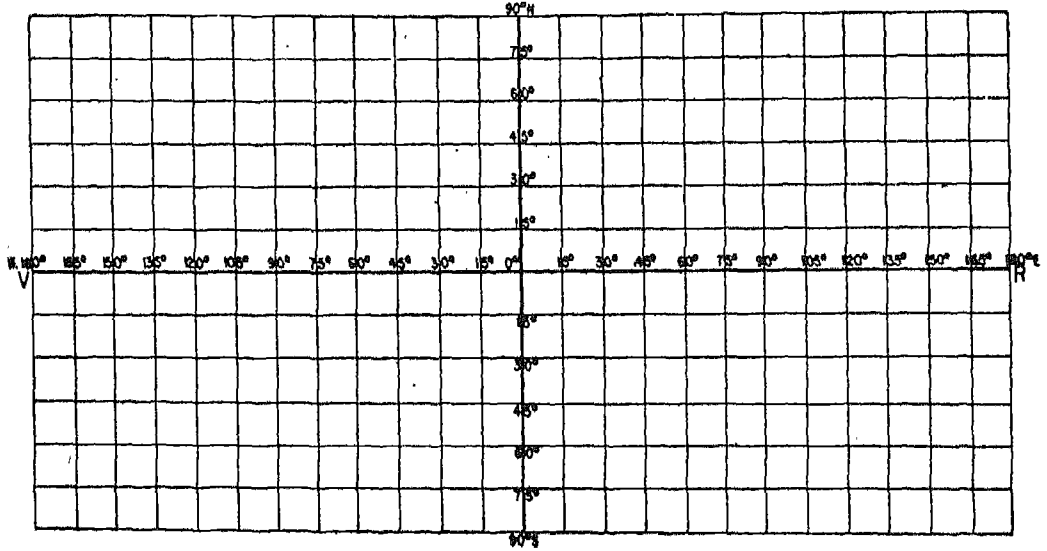
चित्र—6 सरल बेलनाकार प्रक्षेप

रेखा की लम्बाई वही होगी जो ग्लोब पर है। विषुवत वृत्त एवं अन्य अक्षांश रेखाएँ बेलन पर वृत्तों के रूप में प्रक्षेपित होती हैं। यह बेलन बाद में पृथ्वी के अक्ष के समानान्तर किसी सुलभ रेखा पर काट दिया जाता है और एक समतल पत्र के रूप में खोल लिया जाता है। सभी अक्षांश रेखाएँ विषुवत रेखा के समानान्तर एवं समान लम्बाई वाली सरल रेखाओं के रूप में प्रक्षेपित होती हैं।

फिर यदि विषुवत वृत्त पर देशान्तर रेखाओं द्वारा समान दूरी पर काटे गए बिन्दुओं को कागज के बेलन पर पेंसिल से चिह्नित कर उसे खोल दें तो इन बिन्दुओं से खींची गई लंबवत् रेखाएँ देशान्तर रेखाओं को प्रकट करेंगी। इस तरह खींची गई देशान्तर रेखाएँ समानान्तर एवं समान लम्बाई वाली सरल रेखाओं के रूप में प्रक्षेपित होती हैं। इस प्रकार सरल बेलनाकार प्रक्षेप में अक्षांश रेखाओं और देशान्तर रेखाओं के बीच पारस्परिक दूरी सर्वत्र एक समान रहती है और दोनों प्रकार की रेखाएँ सारे ग्रिड पर एक-दूसरे को समकोण पर काटती हैं।

उदाहरण : संसार के मानचित्र के लिए सरल बेलनाकार प्रक्षेप पर एक रेखाजाल बनाइए, जिसमें अक्षांश तथा देशान्तर रेखाएँ 15° के अंतर पर खींची जाएँ और ग्लोब का अर्धव्यास 5 सेंटीमीटर हो। (चित्र 6)

रचना :—ग्लोब का अर्धव्यास या त्रिज्या = 5 सें० मी०।

विषुवत वृत्त पर ग्लोब की परिधि निकालने का सूत्र है : $2\pi \times$ त्रिज्या, जबकि $\pi = \frac{22}{7}$ या 3·1428 और त्रिज्या 5 सें० मी०

ग्लोब पर विषुवत रेखा की लम्बाई $= \pi \times$ त्रिज्या

$$= 2 \times \frac{22}{7} \times 5$$

= 31·43 या लगभग 31·4 से० मी०

विषुवत रेखा को प्रकट करने वाली 31·43 से० मी० लम्बी एक सरल रेखा V R खींचिए। V R रेखा को 24 बराबर भागों में बाँटिए। इन सभी भागों के बिन्दु एक-दूसरे से समान दूरी या 15° के अन्तर पर हैं। इन बिन्दुओं से विषुवत रेखा को लंबवत् काटते हुए सरल रेखाओं के रूप में देशान्तर रेखाएँ खींचिए। माना N S मध्य देशान्तर रेखा है। कोई भी देशान्तर रेखा, चाहे उसका नाम कुछ भी हो, यदि प्रक्षेप के मध्य में स्थित है तो उसे मध्य देशान्तर रेखा या मध्य याम्योत्तर कहते हैं। इसका प्रथम देशान्तर रेखा या प्रधान मध्याह्न रेखा या ग्रीनिच मध्याह्न रेखा से कोई मतलब नहीं है।

15° के अन्तर पर अन्य अक्षांश रेखाएँ बनाने के लिए विषुवत रेखा के विभागों में से एक भाग की दूरी के बराबर N S रेखा पर विषुवत रेखा से उत्तर और दक्षिण में छः-छः भाग काटिए। इन बिन्दुओं से विषुवत रेखा के बराबर और उसके समानान्तर रेखाएँ खींचिए। इस प्रकार सरल बेलनाकार प्रक्षेप का रेखाजाल तैयार हो जाएगा।

एक दूसरी विधि से भी इस प्रक्षेप के मूल परिणाम ज्ञात किए जा सकते हैं। ग्लोब को निरूपित करने के लिए O को केन्द्र मानकर 5 सेंटीमीटर की त्रिज्या का एक वृत्त खींचिए। कल्पना करिए कि E O E′ विषुवतीय व्यास है। चूँकि अक्षांश और देशांतर रेखाओं को 15° के अन्तर पर खींचना है, इसलिए O बिन्दु पर एक 15° का कोण a O E′ बनाइए जिसमें बिन्दु a वृत्त की परिधि पर स्थित हो।

360° देशांतरीय दूरी को प्रकट करने वाले विषुवत रेखा के लिए 31·4 सें० मी० लम्बी एक सरल रेखा खींचिए। 15° का अन्तर प्राप्त करने के लिए इस रेखा को 24 बराबर भागों में बाँटिए। इन बिन्दुओं से जो विषुवत रेखा पर समान अन्तर (15°) पर स्थित है, विषुवत रेखा को लंबवत् काटते हुए सरल रेखाओं के रूप में देशांतर रेखाएँ खींचिए और कल्पना करिए कि N S मध्य देशांतर रेखा का मध्य याम्योत्तर है।

अन्य अक्षांश रेखाओं को बनाने के लिए E′a चाप की लंबाई के बराबर N S रेखा पर विषुवत रेखा के उत्तर और दक्षिण में छः-छः बिन्दु लगाइए और इन बिन्दुओं से विषुवत वृत्त की लंबाई के बराबर और उसके समानान्तर रेखाएँ खींचिए। ये रेखाएँ अक्षांश रेखाओं का निरूपण करेंगी। इस प्रकार विश्व मानचित्र के लिए सरल बेलनाकार प्रक्षेप का रेखाजाल तैयार हो जाएगा। चित्र 6 में दिखाए अनुसार अक्षांश और देशान्तर रेखाओं को संख्यांकित कर दीजिए।

दो लगातार देशान्तर रेखाओं के बीच अक्षांश रेखा पर नापी गई दूरी को *अक्षांशीय पैमाना* कहते हैं। विभिन्न प्रक्षेपों में अक्षांशीय पैमाना अलग-अलग होता है। सरल बेलनाकार प्रक्षेप में अक्षांशीय पैमाना केवल विषुवत रेखा पर ही शुद्ध रहता है और उत्तर तथा दक्षिण की ओर काफी बढ़ जाता है। ध्रुव जो बिन्दुमात्र हैं, इस प्रक्षेप में विषुवत रेखा के बराबर सरल रेखा से दिखाए जाते हैं। अतः ध्रुवों पर अक्षांशीय पैमाना असीम रूप से बढ़ जाता है।

दो लगातार अक्षांश रेखाओं के बीच देशान्तर रेखा पर जो दूरी नापी जाती है उसे *देशान्तरीय पैमाना* कहते हैं। विभिन्न प्रक्षेपों में देशान्तरीय पैमाना भी बदलता रहता है। सरल बेलनाकार प्रक्षेप में देशान्तरीय पैमाना सर्वत्र शुद्ध होता है, क्योंकि सभी अक्षांश रेखाएँ अपनी वास्तविक दूरी पर खींची जाती हैं। अक्षांश और देशान्तर रेखाएँ परस्पर समकोण पर काटती हैं। इसलिए बेलनाकार समदूरस्थ प्रक्षेप की आकृति समकोण चतुर्भुज जैसी होती है। इसमें सभी अक्षांश रेखाएँ विषुवत वृत्त के बराबर और सभी देशान्तर रेखाएँ विषुवत वृत्त की आधी होती हैं। इसलिए यह समक्षेत्रफल प्रक्षेप नहीं है।

सरल बेलनाकार प्रक्षेप में भूखंडों और जलाशयों की आकृति भी शुद्ध नहीं रहती। अतः इसे समरूप नहीं कह सकते। ऊँचे अक्षांशों पर अक्षांशीय पैमाने के अत्यधिक बढ़ जाने के कारण महाद्वीपों की आकृति विकृत हो जाती है और इसलिए यह प्रक्षेप मध्य और उच्च अक्षांशों में स्थित क्षेत्रों का मानचित्र बनाने के लिए उपयुक्त नहीं है। यह निम्न अक्षांशीय क्षेत्र अर्थात् विषुवतीय प्रदेशों का मानचित्र बनाने के लिए अधिक उपयुक्त है।

बेलनाकार समक्षेत्र प्रक्षेप : सरल बेलनाकार प्रक्षेप की भाँति इस प्रक्षेप का भी विकास ग्लोब को विषुवत वृत्त पर स्पर्श करते हुए एक बेलन पर प्रक्षेपित करके किया जाता है। फिर बेलन को खोलकर समकोण चतुर्भुजाकार समतल के रूप में फैला दिया जाता है। इस प्रक्षेप में भी अक्षांशीय पैमाना ध्रुवों की ओर बढ़ता जाता है। परन्तु साथ-ही-साथ देशान्तरीय पैमाना घटता जाता है। इस कारण यह प्रक्षेप समक्षेत्रफल का गुण प्राप्त करता है।

उदाहरण : संसार के मानचित्र के लिए बेलनाकार समक्षेत्र प्रक्षेप पर एक रेखाजाल बनाइए। इसमें अक्षांश और देशान्तर रेखाएँ 15° के अंतरालों पर दिखाई जाय और ग्लोब की त्रिज्या 5 सें० मी० है। (चित्र 7)

रचना :—ग्लोब को प्रदर्शित करने के लिए 5 सें० मी० की त्रिज्या का एक वृत्त खींचिए। कल्पना करिए कि E O E′ और P O P′ क्रमशः विषुवतीय और ध्रुवीय व्यास है। 15°, 30°, 45°, 60°, 75° और 90° की अक्षांश रेखाओं को जानने के लिए 15° के अंतराल पर O केन्द्र पर कोण बनाइए। मान लीजिए कि यह कोण वृत्त की परिधि को a, b, c, d, e तथा P और a′, b′, c′, d′, e′ और P′ बिन्दुओं पर काटते हैं।
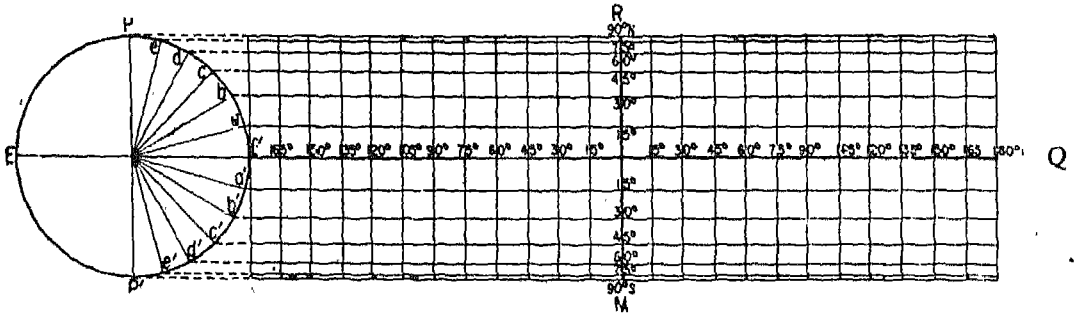
चित्र—7 बेलनाकार समक्षेत्र प्रक्षेप

E O E′ रेखा को Q बिन्दु तक बढ़ाइए जिसे E′ Q रेखा विषुवत रेखा की वास्तविक लम्बाई अर्थात 2 π × त्रिज्या के बराबर हो जिसमें त्रिज्या 5 सें० मी० के बराबर है। फिर a, b, c, d, e तथा P बिन्दुओं से और a′, b′, c′, d′, e′ तथा P′ बिन्दुओं से भी विषुवत रेखा के समानान्तर सरल रेखाएँ खींचिए। ये सभी रेखाएँ 15° के अंतराल पर अक्षांश रेखाओं को प्रकट करती हैं।

अब E′ Q रेखा को 24 बराबर भागों में बाँटिए और इन बिन्दुओं से देशान्तर रेखाएँ खींचिए जो विषुवत रेखा को समकोण पर काटें। R M इस प्रक्षेप के लिए मध्य देशान्तर रेखा या मध्य याम्योत्तर हुई। इस प्रकार से संसार के मानचित्र के लिए बेलनाकार समक्षेत्र पर रेखा-जाल बन जाएगा।

इस प्रक्षेप में अक्षांशीय पैमाना केवल विषुवत रेखा पर शुद्ध होता है। उत्तर और दक्षिण की ओर इसमें काफी वृद्धि हो जाती है, और यह वृद्धि ध्रुवों पर जहाँ एक बिन्दु विषुवत रेखा के बराबर प्रक्षेपित होता है, अनंत तक पहुँच जाती है। दूसरे शब्दों में सभी अक्षांश रेखाएँ इस प्रक्षेप में विषुवत रेखा के बराबर ही प्रक्षेपित की जाती हैं।

देशान्तरीय पैमाना कहीं भी शुद्ध नहीं होता, क्योंकि यह ध्रुवों की ओर घटता जाता है। पैमाना जिस अनुपात में पूर्व दिशा में बढ़ता जाता है उसी अनुपात में यह उत्तर-दक्षिण दिशा में कम होता जाता है। अतः समक्षेत्रफल वाला गुण इस प्रक्षेप में विद्यमान रहता है।

देशान्तर रेखाएँ अक्षांश रेखाओं को समकोण पर काटती हैं। यह समरूप प्रक्षेप नहीं है। उच्च अक्षांशों में आकृति में अधिक विकृति होने के कारण यह प्रक्षेप संसार के मानचित्र के लिए अधिक प्रयोग नहीं किया जाता। इस प्रक्षेप की उपयोगिता विषुवत रेखा के समीपवर्ती देशों के निरूपण तक ही सीमित है। इसे कभी-कभी संसार के मानचित्रों पर चावल, ऊष्ण-कटिबंधीय वनों आदि के वितरण दिखाने के लिए प्रयोग करते हैं।

शांकव प्रक्षेप

शांकव प्रक्षेपों में शंकु की कल्पना ग्लोब को स्पर्श करते हुए या काटते हुए की जा सकती है। इस वर्ग के प्रयोगों में अनेक प्रकार के रेखाजालों का निर्माण किया जाता है। इसमें से सबसे आसान एक मानक अक्षांश वाला सरल शांकव प्रक्षेप है। इसको बनाना बहुत आसान है और यह साधारणतः प्रयोग में लाया जाता है।

एक मानक अक्षांश रेखा वाला सरल शांकव प्रक्षेप : इस प्रक्षेप में कल्पना की गई है कि ट्रेसिंग कागज का एक शंकु ग्लोब को इस ढंग से ढक रहा है कि उसका शीर्ष ग्लोब के ध्रुव के ठीक ऊपर है और वह ग्लोब को एक निश्चित अक्षांश रेखा पर स्पर्श कर रहा है। यह रेखा मानक अक्षांश रेखा कहलाती है।

जब शंकु खोलकर फैलाया जाता है तो जिस मानक अक्षांश रेखा पर शंकु ग्लोब को स्पर्श करता है वह एक ऐसे वृत्त का चाप बन जाता है जिसकी त्रिज्या शंकु की तिरछी ऊँचाई के बराबर होती है और जिसका केन्द्र शंकु के शीर्ष पर पड़ता है।

अक्षांश एवं देशान्तर रेखाएँ कागज के शंकु की सतह पर स्थानान्तरित की जाती हैं और शंकु को काटकर समतल रूप में फैला दिया जाता है। इस समतल सतह पर देशान्तर रेखाएँ केन्द्र से समान कोणीय अंतरालों पर विकिरण करती हुई सरल रेखाएँ प्रक्षेपित होती

हैं। अक्षांश संकेन्द्र वृत्तों के चाप होती हैं और यह केन्द्र देशान्तर रेखाओं का अभिसरण बिन्दु बनता है। देशान्तर रेखाएँ अक्षांश रेखाओं को समकोण पर काटती हैं।

इस प्रक्षेप में मानक अक्षांश रेखा पर पैमाना शुद्ध होता है। अन्य सभी अक्षांश रेखाएँ मानक अक्षांश रेखा से उत्तर और दक्षिण में अपनी वास्तविक दूरियों पर खींची जाती हैं। इसमें एक मध्य याम्योत्तर चुनी जाती है। यह वह देशान्तर रेखा होती है जो इस प्रक्षेप पर बनाए जाने वाले क्षेत्र के मानचित्र के बीचों-बीच गुजरती है।

उदाहरण : एक 5 सें० मी० त्रिज्या वाले ग्लोब पर क्रमशः 0° से 90° N तथा 0° से 160° E अक्षांश एवं देशान्तर रेखाओं के बीच स्थित क्षेत्र के लिए 10° अन्तराल और 50° N० मानक अक्षांश रेखा पर सरल शांकव प्रक्षेप का एक रेखाजाल बनाइए। (चित्र 8)

रचना :—मानक अक्षांश रेखा 50° N है। मध्य देशान्तर रेखा, O° और 160° E के बीच 80° E हुई।

O को केन्द्र मानकर 5 सेंटीमीटर की त्रिज्या का एक वृत्त P E P′ E′ खींचिए, यह ग्लोब को निरूपित करेगा। विषुवतीय व्यास और ध्रुवीय अक्ष दिखाने के लिए क्रमशः E O E′ और P O P′ रेखाएँ खींचिए। 50° N की मानक अक्षांश रेखा को प्रकट करने वाली A B रेखा के लिए O बिन्दु पर A O E और B O E′ कोणों में से प्रत्येक को 50° का बनाइए। अब A और B बिन्दुओं पर स्पर्श रेखाएँ खींचिए जो ध्रुवीय अक्ष को बढ़ाने पर उससे X बिन्दु पर मिलें। यह शंकु का शीर्ष होगा। अब प्रक्षेप पर 50° N० अक्षांश की त्रिज्या X A या X B के बराबर होगी।

अब कोई T S रेखा मध्य याम्योत्तर के रूप में लीजिए। यह 80° E की देशान्तर रेखा कहलाएगी। T को केन्द्र मान कर और X A या X B त्रिज्या लेकर एक चाप M L K खींचिए। यह चाप मानक अक्षांश रेखा को निरूपित करेगा। ग्लोब के P E P′ E′ चित्र में 10° के अन्तराल के बराबर E O F कोण बनाइए जो परिधि को F बिन्दु पर काटे। E F चाप की लम्बाई 10° के अन्तराल पर स्थित किन्हीं दो अक्षांश रेखाओं के बीच की वास्तविक दूरी होगी। मध्य याम्योत्तर रेखा पर मानक अक्षांश रेखा से उत्तर और दक्षिण की ओर E F चाप की लम्बाई के बराबर इतने निशान लगाइए जितने आवश्यक हों। इस स्थिति में आप उत्तर की ओर 60° 70°, 80° और 90° अक्षांश रेखाओं के लिए चार निशान लगाएँगे और दक्षिण की ओर 40°, 30°, 20°, 10° तथा 0° अक्षांश रेखाओं के लिए पाँच निशान लगाएँगे। T को केन्द्र मानकर इन निशानों से क्रमशः चाप खींचिए। ये चाप 0° से 90° उत्तर तक की 10° के अन्तराल पर खींची गई अक्षांश रेखाओं को निरूपित करेंगे।

अब ग्लोब के चित्र में E O E′ रेखा पर O को केन्द्र मानकर और E F के बराबर त्रिज्या लेकर एक अर्धवृत्त खींचिए। यह अर्धवृत्त O A रेखा को G बिन्दु पर काटता है। G से ध्रुवीय अक्ष पर लम्ब डालिए जो अक्ष से H बिन्दु पर मिलता है। इस प्रकार मानक अक्षांश रेखा
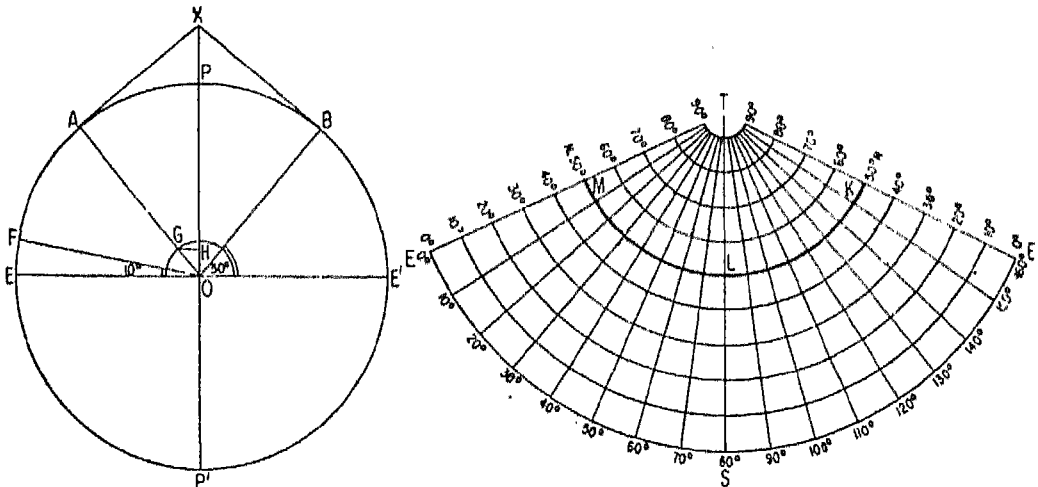
चित्र—8 एक मानक अक्षांश रेखा का सरल शांकव प्रक्षेप

पर 10° के अन्तराल पर स्थित देशान्तर रेखाओं के बीच की परस्पर दूरी G H होगी। प्रक्षेप में मध्य याम्योत्तर से मानक अक्षांश रेखा पर पूर्व तथा पश्चिम में G H की दूरी के बराबर आठ-आठ निशान लगाइए। इन निशानों को T बिन्दु से मिलाते हुए देशान्तर रेखाएँ खींचिए। ये रेखाएँ प्रत्येक अक्षांश रेखा को समकोण पर काटेंगी। इस प्रकार 0° से 90° N० अक्षांश एवं O° से 160° E देशान्तर रेखाओं का एक मानक अक्षांश वाले सरल शांकव प्रक्षेप का एक रेखाजाल तैयार हो जाएगा।

इस प्रक्षेप में मानक अक्षांश रेखा पर पैमाना सही रहता है और उसके उत्तर और दक्षिण में अक्षांशीय पैमाना बढ़ता जाता है। पैमाने में वृद्धि मानक अक्षांश रेखा से दूरी के अनुसार बढ़ती जाती है। ध्रुव, जो ग्लोब पर एक बिन्दु मात्र है, इस प्रक्षेप पर मानक अक्षांश रेखा से वास्तविक दूरी पर एक चाप के रूप में निरूपित होता है। अक्षांश और देशान्तर रेखाएँ एक-दूसरे को समकोण पर काटती हैं और देशान्तरीय पैमाना सारे प्रक्षेप पर शुद्ध रहता है।

यह प्रक्षेप न समक्षेत्रफल प्रक्षेप है और न ही समरूप प्रक्षेप है। मानक अक्षांश रेखा से दूर जाने के साथ आकृति विकृत होती जाती है। अतः यह प्रक्षेप 20° से अधिक अक्षांशीय विस्तार वाले क्षेत्रों का मानचित्र बनाने के लिए उपयुक्त नहीं है। मध्य अक्षांशीय क्षेत्रों में स्थित कम अक्षांशीय विस्तार वाले प्रदेश, जिनका देशान्तरीय विस्तार चाहे कितना भी अधिक हो, इस प्रक्षेप पर मानचित्र बनाने के लिए उपयुक्त होते हैं।

खमध्य प्रक्षेप

खमध्य प्रक्षेप में ग्लोब की अक्षांश और देशान्तर रेखाएँ एक ऐसी समतल सतह पर प्रक्षेपित की जाती हैं जो ग्लोब को किसी बिन्दु पर स्पर्श करता है। जिस बिन्दु पर समतल ग्लोब को स्पर्श करता है वह प्रक्षेप का केन्द्र होता है। इस वर्ग के प्रक्षेपों में सबसे आसान स्थितियाँ वे हैं जिनमें समतल ग्लोब को किसी ध्रुव पर स्पर्श करता है और इस तरह ध्रुवीय बिन्दु प्रक्षेप का केन्द्र बन जाता है। सभी खमध्य प्रक्षेपों में केन्द्र से दिशाएँ शुद्ध होती हैं। इसीलिए इन्हें शुद्ध *दिगंशीय* या *दिक्मान* प्रक्षेप कहते हैं।

समदूरस्थ खमध्य प्रदेश : जब किसी क्षत्र का मानचित्र बनाते समय उसके केन्द्र से सही दिशाओं और दूरियों पर अधिक ध्यान जाता है तो समदूरस्थ खमध्य प्रक्षेप सबसे अधिक उपयुक्त होता है। इस प्रक्षेप में केन्द्र से किसी भी स्थान की दिशा बिलकुल शुद्ध होती है और इसी प्रकार केन्द्र से प्रत्येक स्थान की दूरी भी यथार्थ होती है। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि देशान्तरीय पैमाने की व्यवस्था ऐसी रखी जाती है कि प्रक्षेप पर सभी बिन्दु केन्द्र से अपनी शुद्ध दूरी पर स्थित होते हैं और इसीलिए इस प्रक्षेप को समदूरस्थ प्रक्षेप कहा जाता है। इस प्रक्षेप में जब ध्रुव एक केन्द्र होता है तो सभी देशान्तर रेखाएँ इस केन्द्र से अपनी सही कोणात्मक दूरी पर अरीय सरल रेखाओं के रूप में, और अक्षांश रेखाएँ अपनी शुद्ध दूरी पर समदूरस्थ एक केन्द्रीय वृत्तों के रूप में खींची जाती हैं।
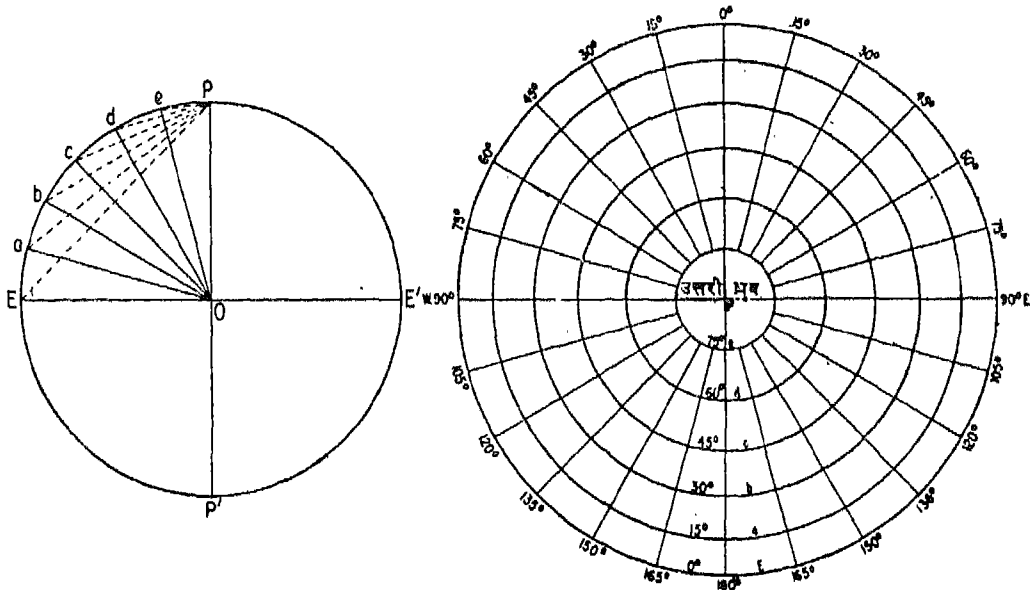
चित्र—9 खमध्य समदूरी प्रक्षेप

उदाहरण : 5 सें० मी० त्रिज्या वाले ग्लोब के उत्तरी गोलार्ध के पूर्वी आधे भाग को दिखाने के लिए समदूरस्थ खमध्य प्रक्षेप पर एक रेखाजाल खींचिए जिसमें 0° से 90° N अक्षांश रेखाएँ और 0° से 180° E देशान्तर रेखाएँ 15° के अंतराल पर दिखाई गई हों। चित्र 9

रचना :—ग्लोब को प्रदर्शित करने के लिए O को केन्द्र मानकर 5 सें० मी० त्रिज्या वाला एक वृत्त खींचिए। कल्पना करिए कि EOE' और POP' इस ग्लोब के क्रमश: विषुवतीय व्यास और ध्रुवीय अक्ष हैं। E O रेखा पर केन्द्र से 15°, 30°, 45°, 60° और 75° के कोण बनाती हुई रेखाएँ खींचिए जो वृत्त की परिधि को क्रमश: a, b, c, d तथा e बिन्दुओं पर काटती हैं।

प्रक्षेप पर एक ऊर्ध्वाधर सरल रेखा खींचिए। इस रेखा के मध्य-बिन्दु को P मान लीजिए। यह उत्तरध्रुव को निरूपित करता है। इस बिन्दु से 15° के अंतराल पर पूर्व की ओर 0° से 180° तक की देशान्तर रेखाओं को प्रकट करने के लिए अरीय सरल रेखाएँ खींचिए। ग्लोब के चित्र से P E, P a, P b, P c, P d, और P e चापीय दूरियों को नापिए और P को केन्द्र मानकर इन नापी गई दूरियों के बराबर त्रिज्या लेकर अर्धवृत्त खींचिए, जो क्रमश: 0°, 15°, 30°, 45° 60° और 75° उत्तरी अक्षांश रेखाओं को निरूपित करेंगे।

इस प्रक्षेप पर अक्षांशीय पैमाना शुद्ध नहीं होता क्योंकि केन्द्र से दूर जाने पर इसमें तेजी से वृद्धि होने लगती है। देशांतरीय पैमाना सर्वत्र शुद्ध होता है। प्रत्येक बिन्दु केन्द्र से अपनी सही दूरी पर स्थित होता है। यह प्रक्षेप न तो समक्षेत्रफल प्रक्षेप है और न ही समरूप है। ध्रुवीय प्रदेशों का मानचित्र बनाने के लिए इस प्रक्षेप का अधिकतर उपयोग होता है। इस प्रक्षेप में अक्षांशीय पैमाने के बढ़ने और विशेषतया बाहर की ओर अधिक तेजी से बढ़ने के कारण मध्य और निम्न अक्षांशीय क्षेत्रों का मानचित्र बनाने में दोनों ही, क्षेत्रफल और आकृति अशुद्ध हो जाते हैं। अत: ध्रुवीय प्रदेशों, जिनका विस्तार 30° अक्षांशों से अधिक न हो, के मानचित्र बनाने में यह प्रक्षेप सबसे अच्छा माना जाता है।

प्रक्षेपों का चयन : किसी मानचित्र को बनाने के लिए कौन-सा प्रक्षेप चुना जाय, यह कई बातों पर निर्भर करता है। मानचित्र बनाने का उद्देश्य प्रक्षेप-चयन में सर्व-प्रमुख कारक है। इसके अतिरिक्त मानचित्र पर दिखाए जानेवाले क्षेत्र की स्थिति, उसका अक्षांशीय और देशान्तरीय विस्तार तथा प्रक्षेप बनाने की सुगमता आदि कारक भी प्रक्षेप के चयन को प्रभावित करते हैं।

श्रीलंका, नेपाल, क्यूबा, पुर्तगाल, फ्रांस, आदि जैसे छोटे देशों के मानचित्र बनाने के लिए सरल शांकव प्रक्षेप अधिक उपयुक्त है। एक मानक अक्षांश रेखावाला सरल शांकव प्रक्षेप नेपाल जैसे कम अक्षांशीय विस्तार वाले देशों और सोवियत संघ जैसे अधिक देशान्तरीय विस्तार वाले देशों के मानचित्र बनाने में उपयोगी हो सकता है। इसके अतिरिक्त दो मानक अक्षांश रेखाओं वाला सरल शांकव श्रीलंका, पुर्तगाल, फ्रांस, यूनाइटेड किंगडम, संयुक्त राज्य अमेरिका और सोवियत संघ जैसे अपेक्षाकृत कुछ अधिक अक्षांशीय विस्तार वाले देशों के मानचित्र बनाने के लिए अधिक उपयुक्त है। भारत का मानचित्र बनाने के लिए शांकव प्रक्षेप उपयोगी है। इस प्रक्षेप का उपयोग राजनीतिक इकाइयों, भौतिक लक्षणों और उपज तथा अन्य उत्पादों का वितरण दिखाने के लिए भी किया जाता है।

ध्रुवीय प्रदेशों का मानचित्र बनाने लिए समदूरस्थ खमध्य प्रक्षेप सबसे अधिक सुविधाजनक है। यह प्रक्षेप देशान्तर रेखाओं पर की दूरियों और ध्रुव से दिशाओं को शुद्ध रूप से प्रकट करता है।

संसार के मानचित्र के लिए बेलनाकार समक्षेत्रफल प्रक्षेप सामान्यत: प्रयोग किया जाता है। इस प्रक्षेप पर पैमाने के अनुसार क्षेत्रफल सर्वत्र शुद्ध होता है, फिर भी इस प्रक्षेप पर उच्च अक्षांशों में आकृतियाँ अधिक विकृत हो जाती हैं, परन्तु यह विकृति अयन रेखाओं के बीच कम होती है। इन गुणों के परिणामस्वरूप यह प्रक्षेप चावल, गन्ना, रबर जैसी उष्ण कटिबंधीय उपजों के वितरण दिखाने के लिए अधिक उपयुक्त होता है। इस प्रक्षेप का बनाना भी बहुत आसान है, अत: इस कारण यह बहुत लोकप्रिय है।

अभ्यास

1. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लिखिए :—

   1. मानचित्र और ग्लोब में क्या अन्तर है ?
   2. मानचित्र प्रक्षेप किसे कहते हैं ?

3. वे कौन से महत्त्वपूर्ण भौगोलिक संबंध हैं जिन्हें हम मानचित्रों पर ढूँढ़ते हैं ?
4. पृथ्वी की सतह अविकासनीय क्यों कही जाती है ?
5. मानचित्रों की उन मूल सीमाओं का उल्लेख करिएजिनके कारण उनमें अवगुण उत्पन्न होते हैं।

2. निम्नलिखित में से प्रत्येक पर पाँच पंक्तियों में टिप्पणियाँ लिखिए :—
   1. विकासनीय सतह,
   2. मध्य याम्योत्तर,
   3. खमध्य प्रक्षेप।

3. मानचित्र प्रक्षेप की आवश्यकता और उनके उपयोग एवं रचना-विधि के आधार पर उनके वर्गीकरण पर लगभग 30 पंक्तियों में विवरण लिखिए।

4. प्रक्षेपों का चयन किन बातों पर निर्भर करता है ? यथासंभव विशिष्ट उदाहरण देकर समझाइए।

5. निम्नलिखित प्रत्येक कथन के लिए एक पारिभाषिक शब्द लिखिए :—
   1. अक्षांश एवं देशान्तर रेखाओं का रेखाजाल।
   2. दो अक्षांश रेखाओं और दो देशान्तर रेखाओं के बीच घिरा क्षेत्र।
   3. पृथ्वी अथवा ग्लोब के ग्रिड को समतल सतह पर स्थानान्तरित करने की विधि।
   4. किसी देशान्तर रेखा पर दो लगातार अक्षांश रेखाओं के बीच नापी गई दूरी।
   5. एक गोले को दो बराबर भागों में बाँटने वाला तल जो गोले के केन्द्र से गुजरता है।

6. पाठ की विषयवस्तु में बताए विवरण के अनुसार निम्नलिखित प्रक्षेपों की रचना कीजिए :—
   1. सरल बेलनाकार प्रक्षेप।
   2. बेलनाकार समक्षेत्र प्रक्षेप।
   3. एक मानक अक्षांश रेखा वाला सरल शांकव प्रक्षेप।
   4. समदूरस्थ खमध्य प्रक्षेप।

सर्वेक्षण

सर्वेक्षण रेखीय एवं कोणीय दूरी मापने तथा प्रेक्षण करने की एक कला और विज्ञान है, जिसके द्वारा पृथ्वी की सतह पर निश्चित स्थानों की सापेक्षिक स्थिति ठीक-ठीक ज्ञात की जाती है। सर्वेक्षण की सहायता से हम किसी भी छोटे या बड़े क्षेत्र का मानचित्र बना सकते हैं। सड़कों, रेलमार्गों, भवनों और बहुउद्देशीय योजनाओं के निर्माण के लिए सर्वेक्षण की मदद से नक्शे बनाए जाते हैं। कृषि-भूमियों, वन क्षेत्रों तथा अन्य भूमि-उपयोग वाले भागों की सीमाएँ निर्धारण करने में सर्वेक्षण का बहुत अधिक महत्व है। नगर-विकास अथवा नवीन नगरों की स्थापना के लिए सर्वेक्षण की आवश्यकता पड़ती है। विज्ञान और तकनीकी के विकास के साथ सर्वेक्षण की कला भी अति तकनीकी और विशिष्ट कार्य बन गई है। इस कार्य को अब अपेक्षाकृत अधिक शुद्ध, सही और शीघ्र पूरा किया जा सकता है।

भूगोल के छात्र के लिए सर्वेक्षण बहुत आवश्यक है क्योंकि उसे अपने विद्यालय, पास-पड़ोस, अपने गाँव अथवा नगर आदि के भूमि-उपयोग की जानकारी प्राप्त करने के लिए स्थानीय सर्वेक्षण करना होता है। प्रायः छोटे-छोटे क्षेत्रों के मानचित्र नहीं बनाए जाते, ऐसी दशा में भूगोलवेत्ता स्वयं क्षेत्र में घूम-फिर कर अध्ययन करता है और अपने प्रेक्षणों की मदद से उस क्षेत्र का मानचित्र तैयार करता है। सर्वेक्षण की आवश्यकता इसलिए और भी है कि इसके द्वारा मानचित्र बनाने, विशेषतया अति उपयोगी स्थला-

कृतिक मानचित्र तैयार करने, की विधियों की जानकारी होती है।

सर्वेक्षण-विधियाँ

एक सर्वेक्षक विभिन्न प्रकार के सर्वेक्षणों के लिए अलग-अलग यंत्रों का प्रयोग करता है। यहाँ सर्वेक्षण की तीन सामान्य विधियों की व्याख्या दी जा रही है और ये हैं—1. जरीब और फीता द्वारा सर्वेक्षण, 2. प्लेन टेबुल सर्वेक्षण और 3. प्रिज्मेटिक कम्पास सर्वेक्षण।

जरीब सर्वेक्षण (चेन सर्वेक्षण)

सर्वेक्षण कार्य में प्रयोग होने वाले यंत्रों में से जरीब सबसे महत्वपूर्ण है। इसका सबसे अधिक उपयोग छोटे-छोटे क्षेत्रों के शुद्ध सर्वेक्षण जैसे खेतों, सड़कों, नहरों आदि की सीमाओं के निर्धारण में होता है। परन्तु आजकल सर्वेक्षण कार्य में जो आधुनिक विधियाँ और यंत्र प्रयोग में लाए जा रहे हैं उनकी तुलना में जरीब सर्वेक्षण एक अति प्राचीन एवं अधिक समय लगाने वाली विधि है। लेकिन इस पर भी मानचित्र बनाने की विधियों और भौगोलिक दृश्यभूमि को अच्छी तरह समझने के लिए जरीब सर्वेक्षण की जानकारी आवश्यक है।

सर्वेक्षण जरीब दो स्थानों के बीच की क्षैतिज दूरी नापने का साधन है (चित्र 10) जरीब जस्तेदार मृदुस्पात के तार से बनता है और इसके दोनों सिरों पर पीतल के हत्थे होते हैं जिनसे जरीब को आसानी से खींचा जाता है।

जरीब विभिन्न लंबाइयों के होते हैं। पूर फैलाए हुए जरीब के हत्थों की बाहरी सीमाओं के बीच की दूरी जरीब की लंबाई होती है। इसमें कड़ियों की संख्या निश्चित होती है और प्रत्येक कड़ी के सिरों पर एक या तीन छोटे-छोटे छल्ले लगे होते हैं। हमारे देश में सामान्यत: दो लंबाइयों की जरीबें प्रयोग की जाती हैं। इंजीनियरों के जरीब की लंबाई 100 फुट होती है और गुंटर जरीब 66 फुट लंबी होती है। ब्रिटिश मात्रक पद्धति में गुंटर जरीब का स्थल सर्वेक्षण में अधिक प्रयोग होता है क्योंकि गुंटर के 80 जरीब एक मील के बराबर होते हैं और 10 वर्ग जरीब एक एकड़ के बराबर होता है। ($10 \times 66^2 = 43560$ वर्गफुट $= 1$ एकड़)। मीटरी मात्रकों के अनुसार हमारे देश में हाल ही में 30 मीटर और 15 मीटर लंबी जरीबों का प्रयोग प्रारम्भ हो गया है। ये जरीबें इंजीनियर के जरीब और गुंटर के जरीब से बहुत कुछ मिलते-जुलते हैं।

जरीब के प्रभागों या कड़ियों को आसानी से गिनने के लिए उसमें चिह्नक टिकट और पीतल के छोटे-छोटे छल्ले होते हैं। जैसा चित्र 10 में दिखाया गया है कि चिह्नक टिकट विशेष आकार के धात्विक टैग या सूचक होते हैं जो जरीब के प्रभागों को शीघ्र और आसानी से जानने के लिए जरीब के निश्चित स्थानों पर जुड़े होते हैं।

तीस मीटर वाले जरीब में दोनों सिरों से पाँच मीटर की दूरी पर लगे चिह्नकों में एक दाँत होता है। ऐसा एक चिह्नक एक सिरे से पाँच मीटर की दूरी और दूसरे सिरे से 25 मीटर की दूरी का बोध कराता है। इसी प्रकार दस मीटर पर लगे चिह्नकों में दो दाँत होते हैं और उनमें से प्रत्येक एक सिरे से 10 मीटर और दूसरे सिरे से 20 मीटर की दूरी का संकेत देता है। बीच वाला चिह्नक विशिष्ट आकृति का होता है और यह 15 मीटर प्रकट करता है। इस प्रकार यह चिह्नक टिकट हमें जरीब के किसी भी सिरे से दूरी नापने में मदद देते हैं।

हत्थे की सतह के विपरीत तल पर जरीब की कुल लम्बाई अंकित रहती है, जैसे 30 मीटर या 15 मीटर जो भी उसकी वास्तविक लंबाई हो।
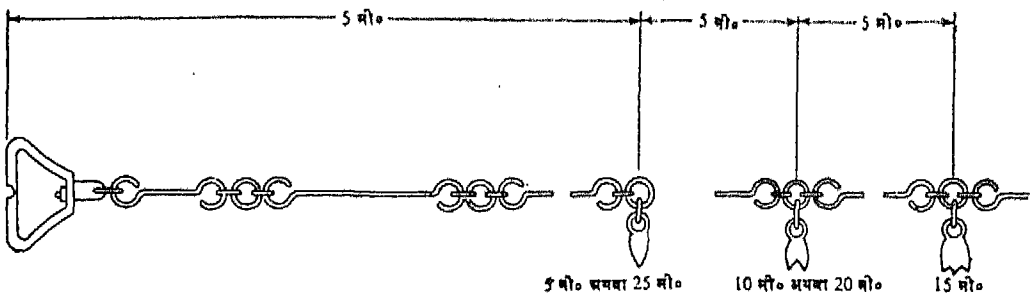
चित्र—10 जरीब के अंग

हत्थे की बाहरी सतह पर एक खाँचा कटा रहता है, जो कीलों को, जरीब के हत्थे के साथ पकड़ने में सहायक होता है। खाँचे का अर्धव्यास कीलों के अर्धव्यास के अनुरूप होता है।

फीते

फीते विभिन्न लम्बाइयों और विभिन्न वस्तुओं के होते हैं। ये कपड़े के या इस्पात अथवा पीतल जैसी धातु के बने होते हैं। इनमें से इस्पात के फीते सबसे अच्छे और टिकाऊ होते हैं। 15 मीटर लम्बाई के फीते सामान्यतः उपयोग में लाए जाते हैं।

ब्रिटिश मात्रक के अनुसार बने फीते 3 फुट से लेकर 100 फुट तक की लम्बाइयों में मिलते हैं। उनमें से 50 फुट और 100 फुट के फीते सर्वेक्षण में सामान्यतः प्रयोग किए जाते हैं।

सर्वेक्षण दंड

ये सामान्यतः लकड़ी के बने सीधे दंड होते हैं। इनमें एक सिरे पर भूमि में धँसने के लिए लोहे की एक नुकीली नाल मढ़ी होती है। ये आमतौर पर 6 फुट या दो मीटर लम्बे होते हैं। इन पर सामान्यतः एक के बाद दूसरा फुट लाल और सफेद रंग से रँगा रहता है जिससे वे चमकीली या धुँधली दोनों ही प्रकार की पृष्ठभूमि पर साफ दिखलाई पड़ सकें। कभी-कभी इनके शीर्ष पर झंडियाँ भी लगी होती हैं।

कीलें

प्रत्येक जरीब के साथ लोहे की बनी 35 से 45 सें० मी० लंबी दस कीलें होती हैं। इनका एक सिरा नुकीला होता है ताकि वे जमीन में आसानी से धँसाई जा सकें। इनका दूसरा सिरा छल्ले के रूप में मुड़ा रहता है जो मूठ का काम करता है। इन कीलों का प्रयोग किसी रेखा पर जरीब लंबाइयों की संख्या गिनने के लिए किया जाता है।

इन यंत्रों के अतिरिक्त जरीब सर्वेक्षण में चुम्बकीय दिक्सूचक यंत्र एवं समकोण-दर्शक यंत्र का भी प्रयोग किया जाता है। इनमें से दिक्सूचक यंत्र द्वारा उत्तर-दक्षिण दिशा ज्ञात करते हैं। और समकोण-दर्शक यंत्र का प्रयोग जरीब रेखा पर उन बिन्दुओं को ज्ञात करने के लिए किया जाता है, जहाँ आलेखित की जाने वाली वस्तुएँ समकोण बनाती हैं।

जरीब सर्वेक्षण की प्रक्रिया

वास्तविक सर्वेक्षण आरम्भ करने से पूर्व सर्वेक्षकों को सर्वेक्षण क्षेत्र का एक रेखाचित्र बना लेना चाहिए। यद्यपि इस रेखाचित्र को पैमाने के अनुसार बनाने की आवश्यकता नहीं है, फिर भी यह यथोचित रूप से शुद्ध होना चाहिए और इस पर सभी क्षेत्रीय ब्यौरे सही संदर्भ में प्रकट होना चाहिए। सर्वेक्षकों को यह बात भी ध्यान में रखनी चाहिए कि जरीब सर्वेक्षण का निहित नियम यह है कि क्षेत्र को ऐसे उपयुक्त त्रिभुजों में विभाजित कर लिया जाए जिनकी प्रत्येक भुजा उसी क्षेत्र में नापी जा सके और उन्हें यह भी याद रखना चाहिए कि सभी दूरियाँ क्षैतिज रूप से एक समतल सतह पर नापी जाती हैं (चित्र 11)।

इस प्रकार का उपयुक्त त्रिभुज पाने के लिए सर्वेक्षकों को भूमि पर चल कर यह निश्चय करना होगा कि प्रस्तावित मुख्य त्रिभुज के शीर्ष बिन्दु A, B और C ऐसी जगह स्थित किए जायें जिनसे मिलकर उस क्षेत्र में बड़े से बड़ा त्रिभुज बनाया जा सके। इसकी भुजाएँ ऐसी हों कि उन पर शुद्ध दूरियों को वास्तविक रूप से नापने में कोई रुकावट न पड़े।
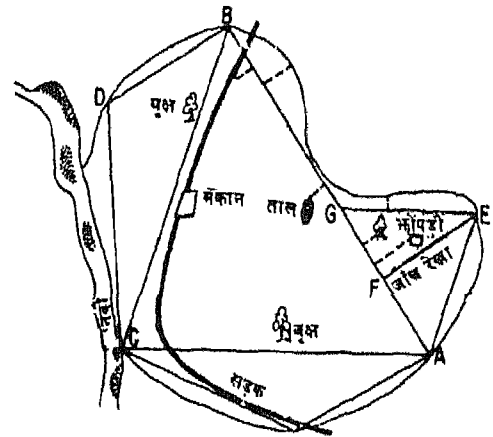
चित्र—11 सरल जरीब सर्वेक्षण के लिए त्रिभुजों का रेखा चित्र

इसके अलावा प्रत्येक भुजा संभवतः क्षेत्र-सीमा के या आलेखित की जाने वाली अन्य वस्तुओं के निकट हो।

यदि मुख्य त्रिभुज इनमें से अधिकांश शर्तों को संतुष्ट करता है तो वास्तविक सर्वेक्षण कार्य आसान हो जाएगा, क्योंकि इस त्रिभुज पर आधारित कुछ और गौण त्रिभुजों की रचना की जा सकती है। दूरियाँ नापने में संभव अशुद्धियों को ज्ञात करने के लिए कुछ जाँच रेखाओं की

रचना, जैसा चित्र 11 में दिखाया गया है, लाभदायक होगी।

सर्वेक्षण दंडों को A, B, C, इत्यादि उपयुक्त स्थानों पर स्थापित कर सर्वेक्षण कार्य आरंभ करते ही वास्तविक सर्वेक्षण के लिए दो व्यक्तियों की आवश्यकता पड़ती है। एक व्यक्ति जो जरीब के एक सिरे को खींचते हुए आगे चलता है, उसे अग्रगामी कहते हैं और दूसरा व्यक्ति अनुगामी कहलाता है। अनुगामी का काम केवल अग्रगामी का पीछा ही करना नहीं वरन् उसे यह भी देखना है कि अग्रगामी सर्वेक्षण दंड की सीध में सही और सीधे मार्ग पर चले। जिस स्थान से मापन क्रिया प्रारम्भ की जाती है उसे *आरंभिक बिन्दु* और सरल रेखा के दूसरे सिरे को जहाँ तक इसकी लंबाई नापी जाती है, *संवृत बिन्दु* कहते हैं।

जब अनुगामी जरीब का हत्था पकड़कर A स्थान अर्थात आरंभिक बिन्दु पर खड़ा हो जाता है, तब सर्वेक्षक योजनानुसार ढंग से अपना कार्य प्रारभ करते हैं। अग्रगामी जरीब का दूसरा हत्था और दस कीलें लेकर संवृत बिन्दु (B स्थान) की ओर अग्रसर होता है।

जब आरंभिक बिन्दु से जरीब की एक लंबाई पूरी हो जाती है, तो अग्रगामी पीछे मुड़कर अनुगामी से अपनी संतुष्टि के लिए इस बात का संकेत पाने के लिए उसकी ओर देखता है कि वह B बिन्दु पर स्थित सर्वेक्षण दंड के बिल्कुल सीध में है। अनुगामी अपना दायाँ हाथ उठाकर अग्रगामी को दाईं ओर या बाईं ओर खिसकने का संकेत देता है और अग्रगामी सांकेतिक दिशा में धीरे-धीरे तब तक खिसकता रहता है जब तक कि अनुगामी अपना हाथ नीचे कर उसे रुकने का संकेत नहीं देता। रूमाल से बँधी एक कील को लटकाकर अग्रगामी आसानी से स्थिति की जाँच कर सकता है।

सीध में होने के बाद अग्रगामी जरीब को थोड़ा ऊपर खींचकर अपनी कलाई से जोर का झटका देता है, जबकि अनुगामी जरीब का दूसरा हत्था आरम्भिक बिन्दु पर दृढ़तापूर्वक रखे रहता है। जरीब के अन्त वाले स्थान पर एक कील गाड़ दी जाती है।

अब एक फीते की सहायता से, जरीब-रेखा के दोनों ओर स्थित वस्तुओं का अन्तर्लम्ब नापा जाता है। जरीब-रेखा पर लंबवत नापी गई दूरी को अन्तर्लम्ब कहते हैं। इस बात की सतर्कता रखी जाती है कि फीता जरीब पर लंबवत पड़े। इस कार्य के लिए समकोण दर्शक यन्त्र का प्रयोग किया जाता है। इसका प्रयोग, जरीब-रेखा के आस-पास स्थित वस्तुओं के लघु अन्तर्लम्बों को समकोणों पर नापने के लिए किया जाता है। सामान्यतः अन्तर्लम्बीय पाठ्यांक जरीब-रेखा के दोनों ओर 15 मीटर या 50 फुट तक लिए जाते हैं। मकानों के कोनों को नापते समय, प्रत्येक कोने के दो नाप जरीब रेखा पर स्थित दो विभिन्न स्थानों से लेने चाहिए। इनमें से कोई नाप अन्तर्लम्ब हो या न हो।

जरीब-रेखा पर अन्तर्लम्बों का मापन पूरा करने के बाद अग्रगामी उस स्थान पर एक कील गाड़कर जरीब का हत्था पकड़े हुए उसे आगे घसीटता है। अनुगामी कील वाले स्थान पर पहुँचकर रुक जाता है और पहले की भाँति अग्रगामी को संवृत बिन्दु की सीध में खड़े होने का संकेत देता है। यह कार्यक्रम तब तक चलता रहता है जब तक कि वे A B रेखा के संवृत बिन्दु B पर नहीं पहुँच जाते।

अनुगामी कीलों को उठाकर अपने पास एकत्र करता जाता है, इनसे उसे यह पता चलता जाता है कि कितनी सम्पूर्ण जरीब लंबाइयाँ नापी गई हैं। अनुगामी द्वारा एकत्रित की गई कीलों की संख्या और संवृत बिन्दु तक की अन्तिम अपूर्ण जरीब की कड़ियों की गणना की सहायता से सम्पूर्ण जरीब-रेखा की लंबाई जानी जाती है।

यदि सर्वेक्षक ब्रिटिश मात्रक वाले जरीब का प्रयोग कर रहा है और अनुगामी ने छः कीलें एकत्रित की हैं और आखिरी कील से संवृत बिन्दु की दूरी 38 कड़ियाँ हैं, तो जरीब रेखा की सम्पूर्ण लंबाई $6 \times 100 \times 38 = 638$ कड़ी या फुट होगी।

क्षेत्रीय टिप्पणी

मापांकन पुस्तिका में मापांकन के लिए प्रत्येक पृष्ठ के बीच में लगभग एक सें० मी० के अन्तर पर ऊपर से नीचे दो समानान्तर सरल रेखाएँ खिंची रहती हैं। इन दोनों सरल रेखाओं के बीच का स्थान जरीब रेखा पर नापी गई दूरियों को अंकित करने के लिए होता है और इन्हें नीचे से ऊपर की ओर अंकित किया जाता है। इस मध्य स्तम्भ के दोनों ओर का स्थान अन्तर्लम्ब को लिखने के लिए होता है ताकि उनका लिखा जाना जरीब रेखा के दोनों ओर की भूमि के तदनुरूप हो (चित्र 12)।
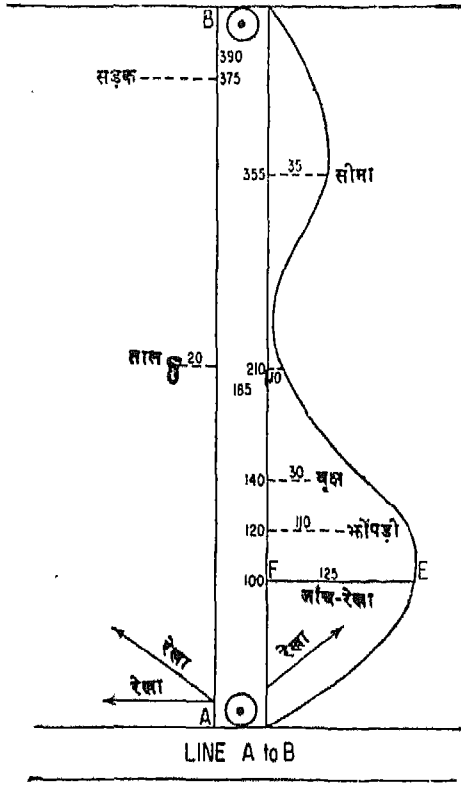
चित्र—12 जरीब सर्वेक्षण के लिए मापांकन पुस्तिका

पृष्ठ पर दाईं या बाईं ओर सीमाओं का एक रेखा-चित्र बना लिया जाता है। यह जरीब-रेखा के सम्बन्ध में अपनी वास्तविक स्थिति पर आधारित है। इस रेखाचित्र पर यथोचित रूप में मध्य स्तम्भ के दाएँ या बाएँ अन्तर्लम्ब भी अंकित किए जाते हैं। पृष्ठ के सबसे निचले भाग में सर्वेक्षण की जाने वाली रेखा का नाम लिखा जाता है।

स्वच्छ मापांकन पुस्तिका रखने का प्राथमिक उद्देश्य, इस बात को निश्चित करना है कि रेखाचित्र और उसका मापन क्रम से रेखानुसार साथ-साथ चले और रेखाचित्र मापन से न कभी आगे बढ़े और न कभी पीछे।

सर्वेक्षण का आलेखन

अब आलेखित किया जाने वाला नक्शा सर्वेक्षण क्षेत्र के प्रमुख लक्षणों का एक छोटा रूप निरूपित करेगा। वास्तविक आलेखन से पहले ऐच्छिक मानचित्र और सर्वेक्षित क्षेत्र की लम्बाई-चौड़ाई के अनुसार उपयुक्त मापनी चुनी जाय। सर्वेक्षण का आलेखन करते समय सबसे पहले त्रिभुज की एक बड़ी भुजा को प्रदर्शित करने वाली रेखा चुने हुए पैमाने के अनुसार कागज पर खींची जाती है और उसके सम्बन्ध में अन्य भुजाएँ खींची जाती हैं।

चित्र 11 का A B C त्रिभुज नीचे लिखे ढंग से बनाया जाता है।

सबसे पहले B C भुजा खींची जाती है और फिर B को केन्द्र मानकर B A की लंबाई के बराबर त्रिज्या लेकर एक वृत्त खींचा जाता है और तब C को केन्द्र मानकर C A के बराबर त्रिज्या लेकर एक दूसरा वृत्त खींचा जाता है जो पहले वृत्त को B C के दोनों तरफ दो बिन्दुओं पर काटता है। रेखाचित्र इस बात को स्पष्ट करेगा कि इन दोनों बिन्दुओं में से चुना जाने वाला सही बिन्दु कौन-सा है। सभी त्रिभुजों को बनाने के पश्चात् प्रत्येक जरीब-रेखा से पैमाने के अनुसार अन्तर्लम्बों को अंकित कर लेते हैं और आवश्यक ब्यौरों के साथ सम्पूर्ण नक्शे को सावधानी से पूरा करते हैं।

प्लेन टेबल सर्वेक्षण

भूगोल के छात्र के लिए प्लेन टेबल सर्वेक्षण क्षेत्र अध्ययन की दृष्टि से बड़ा उपयोगी है। उसके लिए यह क्षेत्र में ही पूर्ण मानचित्र तैयार करने का अवसर देता है। यह छात्र को दृश्यभूमि को मानचित्र में परिणित करने का रोमांचक अनुभव प्रदान करता है। दृश्यभूमि और मानचित्र के मध्य दृश्य-सम्बन्ध होने के कारण मानचित्र की जाँच क्षेत्र में ही हो जाती है। इस विधि से बनाया गया मानचित्र यथार्थ होता है और अशुद्धियों की संभावना कम रहती है।

प्लेन टेबल सर्वेक्षण में प्रयोग आने वाले यंत्र एवं उपकरण ये हैं—एक सर्वेक्षण पट्ट या समतल फलक और साथ में एक त्रिपाद, एक दर्शरेखक (एलिडेड), स्पिरिट-लेबिल, ट्रफ कम्पास, साहुल पिण्ड, जरीब, फीता, कुछ सर्वेक्षण दंड तथा काठ की खूटियां (चित्र 13)। सर्वेक्षण पट्ट एक हल्का समतल ड्राइंगबोर्ड होता है, जिसे त्रिपाद पर रखते हैं। यह पट्ट घुमाया जा सकता है और एक पेंच की सहायता से क्षैतिज तल में किसी भी ऐच्छिक स्थिति में स्थिर किया जा सकता है। स्पिरिट-लेबिल की सहायता से यह क्षैतिज स्थिति में लाया जाता है। सर्वेक्षण पट्ट को भूमि पर चिह्नित स्थान के ऊपर केन्द्रित करने के लिए साहुल पिण्ड का प्रयोग होता है।
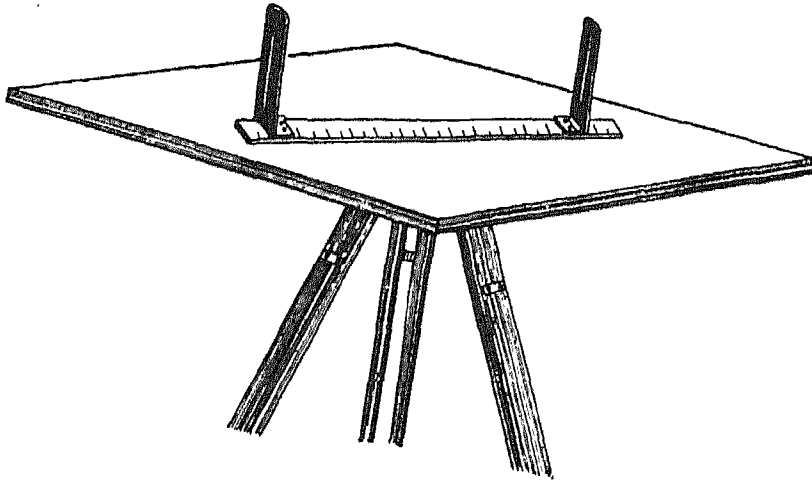
चित्र—13सर्वेक्षण पट्ट तथा दर्श रेखक

दर्शरेखक कठोर लकड़ी या धातु का बना हुआ एक मजबूत और सपाट रेखक होता है। इसके किनारे पूर्णतया सीधे और समानान्तर होते हैं। इसके दोनों सिरों पर गिरने-उठने वाले दर्शक-फलक लगे होते हैं। इन फलकों को उस समय गिरा दिया जाता है जब दर्शरेखक का उपयोग नहीं होता। एक फलक के मध्य में ऊपर से नीचे एक रेखा-छिद्र (स्लिट) कटा रहता है और दूसरे फलक के मध्य में एक ऊर्ध्वाधर बाल, तार या धागा लगा होता है। क्षेत्र में उपस्थित वस्तुओं की दिशाओं का सर्वेक्षण पट्ट पर ज्ञान, उन्हें इन फलकों द्वारा देखकर किया जाता है। देखते समय दर्शक की आँख, रेखाछिद्र, दूसरे फलक का धागा और क्षेत्र में स्थित वस्तु सभी एक सीध में होने चाहिए।

ट्रफ कम्पास में एक चुम्बकीय सुई होती है जो समानान्तर किनारे और कांच के ढक्कन वाले एक लंबे डिब्बे में स्थित एक नुकीली कील के शीर्ष पर रुकी रहती है। कागज पर चुम्बकीय उत्तर-दक्षिण रेखा खींचने के लिए इसका प्रयोग होता है।

प्लेन टेबल सर्वेक्षण की प्रक्रिया

सर्वप्रथम यह जाँच कर लें कि सर्वेक्षण पट्ट के सभी अंग ठीक प्रकार कार्य करते हैं। फिर एक ड्राइंग कागज सावधानीपूर्वक पट्ट पर मढ़ दें। पट्ट से कुछ बड़ा कागज लेना अच्छा होगा, जिससे इसे मोड़कर पट्ट के नीचे या किनारों पर ड्राइंग पिन से गाड़ दें।

सर्वेक्षण करने वाले क्षेत्र में A और B दो ऐसे सुलभ केन्द्र चुन लें जिनको मिलाने वाली रेखा आधार-रेखा का काम करे। A और B केन्द्रों का चयन इस प्रकार होना चाहिए कि इन दोनों स्थानों से क्षेत्र में स्थित सभी महत्वपूर्ण भूचिह्न एवं वस्तुएँ दिखाई दें। अब A और B के बीच की दूरी जरीब से नाप लें।

सर्वेक्षण पट्ट पर मढ़े हुए कागज पर एक सुलभ मापनी पर AB रेखा खींच लें। मापनी चुनते समय इस बात की सावधानी रखनी चाहिए कि सर्वेक्षण क्षेत्र ठीक ढंग से कागज पर निरूपित हो सके। सर्वेक्षण पट्ट को साहुल पिण्ड की सहायता से क्षेत्र के 'A' केन्द्र के ठीक ऊपर यथासम्भव क्षैतिज तल में स्थिर करें। कागज पर खींची हुई आधार-रेखा A B पर 0·2 दर्शरेखक को रख दें। पट्ट को तब तक घुमाते जाएँ जब तक कि कागज पर के A B बिन्दु और भूमि का B केन्द्र एक सीध में न हो जाएँ। सर्वेक्षण पट्ट इस स्थिति में *अभिविन्यस्त** कहा

* यह स्मरण रखना चाहिए कि जब तक A बिन्दु पट्ट के मध्य में नहीं आता पट्ट के घुमाए जाने पर A की स्थिति बदलती रहेगी और वह भूमि पर निश्चित किए केन्द्र के ठीक ऊपर नहीं होगी। यदि इसमें थोड़ी सी गलती है तो कागज को थोड़ा खिसका कर त्रुटि ठीक करनी चाहिए।

जाता है। पट्ट को इस स्थिति में कस दें और दृष्टि-पथ की एक बार फिर से जाँच कर लें।

कागज पर के A बिन्दु से दर्शरेखक द्वारा क्षेत्र में स्थित सभी महत्वपूर्ण वस्तुओं को क्रमशः देखते जाएँ और साथ ही प्रत्येक वस्तु को देखते समय दर्शरेखक के किनारे कागज पर एक रेखा (किरण) खींच दें। प्रत्येक किरण पर जिस वस्तु की ओर वह संकेत करती हो, उस वस्तु का नाम लिख दें। एक रेखाचित्र इन किरणों को पहचानने में सहायक हो सकता है। इस बात की सावधानी अवश्य रखनी चाहिए कि रेखा-किरणों की लम्बाई कम-से-कम इतनी जरूर हो कि वे सर्वेक्षण केन्द्र से वस्तु तक की दूरी पैमाने के अनुसार प्रकट कर सकें।

जब A स्थान से सभी आवश्यक वस्तुएँ देख ली जाएँ और उनकी रेखा-किरणें कागज पर खींच ली जाएँ तब सर्वेक्षण पट्ट को B स्थान पर ले जाइए।

यह निश्चित कर लें कि सर्वेक्षण पट्ट का तल क्षैतिज है और कागज पर का B बिन्दु भूमि पर के B केन्द्र के ठीक ऊपर है। सर्वेक्षण पट्ट का विन्यास इस ढंग से करें कि कागज का B बिन्दु भूमि के B केन्द्र के ठीक ऊपर हो और कागज पर की B A रेखा भूमि पर स्थित A केन्द्र की ओर बिल्कुल सीध में हो। B केन्द्र से उन वस्तुओं को, जिन्हें A स्थान में देखा गया था, पुनः देखकर और उनकी सांकेतिक रेखा-किरणें खींचकर पूर्ण कार्यक्रम फिर से दोहराइए।

ऐसा करने से A और B से खींची गई रेखा किरणों के कटान बिन्दुओं द्वारा अन्य सभी बिन्दु कागज पर निश्चित हो जाएँगे। इस प्रकार नक्शा पूरा करें।

दिशाएँ ज्ञात करना

दूरी और दिशा, सर्वेक्षण के दो मूल घटक हैं। क्षेत्र में दूरियों को नापने की विधि सीखने के बाद दूसरा कार्य दिशाओं को जानना है। दिशा निर्देशन के बिना कोई नक्शा या सर्वेक्षण कार्य नहीं होता।

उत्तर, दक्षिण, पूर्व और पश्चिम चार मुख्य दिक् बिन्दु हैं। दिशा उत्तर से नापी जाती है। भौगोलिक उत्तर कई विधियों से जाना जा सकता है।

उत्तरी गोलार्ध में, ध्रुवतारा की सहायता से भौगोलिक उत्तर जाना जा सकता है। उत्तरी आकाश में सप्तर्षि-मंडल नामक सात तारों का एक तारामंडल, अपनी अनोखी आकृति द्वारा पहचाना जा सकता है। इसके अग्रभाग के दो तारे सर्वदा ध्रुवतारा की ओर संकेत करते हैं। ध्रुवतारा उत्तरध्रुव के ठीक (ऊर्ध्वाधर) स्थित है। (चित्र 14)
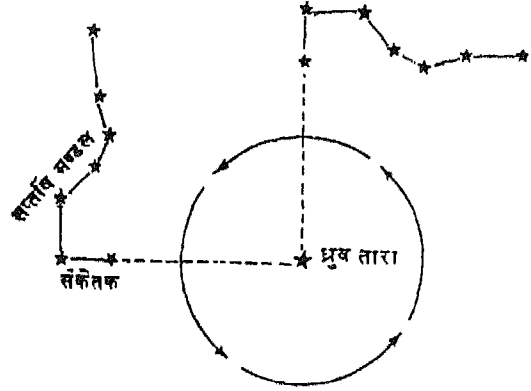
चित्र—14 ध्रुवतारा तथा सप्तर्षि मंडल

यह विधि केवल उत्तरी गोलार्ध के लिए ही उपयोगी है, क्योंकि यह तारामंडल दक्षिणी आकाश में दिखाई नहीं देता। साथ ही यह भी स्पष्ट है कि यह विधि केवल रात्रि के समय ही उपयोगी हो सकती है।

सूर्य से भी उत्तर जाना जा सकता है। भूमि में एक दंड ऊर्ध्वाधर गाड़ दीजिए। पूर्वाह्न में दंड की छाया को देखें। दंड जिस स्थान पर गड़ा है उसे केन्द्र मानकर और इस छाया की लंबाई की त्रिज्या लेकर एक वृत्त खींचिए और छाया के अनुरूप एक रेखा खींचें। छाया की लंबाई मध्याह्न तक घटती जाएगी और फिर सूर्यास्त तक बढ़ती रहेगी। अपराह्न में यह छाया एक बार पुनः वृत्त को स्पर्श करेगी। इस छाया के भी अनुरूप जमीन पर एक रेखा खींचें। आप देखेंगे कि पूर्वाह्न की छाया वाली रेखा और अपराह्न की छाया वाली रेखा के बीच एक कोण बनता है। इस कोण की समद्विभाजक रेखा वास्तविक उत्तर-दक्षिण रेखा होगी (चित्र 15)।

यह विधि केवल दिन के समय ही उपयोगी हो सकती है, जब आकाश बादलों से मुक्त होता है और पृथ्वी पर धूप बगैर किसी रुकावट के पहुँचती रहती है।

एक साधारण घड़ी से भी वास्तविक उत्तर का अनुमान लगाया जा सकता है। उत्तरी गोलार्ध में घड़ी को क्षैतिज तल में रखकर इस प्रकार घुमाते हैं कि उसकी घंटे की सुई सूर्य की दिशा में संकेत करे। घंटे वाली सुई और बारह बजे के अंक को केन्द्र से मिलाने वाली रेखा के बीच बने कोण की समद्विभाजक रेखा दक्षिण की ओर संकेत करेगी।
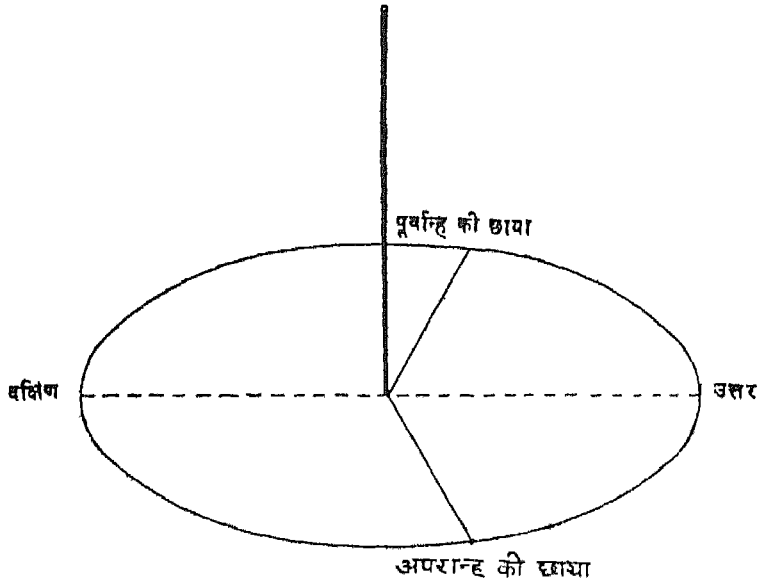
चित्र—15 दंड की छाया और अन्तर

ठीक इसी प्रकार से समद्विभाजक रेखा दक्षिणी गोलार्ध में भौगोलिक उत्तर की ओर संकेत करेगी। यह भी एक विधि है जो पूर्णतया सूर्य पर निर्भर करती है (चित्र-16)।

चुम्बकीय कम्पास (दिक्सूचक यंत्र) की सहायता से उत्तर दिशा जानने की विधि सर्वोत्तम है। यह यंत्र ध्रुव-तारा, सूर्य या मेघों पर निर्भर नहीं रहता। चुम्बकीय
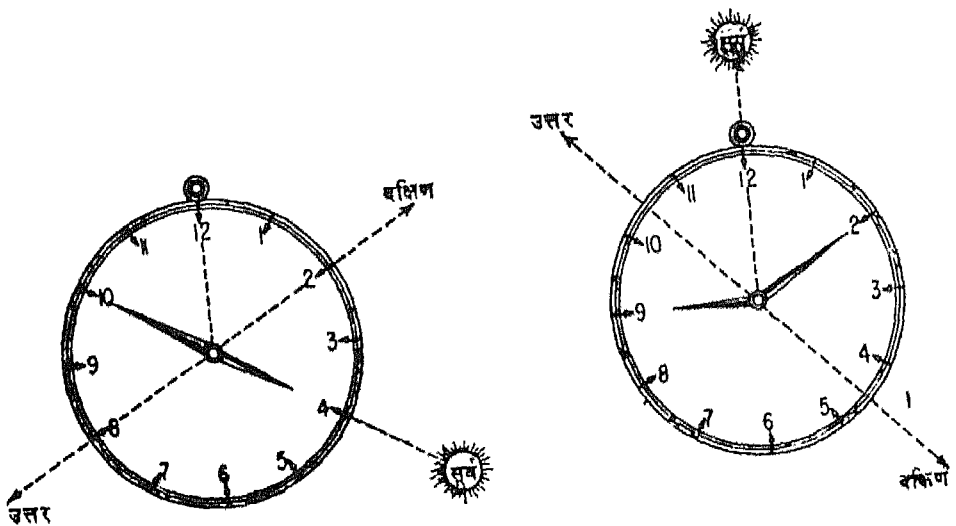
चित्र—16 घड़ी द्वारा दिशाओं का पता लगाना

कम्पास, सर्वेक्षक तथा अन्वेषक के लिए निर्देशक है। सर्वेक्षण में दिशा-निर्धारण के लिए यह सबसे उपयोगी यंत्र समझा जाता है (चित्र 17)।
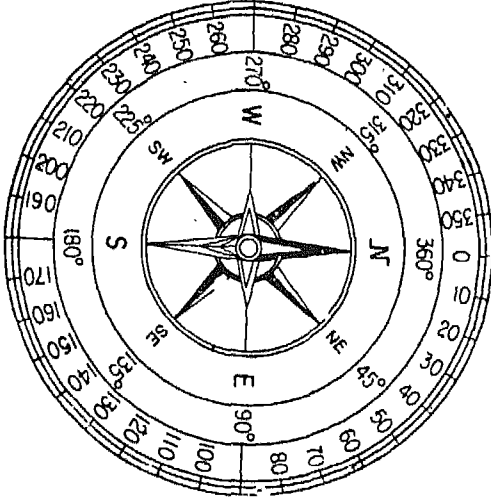
चित्र-17 चुम्बकीय कपास का डायल

यदि उस क्षेत्र में कोई चुम्बकीय वस्तु न हो तो कम्पास की सुई सर्वदा चुम्बकीय उत्तर ध्रुव की ओर संकेत करेगी जो वास्तविक (भौगोलिक) उत्तर ध्रुव से भिन्न है। इसके अतिरिक्त चुम्बकीय उत्तर ध्रुव एक स्थाई बिन्दु नहीं है क्योंकि यह धीरे-धीरे स्थानान्तरित होता रहता है।

वास्तविक (भौगोलिक) उत्तर-दक्षिण रेखा और चुम्बकीय उत्तर-दक्षिण रेखा के बीच के कोण को चुम्बकीय *दिक्पात* कहते हैं। यह नाविक पंचांग जैसी पुस्तकों से स्पष्ट रूप में मालूम किया जा सकता है। स्थलाकृतिक मानचित्रों पर भी चुम्बकीय दिक्पात दिया रहता है। चुम्बकीय दिक्पात के समय और स्थान के अनुसार बदलते रहने के कारण इसके आकलन द्वारा निकाले गए परिणाम यथार्थ नहीं होते। फिर भी यदि किसी स्थान का चुम्बकीय दिक्पात मालूम हो तो वास्तविक उत्तर ज्ञात करना बहुत सरल हो सकता है।

प्रिज्मेटिक कम्पास सर्वेक्षण

कम्पास सर्वेक्षण में किसी निश्चित लम्बाई की आधार-रेखा के दोनों सिरों से विभिन्न वस्तुओं के चुम्बकीय दिक्मान प्रिज्मेटिक कम्पास की मदद से लिए जाते हैं। आधार-रेखा की लंबाई जरीब और फीते से माप ली जाती है। इसके दोनों सिरे अर्थात् आधार-बिन्दुओं के भी चुम्बकीय दिक्मान मालूम कर लिए जाते हैं। इस प्रकार दूरी और दिक्मान दोनों की जानकारी होने पर नक्शा बनाना आसान होता है।

इस सर्वेक्षण का सबसे महत्वपूर्ण यंत्र प्रिज्मेटिक कम्पास है। यह गोल आकार का चुम्बकीय कम्पास है जो सामान्य चुम्बकीय कम्पासों से भिन्न है। इसके एक ओर प्रिज्म लगा होता है जिसमें एक झिरी (स्लिट) A बनी होती है। A झिरी से दर्शक-फलक के तार और वस्तु को देखा जाता है और साथ ही नीचे डायल से उस वस्तु का दिक्मान पढ़ा जाता है। इसके ठीक दूसरी तरफ एक दर्शक-फलक B लगा होता है जिसके बीच में ऊपर से नीचे तक तार या धागा लगा होता है। कम्पास के मध्य में एक चुम्बक होता है जो एक कील या पिवट C पर टिका रहता है। प्रिज्म, चुम्बक और दर्शक-फलक तीनों ही एक तल में होते हैं जिससे क्षेत्र की विभिन्न वस्तुओं के दिक्मान लेने में आसानी होती है। सामान्य कम्पास के विपरीत प्रिज्मेटिक कम्पास के डायल में संख्याएँ उल्टी दिशा से लिखी होती हैं अर्थात् चुम्बक के उत्तरी सिरे पर 180° और इसके दक्षिणी सिरे पर 360° के अंक लिखे होते हैं। पाठ्यांक लेते समय चुम्बक को स्थिर करने के लिए इसमें एक पेच लगा होता है। पाठ्यांक लेने के लिए कम्पास को बाएँ हाथ के अंगूठे और उंगलियों के बीच मजबूती से पकड़ना चाहिए। वैसे कम्पास को प्रायः त्रिपाद पर टिकाकर ही पाठ्यांक लिए जाते हैं। पाठ्यांक लेने के लिए बाईं आँख बन्द करके दाहिनी आँख से प्रिज्म की झिरी द्वारा देखा जाता है। यहाँ इस बात का अवश्य ध्यान रखें कि प्रेक्षक की आँख, प्रिज्म की झिरी, दर्शक-फलक का तार और वस्तु जिसका दिक्मान लिया जा रहा है, चारों एक सरल रेखा में हों। सारे पाठ्यांकों का विधिवत लेखा मापांकन पुस्तिका में उसी प्रकार रखा जाए जैसा जरीब और फीते के सर्वेक्षण में रखा जाता है। यहाँ अंतर्लंबों के स्थान पर देखी गई वस्तुओं के दिक्मान लिखने होते हैं।

भूगोल में सर्वेक्षण की आवश्यकता

क्षेत्र अध्ययन के लिए सर्वेक्षण का सबसे अधिक महत्व है। छोटे-छोटे क्षेत्रों या स्थानीय क्षेत्र अथवा गाँव,

ताल्लुका, बस्ती, कस्बा आदि के बड़ी मापनी पर मानचित्र नहीं मिलते और न ही इन क्षेत्रों के सांख्यिकीय आँकड़े उपलब्ध हैं। अतः भूगोलवेत्ता को क्षेत्र-अध्ययन के लिए खुद मानचित्र बनाने होते हैं और वह स्वयं सर्वेक्षण करके विभिन्न प्रकार के आँकड़े एकत्र करता है तथा उन्हें अपने द्वारा बनाए मानचित्रों पर दिखाता है। वह इस कार्य में विभिन्न प्रकार के सर्वेक्षण यंत्रों का भी प्रयोग करता है। इस प्रकार उसके अपने आँकड़े एकत्र हो जाते हैं जो स्थानीय भूगोल-अध्ययन में अत्यन्त महत्वपूर्ण होते हैं।

अभ्यास

निम्नलिखित में से कोई तीन क्षेत्र चुनिए और उनका (1) जरीब तथा फीते, (2) प्लेन टेबल एवं (3) प्रिज्मेटिक कम्पास द्वारा सर्वेक्षण करके प्रत्येक का अलग-अलग नक्शा बनाइए।

क्षेत्र—स्कूल भवन, विद्यालय का क्रीड़ा-स्थल, पार्क, बाग, पास-पड़ोस की कोई कृषि-भूमि, गाँव, बस्ती आदि।

अध्याय 3

मानचित्र-विधियाँ

पिछले अध्याय में आपने मानचित्र बनाने के सम्बन्ध में तीन प्रमुख बातों के बारे में अध्ययन किया है। यह हैं मापनी, मानचित्र प्रक्षेप तथा सर्वेक्षण। यद्यपि यह तीनों बातें मानचित्र बनाने में आधारभूत हैं परन्तु भूगोलवेत्ता का मुख्य कार्य मानचित्रों पर भौतिक, आर्थिक एवं मानवीय वितरण प्रतिरूपों का अध्ययन और उनके बीच अन्तर-सम्बन्धों को समझना होता है। इसके परिणामस्वरूप भूगोल का अध्ययन अति रुचिपूर्ण एवं सजीव विषय बन जाता है। वितरण-प्रतिरूपों को किसी भी समय अध्ययन किया जा सकता है अर्थात् उपलब्ध आँकड़ों का प्रयोग करना या किसी वर्ण-विशेष में अध्ययन करना या इस प्रकार के सर्वेक्षण अथवा अध्ययन को थोड़े-थोड़े समय के अन्तराल पर कई बार करना। पृथ्वी की सतह पर होने वाले परिवर्तनों के प्रतिरूपों का अध्ययन करने के लिए भी कई विधियाँ हैं। वितरण प्रतिरूपों के अध्ययन में दो अवयव हैं जो अधिकांशत: एक-दूसरे के पूरक हैं। सर्वप्रथम हम किसी अवयव-विशेष जैसे कृषि या जनसंख्या के संगठन का मापन करते हैं। उदाहरणार्थ, किसी क्षेत्र का कृषि के अन्तर्गत सम्पूर्ण क्षेत्रफल को आरेख द्वारा उसके विभिन्न अवयवों में जैसे गेहूँ, कपास, गन्ना आदि के अन्तर्गत भूमि में दिखाया जा सकता है। इस प्रकार के चित्रों को *सांख्यिकीय आरेख* कहते हैं क्योंकि इनमें आँकड़ों को तालिका में न दिखाकर चित्रों के रूपों में दिखाया जाता है। जब इन आरेखों को स्थितियों के आधार पर, जहाँ वह क्रिया हो रही है, मानचित्र में दिखाया जाता है तो विभिन्न प्रदेशों के वितरण प्रतिरूपों के बीच समानताओं और विभिन्नताओं को समझना आसान होता है। इस लिए हम सांख्यिकीय आरेखों और मानचित्रों की मदद से वितरण प्रतिरूपों के विश्लेषण की कुछ विधियों का यहाँ अध्ययन करेंगे।

सांख्यिकीय आरेख

आंकड़ों को आरेखों के रूप में निरूपण करने की निम्नलिखित विधियाँ हैं :

(i) रैखिक ग्राफ

(ii) आयत-चित्र

(iii) वृत्ताकार आरेख

(iv) बहुदंड आरेख

(v) अनुपाती प्रतीक

(vi) तारा-आरेख

(vii) पिरैमिड

(viii) परिक्षेपण-आरेख

रैखिक ग्राफ (चित्र……)

रैखिक ग्राफ में जैसा कि इसके नाम से बोध होता है, एक निष्कोण वक्र या वक्र रेखा द्वारा निरपेक्ष मानों अथवा कृषीय या औद्योगिक उत्पादन के आनुपातिक मानों, किसी विशिष्ट अवधि की जनसंख्या-वृद्धि या व्यापार और यातायात आदि के आँकड़ों को निरूपित किया जाता है। (चित्र 18) इस आरेख को बनाने के लिए ग्राफ पेपर या

वर्ग कागज का प्रयोग किया जाता है। इसमें दो निर्देशांकों की सहायता से निर्धारित बिन्दुओं की शृंखला से होता हुआ एकनिष्कोण वक्र खींचा जाता है और इससे दो अवयवों के वितरण प्रतिरूपों की तुलना की जा सकती है।

उदाहरण

निम्नलिखित आंकड़े, जिनमें सन् 1901 से 1971 तक भारत की कुल जनसंख्या में नगरीय जनसंख्या का प्रतिशत दिया है, को रैखिक ग्राफ द्वारा प्रदर्शित करिए :

वर्ष	भारत की कुल जनसंख्या में नगरीय जनसंख्या का प्रतिशत
1901	10·85
1611	10·29
1921	11·18
1931	12·00
1941	13·86
1951	17·30
1961	17·98
1971	19·97

रैखिक ग्राफ बनाने की विधि :

(1) क्षैतिज अक्ष अर्थात् x अक्ष को वर्ष दिखाने और ऊर्ध्वाधर अक्ष अर्थात y अक्ष को प्रतिशत नगरीय जनसंख्या दिखाने के लिए चुनिए।

(2) दोनों प्रकार के मानों को दिखाने के लिए उपयुक्त मापनी चुनिए अर्थात् 1·5 सेंटीमीटर=5 प्रतिशत नगरीय जनसंख्या और 1 सेंटीमीटर अन्तराल 1901, 1911, 1921 आदि के बीच चुनिए।

(3) प्रत्येक जनगणना-वर्ष की स्थिति मापनी के अनुसार क्षैतिज अक्ष पर अंकित करिए और उसके संगत में प्रतिशत नगरीय-जनसंख्या की स्थितियाँ ऊर्ध्वाधर अक्ष पर अंकित करिए।

(4) जहाँ-जहाँ ये दोनों अक्ष एक-दूसरे को काटते हैं उन सभी कटान-बिन्दुओं को एक निष्कोण वक्र द्वारा मिलाइए और इस प्रकार रैखिक ग्राफ तैयार हो जाएगा।
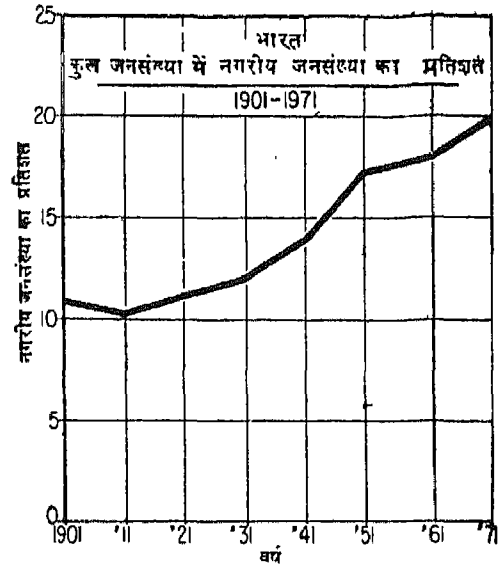
चित्र-18 रैखिक ग्राफ

रैखिक ग्राफ द्वारा आंकड़े दिखाने का लाभ यह है कि विभिन्न दशाब्दियों में नगरीकरण में क्या-क्या परिवर्तन आया है उसे आसानी से समझा जा सकता है। रैखिक ग्राफ ऊपर बनाए अनुसार साधारण ग्राफ हो सकते हैं अथवा बहुरेखीय या *मिश्रित ग्राफ* हो सकते हैं जिनमें एक ही ग्राफ कागज पर एक-सी मापनी के अनुसार कई रेखाएँ दिखाई जाती हैं।

आयत-चित्र

इस विधि से आँकड़ों को आयतों में निरूपित किया जाता है और प्रत्येक आयत की ऊँचाई आंकड़ों के अनुसार समानुपाती होती है। इस आरेख को बनाने के लिए भी रैखिक ग्राफ के समान ग्राफ कागज का प्रयोग किया जाता है और इसके x अक्ष और y अक्ष पर चर राशियों को अंकित किया जाता है। उदाहरण के लिए संलग्न चित्र में कुछ जिलों के प्रति वर्गकिलोमीटर जनसंख्या घनत्व के कुछ वर्ग-अंतरालों के अनुसार बारंबारता-बंटन दिखाया गया है।

इसमें जो वर्ग-अंतराल चुने गए हैं वे इस प्रकार हैं : 0-100, 101-200, 201-300 आदि। कभी-कभी वर्ग-अन्तराल एक समान न होकर अलग-अलग होते हैं और

उस दशा में आयत के आधार की लम्बाई असमान अंतरालों के अनुसार छोटी-बड़ी होती है। तब इसमें प्रत्येक आयत का क्षेत्रफल संगत वर्ग की बारंबारता के समानुपाती होता है।

बारंबारता-बहुभुज और बारम्बारता वक्र :

आयत-चित्र में बनाए गए आसन्न आयतों की ऊपरी भुजाओं के मध्य बिन्दुओं को सरल रेखाओं से मिलाने पर *बारंबारता-बहुभुज* बनाया जाता है। जब बारंबारता-बंटन अवर्गीय होता है तो बारंबारता-बहुभुज बनाने के लिए 'चर' मानों के बिन्दुओं को x अक्ष पर अंकित किया जाता है और उनके संगत बारंबारताओं को y अक्ष पर अंकित करते हैं और फिर इन बिन्दुओं को सरल रेखा से मिलाने पर *बारंबारता-बहुभुज* बन जाता है।

यदि वर्ग-अंतराल छोटे हो तो बारंबारता वक्र बारंबारता-बहुभुज के शीर्षों को निष्कोण वक्र द्वारा मिलाने से प्राप्त होता है।

नीचे दिए दो उदाहरण ऊपर की प्रक्रिया को समझने में मदद देंगे।

उदाहरण 1 :

नीचे दी गई सारणी में उत्तर प्रदेश की सन् 1971 की जिलों के अनुसार, जनसंख्या का घनत्व दिया गया है। इन आँकड़ों को आयत-चित्र द्वारा दिखाइए।

प्रति वर्गकिलोमीटर जनसंख्या	जिलों की संख्या
0 - 100	5
100 - 200	9
200 - 300	2
300 - 400	20
400 - 500	14
500 - 600	3
600 - 700	1

चूंकि इन आँकड़ों में वर्ग-अंतराल सब जगह एक समान है, इसलिए आयत-चित्र बनाने के लिए x अक्ष पर वर्ग-अंतराल अंकित किए जाते हैं और प्रत्येक वर्ग पर आयत बनाया जाता है जिसकी ऊँचाई y अक्ष पर अंकित वर्ग-बारंबारताओं के समानुपाती होती है। इस प्रकार बनाया गया आयत-चित्र चित्र 19 में दिखाया या है।

चित्र-19 आयात-चित्र
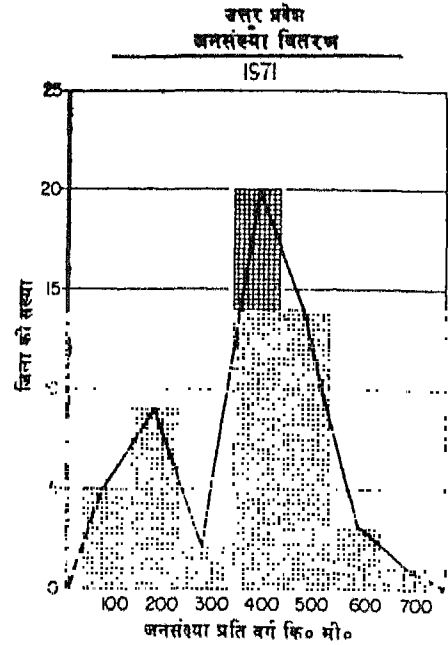
उदाहरण 2 :

सन् 1971 में एक लाख से कम जनसंख्या वाले भारतीय नगरों की संख्या नीचे सारणी में दी गई है। इस

जनसंख्या (हजार में)	बारंबारता (नगरों की संख्या हजार में)	बारंबारता वर्ग-अन्तराल
0 - 5	198	198/5 = 39·6
5 - 10	617	617/5 = 123·4
10 - 20	931	931/10 = 93·1
20 - 50	756	756/30 = 25·2
50 - 100	277	277/50 = 5·5

आँकड़े को आयत-चित्र और बारंबारता वक्र से दिखाइए और साथ ही इस पर टिप्पणी लिखिए।

उदाहरण एक में दिए बंटन के प्रतिकूल इस उदाहरण में वर्ग-अंतराल बराबर नहीं है। अतः इन आँकड़ों के अनुसार आयत-चित्र बनाने की प्रक्रिया कुछ भिन्न होगी। जब वर्ग-अंतराल असमान होते हैं तो बारंबारताओं को उनके वर्ग अंतरालों से विभाजित किया जाता है और आयतों की ऊँचाई ऊपर लिखी सारणी के तीसरे कालम की संख्याओं के समानुपाती होती है। यह आयत-चित्र 20 में दिखाया गया है।
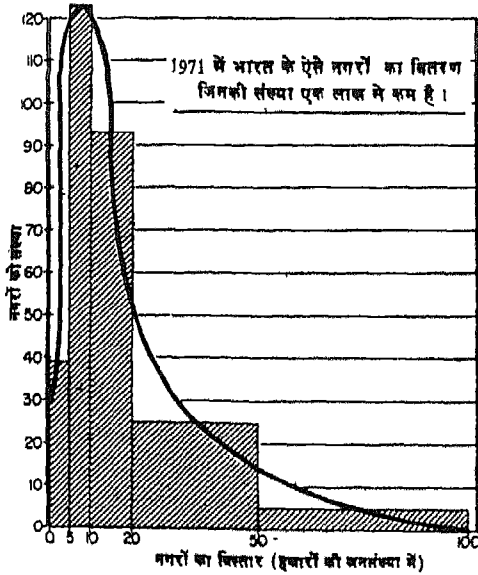
चित्र—20 बहु रेखा चित्र

इस प्रकार से बनाए आयत-चित्र के संलग्न आयतों की ऊपरी भुजाओं के मध्य बिन्दुओं को यदि हम निष्कोण वक्र से मिलाएँ तो बारंबारता वक्र बन जाता है। इस आँकड़े का बारंबारता वक्र भी चित्र 20 में दिखाया गया है।

टिप्पणियाँ : इस चित्र में बारम्बारता वक्र सममित नहीं है। इससे ज्ञात होता है कि नगरों का बंटन उनके वर्गों के अनुसार एक समान नहीं है। इस बंटन में छोटी जनसंख्या के नगरों की अधिकता है और बड़ी जनसंख्या के नगर बहुत कम हैं। सब से अधिक संकेन्द्रण पाँच हजार से बीस हजार के बीच की जनसंख्या वाले नगरों का है।

वृत्ताकार आरेख

इस विधि में वृत्त बनाए जाते हैं जिनमें त्रिज्या विभिन्न प्रेक्षणों के मानों की समानुपाती होती है चित्र 21। प्रत्येक वृत्त का क्षेत्रफल π त्रि०² सूत्र द्वारा निकाला जाता है (इसमें $\pi = \frac{22}{7}$ और त्रि० का अर्थ है त्रिज्या)। अतः इस सूत्र की मदद से नीचे लिखी विधि अनुसार प्रत्येक प्रेक्षण के लिए त्रिज्या परिकलित की जा सकती है।

π त्रि०² = 100

∴ त्रि० $= \sqrt{100 \times \frac{7}{22}} = 5{\cdot}64$

क्रमसंख्या	प्रेक्षण (क)	त्रि० $= \sqrt{क \times \frac{7}{22}}$
1	100	5·64
2	200	7·98
3	500	12·61
4	800	15·96
5	900	16·92
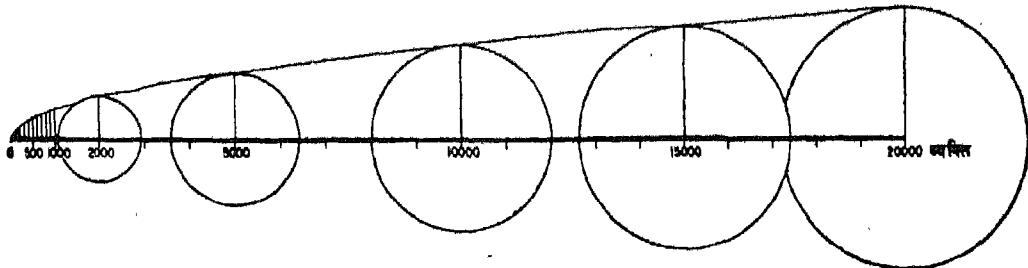
वृत्तों के लिये प्रमापित रेखीय मापनी

चित्र—21

बीच के मानों जैसे 150, 230 ……आदि के वृत्तों की त्रिज्याओं को निकालने के लिए ग्राफीय मापनी की मदद ली जाती है। इस मापनी को ऊपर दिए मानों के अनुसार बनाया जाता है। जब इन अनुपातिक वृत्तों को त्रिज्या खण्डों में बाँट दिया जाता है तो उनकी उपयोगिता और भी बढ़ जाती है। उदाहरण के लिए हम भारत के विभिन्न राज्यों में भूमि उपयोग को वृत्ताकार आरेख से दिखला सकते हैं जिसमें वृत्त को विभिन्न त्रिज्या खंडों में विभक्त करके अलग-अलग प्रकार के भूमि उपयोग को दिखलाया जाता है (चित्र 22)। त्रिज्या खण्डों में बँटा हुआ इस प्रकार का वृत्त चक्रा-रेख कहलाता है। वृत्त को त्रिज्या खण्डों में बाँटने की विधि इस प्रकार है :

(1) सर्वप्रथम प्रत्येक राज्य के क्षेत्रफल के अनुपात में त्रिज्या लेकर अलग-अलग वृत्त बनाइए।

(2) अब इन वृत्तों में भूमि उपयोग को प्रदर्शित करने के लिए प्रत्येक त्रिज्या खण्ड का कोण मालूम करिए। इसके लिए प्रत्येक प्रकार के भूमि उपयोग के प्रतिशत को 3·6 से गुणा करना होगा। यह इसलिए क्योंकि सभी प्रकार के भूमि उपयोग का कुल योग 100 प्रतिशत है वृत्त के रूप में दिखलाया गया है जो 360° के बराबर है।

दण्ड आरेख

नीचे सारणी में दी गई नौ राज्यों की सन् 1971 की जनसंख्या के आँकड़ों पर विचार करिए। बारंबारता-बंटन की सारणी के विपरीत इस सारणी में केवल एक ही स्तम्भ में विभिन्न संख्याएँ दी गई हैं अर्थात् स्तम्भ दो में विभिन्न राज्यों की जनसंख्या के आँकड़े दिए गए हैं और स्तम्भ एक में राज्यों के नाम दिए गए हैं।

राज्य	जनसंख्या (लाख में)
1. उत्तर प्रदेश	737
2. बिहार	465
3. महाराष्ट्र	396
4. आन्ध्र प्रदेश	360
5. पश्चिम बंगाल	349
6. तमिलनाडु	337
7. कर्नाटक	324
8. गुजरात	236
9. राजस्थान	206
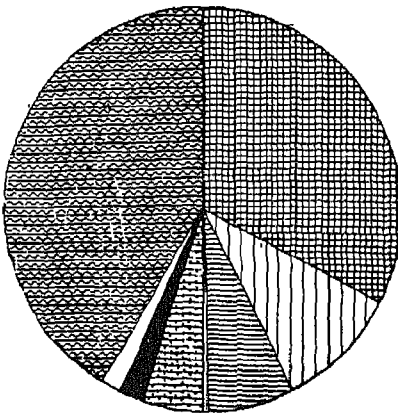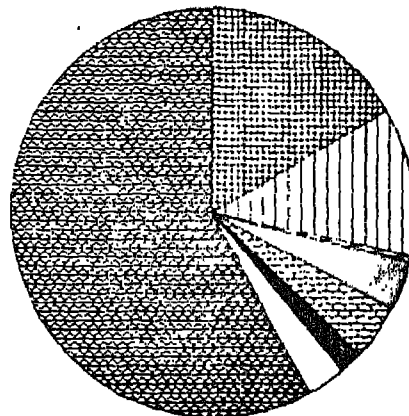
चित्र—22 भूमि उपयोग के दिखाने के लिए वृत्ताकार आरेख

इस प्रकार के आँकड़ों को दण्ड-आरेख से प्रदर्शित किया जाता है। दण्ड आरेख में समान चौड़ाई और समान दूरी पर कई स्तम्भ खींचे जाते हैं। प्रत्येक स्तम्भ की ऊँचाई उसके द्वारा प्रदर्शित की जाने वाली मात्रा के अनुपात में होती है अतः यहाँ पर प्रत्येक राज्य की जनसंख्या उसे प्रदर्शित करने वाले स्तम्भ की ऊँचाई के अनुपात में होगी। इन आँकड़ों के आधार पर बनाया गया दण्ड आरेख (चित्र 23) में दिया गया है।
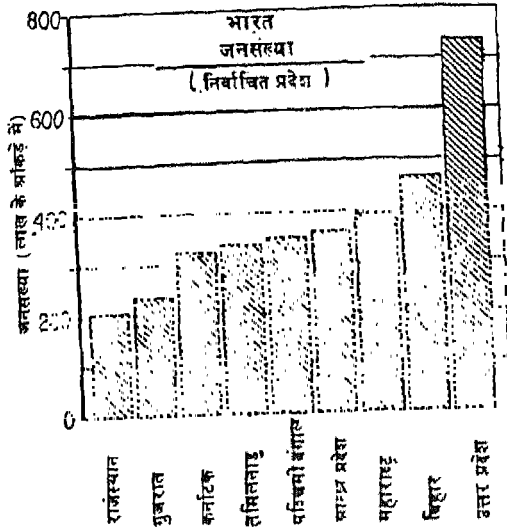
चित्र—23 दंड आरेख (लबवत)

विभिन्न फसलों का उत्पादन, उनकी प्रति हैक्टेयर उपज, विभिन्न उद्योगों का उत्पादन तथा इसी प्रकार की अन्य कई आर्थिक विशेषताओं को भी दण्ड आरेख से दिखाया जा सकता है।

बहुदण्ड-आरेख

दण्ड आरेख में कभी-कभी दो या दो से अधिक प्रकार के आँकड़े प्रदर्शित किए जाते हैं। यह आँकड़े इस प्रकार के होते हैं कि उनकी तुलना करने पर समस्याओं का अध्ययन अपेक्षाकृत अधिक आसान हो जाता है। उदाहरण के लिए भारत के लोगों की साक्षरता में बहुत अधिक विविधता है। ग्रामीण क्षेत्रों में नगरीय क्षेत्रों की अपेक्षा साक्षरता का स्तर बहुत नीचा है। पुरुषों और स्त्रियों के बीच भी साक्षरता में बहुत अधिक विभिन्नता मिलती है। अतः साक्षरता के आँकड़े प्रदर्शित करने वाला दण्ड आरेख दो प्रकार की साक्षरता की संख्याओं को दिखाएगा अर्थात् नगरीय जनसंख्या में साक्षरता और ग्रामीण जनसंख्या में साक्षरता। नीचे दी गई सारणी में भारत के पाँच राज्यों की ग्रामीण तथा नगरीय साक्षरता के आँकड़े दिए गए हैं, जिन्हें बहुदण्ड आरेख से प्रदर्शित किया जा सकता है जैसा चित्र 24 में दिखाया गया है।

	भारत की कुल जनसंख्या में साक्षर व्यक्तियों का प्रतिशत	
राज्य	ग्रामीण	नगरीय
1. असम	25·80	58·68
2. मध्य प्रदेश	16·81	49·55
3. केरल	59·28	66·31
4. जम्मू और कश्मीर	14·11	38·17
5. महाराष्ट्र	30·63	58 07
भारत	23·74	52·44

अनुपाती प्रतीक

वर्ग एवं घन, चित्र.....

आँकड़ों को प्रदर्शित करने की इस विधि में आयत विधि के समान द्विविम चित्र बनाए जाते हैं, जैसे वर्ग अथवा घन। इसमें वर्गों या घनों को एक-दूसरे के ऊपर रखा जाता है जिससे उनको आसानी से गिना जा सकता है। वर्ग प्रतीकों को आरेख में प्रदर्शित की जाने वाली मात्रा क्षेत्रफल के साथ समानुपाती होती है और जब मात्रा को घन प्रतीकों से प्रदर्शित किया जाता है तो वह आयतन के अनुपात में होती है।

उदाहरण : भारत में 1971-72 में चावल का कुल उत्पादन और साथ ही विभिन्न राज्यों का उत्पादन नीचे सारणी में दिया गया है। इन आँकड़ों को वर्ग प्रतीकों द्वारा प्रदर्शित किया गया है (चित्र 25)।
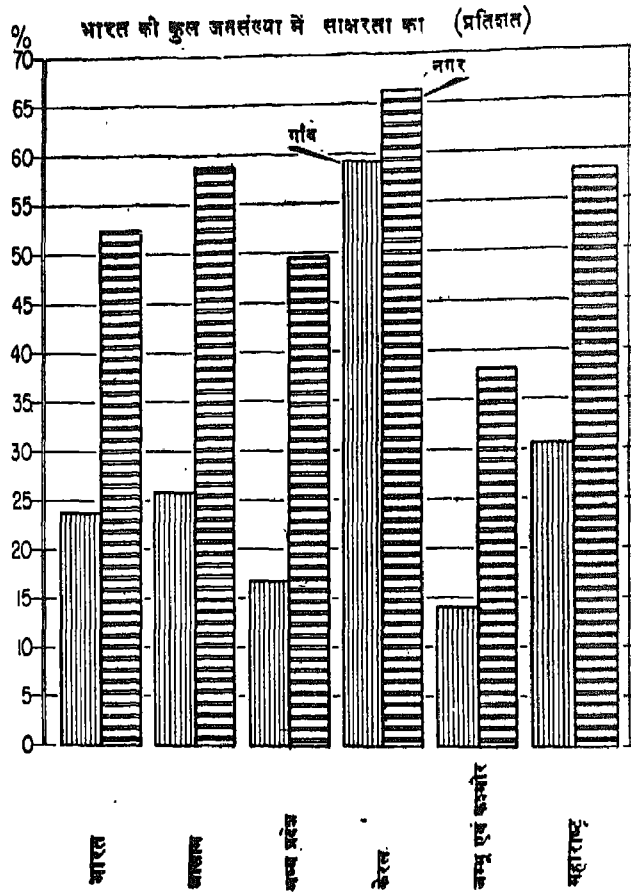
चित्र—24 बहुदंड आरेख

उपरोक्त आँकड़े वर्ग प्रतीकों द्वारा चित्र........ में प्रदर्शित किए गए हैं

भारत	4 करोड़ टन
पश्चिम बंगाल	60 लाख टन
तमिलनाडु	50 ,, ,,
आंध्र प्रदेश	40 ,, ,,
बिहार	40 ,, ,,
उड़ीसा	30 ,, ,,
मध्य प्रदेश	30 ,, ,,
उत्तर प्रदेश	30 ,, ,,
असम	20 ,, ,,
कर्नाटक	20 लाख टन
महाराष्ट्र	10 ,, ,,
केरल	10 ,, ,,
पंजाब	8 ,, ,,
अन्य	52 ,, ,,

अन्य प्रतीक

प्रतीकों द्वारा एक या एक से अधिक लक्षणों को एक साथ प्रदर्शित करना सबसे आसान विधि है। उदाहरण के लिए विभिन्न प्रकार के उद्योग जैसे लोहा और इस्पात, सीमेन्ट, चीनी, लकड़ी-संसाधन उद्योग, आदि के आँकड़े दिए हुए हैं। इन आँकड़ों को हम चित्र 26......के अनुसार अलग-अलग प्रतीकों अथवा विभिन्न आभाओं के एक ही प्रतीक से प्रदर्शित कर सकते हैं। अगर एक स्थान पर किसी उद्योग के कई प्रतिष्ठान हैं तो एक प्रकार के उद्योग को दर्शाने वाले प्रतीक ऊर्ध्वाधर रूप में एक के बाद एक क्रम से बनाए जाते हैं और इसी विधि द्वारा विभिन्न प्रकार के उद्योगों तथा उनके कारखानों की संख्याओं को भी प्रदर्शित किया जा सकता है।

कभी-कभी श्रेणीकृत प्रतीक भी प्रयोग किए जाते हैं। उदाहरणार्थ जब मानचित्र पर ग्रामीण बस्तियों की जन-

चित्र—25 वर्ग विधि
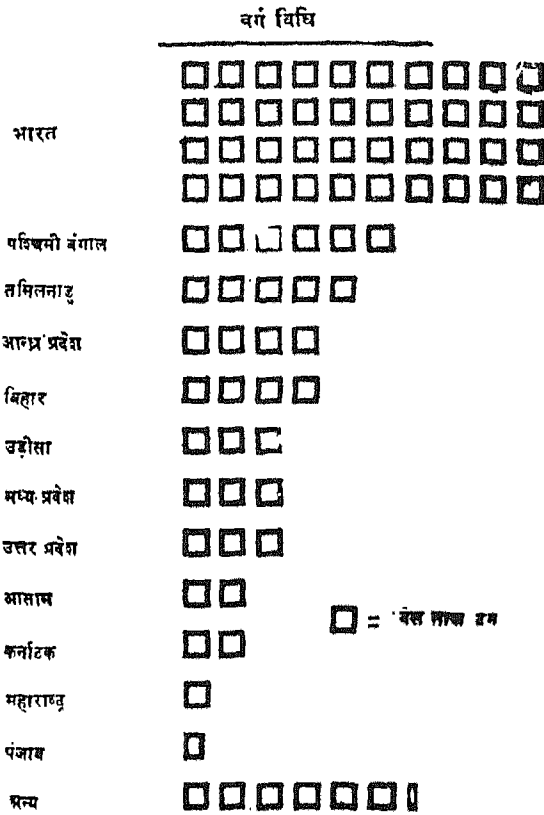
संख्या को प्रदर्शित करना होता है तो इसके लिए एक विधि यह हो सकती है कि ग्रामीण बस्तियों को उनकी जनसंख्या के आकार के अनुसार पांच या छः श्रेणीकृत प्रतीकों से दर्शाया जा सकता है। इसी प्रकार नगरों को भी उनकी जनगणना के अनुसार छः अलग-अलग श्रेणियों में अनुपातिक वृत्तों (बढ़ते या घटते हुए क्रम में) द्वारा दर्शाया जा सकता है (चित्र 26 A और 26 B)।

तारा-आरेख

जैसा कि इसके नाम से प्रतीत होता है यह आरेख तारे के समान दिखाई पड़ता है और इसमें किरणें केन्द्र से विभिन्न दिशाओं में खींची गई रेखाएँ उनके द्वारा प्रदर्शित मानों के अनुपात में होती है। फिर इन किरणों या रेखाओं के सिरों को मिला दिया जाता है जिससे आरेख एक तारा से समान दिखाई पड़ता है। जलवायु आँकड़ों को आरेखों द्वारा प्रदर्शित करने में यह विधि सबसे उपयुक्त समझी जाती है। उदाहरणार्थ पवनारेख इस प्रकार के आरेखों का सबसे अच्छा उदाहरण है। इस आरेख में विकीर्ण रेखाओं द्वारा पवन की दिशा और उसकी लम्बाई वर्ष में महीनों या दिनों की संख्या के अनुपात में दिखाई जाती है। इसी प्रकार वर्षा के आंकड़े दर्शाने के लिए 12 विकीर्ण रेखाएं महीनों को प्रदर्शित करेंगी और प्रत्येक मास में वर्षा की मात्रा के अनुपात में उस मास विकीर्ण रेखा की लम्बाई होगी। जब इस प्रकार के आरेखों को मौसम केन्द्रों की स्थिति के अनुसार मानचित्र पर दिखाया जाता है तो वे वर्षा की प्रादेशिक एवं ऋतु संबंधी विविधता को प्रभावी रूप में उभारते हैं (चित्र 27)।

पिरैमिड

आरेख, जो पिरैमिड के सामान दिखाई देता है उसे पिरैमिड आरेख के नाम पुकारा जाता है। जनसंख्या की जनसांख्यकीय संरचना को प्रदर्शित करने के लिए यह विधि सबसे उपयुक्त है। इस प्रकार के आरेख में जनसंख्या को पुरुष और स्त्री संख्या के अनुसार और उनके आयु वर्ग, जैसे 5 वर्ष से कम, 5-15 वर्ष, 15-30 वर्ष, 30-55 वर्ष से अधिक के अनुसार दिखाया जाता है।

इस पाठ में चर्चित किसी भी प्रकार के आँकड़ों के निरपेक्ष मानों या प्रतिशत मानों को दंड आरेखों के रूप में प्रदर्शित किया जा सकता है और इन दंडों को क्षैतिज रूप में एक विशेष क्रम से बनाकर पिरैमिड निर्मित किया जा सकता है। जनसांख्यकीय आँकड़ों के संदर्भ में पुरुष और स्त्री जनसंख्या को उनके आयु-वर्ग के अनुसार अलग-अलग स्तम्भ या दंड से दिखाया जा सकता है। ये दंड मध्य में खींची गई एक ऊर्ध्वाधर रेखा के दोनों ओर एक उपयुक्त चुनी गई मापनी के अनुसार प्रत्येक आयु-वर्ग में स्त्री और पुरुष जनसंख्या को प्रदर्शित करते हैं। इन दंडों को इस क्रम से बनाया जाता है कि जिसमें सबसे छोटी आयु-वर्ग की जनसंख्या आधार पर आती है और सबसे बड़ी आयु-वर्ग की जनसंख्या पिरैमिड के शीर्ष पर आती है। पिरैमिड का आकार विभिन्न देशों अथवा एक ही देश में अलग-अलग प्रदेशों की जनसांख्यकीय संरचना के अनुसार, अलग-अलग होगा। जनसांख्यकीय आँकड़ों को पिरैमिड में प्रदर्शित करने के लिए हम भारत के विभिन्न प्रदेशों को राज्य के रूप में अथवा किसी अन्य प्रकार के क्षेत्र के रूप में चुन सकते हैं। आप देखेंगे कि मध्य की लम्ब रेखा से
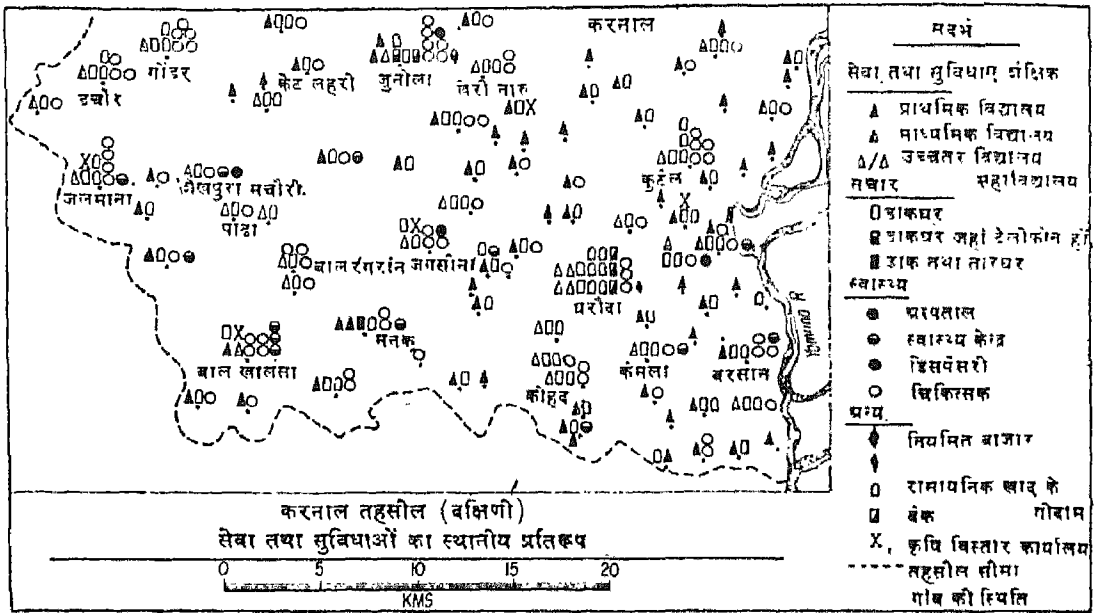
चित्र—26 A
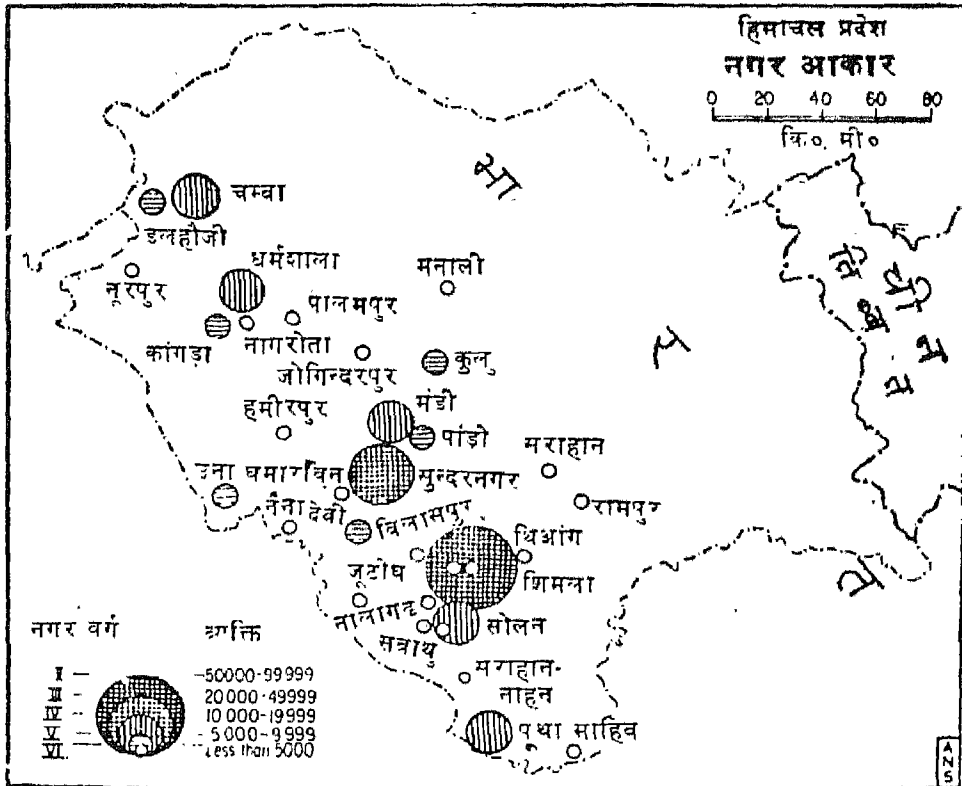
चित्र—26 B अनुपातिक वृत्त—नगर-आकार

ड़ा या छोटा होना उनके द्वारा प्रदर्शित
की पुरुष या स्त्री जनसंख्या के कम या
ण होता है (चित्र 28)।

कार वर्षा के वितरण और विभिन्न
अलग-अलग होने के अध्ययन की भाँति
अन्य तत्वों की विशेष अवधि में विविध-
ययन करना होता है। इसमें हम यह
के बंटन एक समान है अथवा बदल रहा
के मापन में किसी केन्द्रीय मान से अन्य
की जाती है। जिस चित्र में केन्द्रीय
। से अन्य मानों के विवरण की जानकारी
रिक्षेपण आरेख कहते हैं। (चित्र 29)
रेख का एक और लाभ यह है कि इसकी
को झुंडों के अनुसार वर्गीकृत किया जा
कैसी क्रमिक आँकड़ों के बीच अन्तरालों
सकते हैं। (विस्तृत विवरण के लिए
)

विधियाँ

ाँकड़ों को आरेखों में रूपान्तरित करने
धियों का वर्णन जो पिछले पृष्ठों में दिया
मुख्य उद्देश्य आपको भौगोलिक अध्ययन
ड़ों का विश्लेषण करना सिखाना है। इस
रेखों को मानचित्र पर भी बनाया जा
त्र में उनका प्रदर्शित किया जाना आँकड़ों
र्भर करता है। जब सांख्यकीय आरेखों
प्रदर्शित कर दिया जाता है तो उनके
ोलिक तत्व के प्रतिरूपों और विवधताओं
हुत आसान हो जाता है। यह सुविधा
गीबद्ध करने में नहीं मिल पाती। प्राय:
णियाँ और आरेख एक दूसरे के पूरक होते
नक तत्व ऐसे हैं जिनका भू-सतह पर वित-
श्चने के लिए उन्हें मानचित्रों में प्रदर्शित
होता है। उदाहरणार्थ, भू-आकारों का
चित्र पर माध्य समुद्रतल से ऊपर अनेक
गों को अंकित करने की अपेक्षा समोच्च
धिक शुद्ध एवं प्रभावी होता है। इसी प्रकार
मानचित्रण विधियों द्वारा वर्षा, फसल
जनसख्या आदि के क्षेत्रीय विवरण को मानचित्र पर
दिखाने से उसका विश्लेषण अधिक अच्छी तरह समझा जा
सकता है। अत: सांख्यिकीय आँकड़ों को मानचित्र पर
प्रदर्शित करने की कुछ विधियों का जाननाभी आवश्यक
है। आप देखेंगे कि आंकड़ों को मानचित्र पर दिखाने की
कुछ विधियाँ एक सी हैं। उदाहरणार्थ समोच्च रेखा या
सममानरेखा-मान-चित्र द्वारा उच्चावच, वर्षा, जनसंख्या
घनत्व, उपज-उत्पादन आदि के आँकड़ों में प्रदर्शित किया
जाता है।

बिन्दु मानचित्र

जनसंख्या, फसलों आदि के आँकड़ों को मानचित्र पर
दिखाने की यह सामान्य विधि है। इसमें बिन्दुओं द्वारा इन
भौगोलिक तत्वों के निरपेक्ष मानों को बिना उन्हें प्रतिशत
अथवा अनुपात में बदले दिखाया जाता है (चित्र 30)।
बिन्दु का आकार और उसका पैमाना मानचित्र की मापनी
पर निर्भर करता है। बिन्दुओं द्वारा वितरण प्रतिरूपों को
भूमि पर वास्तविक वितरण के ही समान मानचित्र पर
मापनी के अनुसार अधिक प्रभावी एवं शुद्ध रूप में दिखाया
जा सकना सम्भव होता है। यह उस समय विशेषतया ठीक
होता है जब मानचित्र का पैमाना काफी बड़ा होता है, अर्थात
परगना या तहसील या जिले के मानचित्र पर कृषीय भूमि
का वितरण दिखाना। ऐसी स्थिति में वितरण प्रतिरूपों
को प्रभावित करने वाले भौगोलिक कारकों को भी सम्मि-
लित किया जाता है। उदाहरणार्थ प्रत्यावर्ती घाटियों
और पहाड़ियों वाले ऊबड़-खाबड़ क्षेत्र में अपेक्षाकृत सम-
तल भाग को खेती की जाने वाली सीमाओं के मानचित्र
पर अलग-अलग किया जा सकता है या उस क्षेत्र में स्थला-
कृतिक मानचित्र पर उपयुक्त समोच्च रेखा द्वारा निर्धारित
कर सकते हैं। बिन्दुओं के लिए उपयुक्त पैमाना चुना
जाता है, जैसे 1 बिन्दु=10 एकड़ यदि कृष्य क्षेत्र
दिखाना है या 1 बिन्दु=10 व्यक्ति यदि जनसंख्या
दिखाना है आदि। इस विधि में बिन्दुओं के आधे या
आंशिक भाग नहीं दिखाए जाते। विशेष प्रयोजनों के लिए
छोटी मापनी के मानचित्रों को भी बिन्दु-विधि में प्रयोग
कर सकते हैं। परन्तु इसमें सबसे बड़ी कमी यह होती है
कि कुछ स्थानों पर वास्तविक लक्षण होने पर भी बिन्दु
नहीं दिखाए जा सकते। इस पर भी पटसन और कहवा
जैसी फसलें जो प्राय: सीमित क्षेत्रों में केन्द्रित होती हैं,
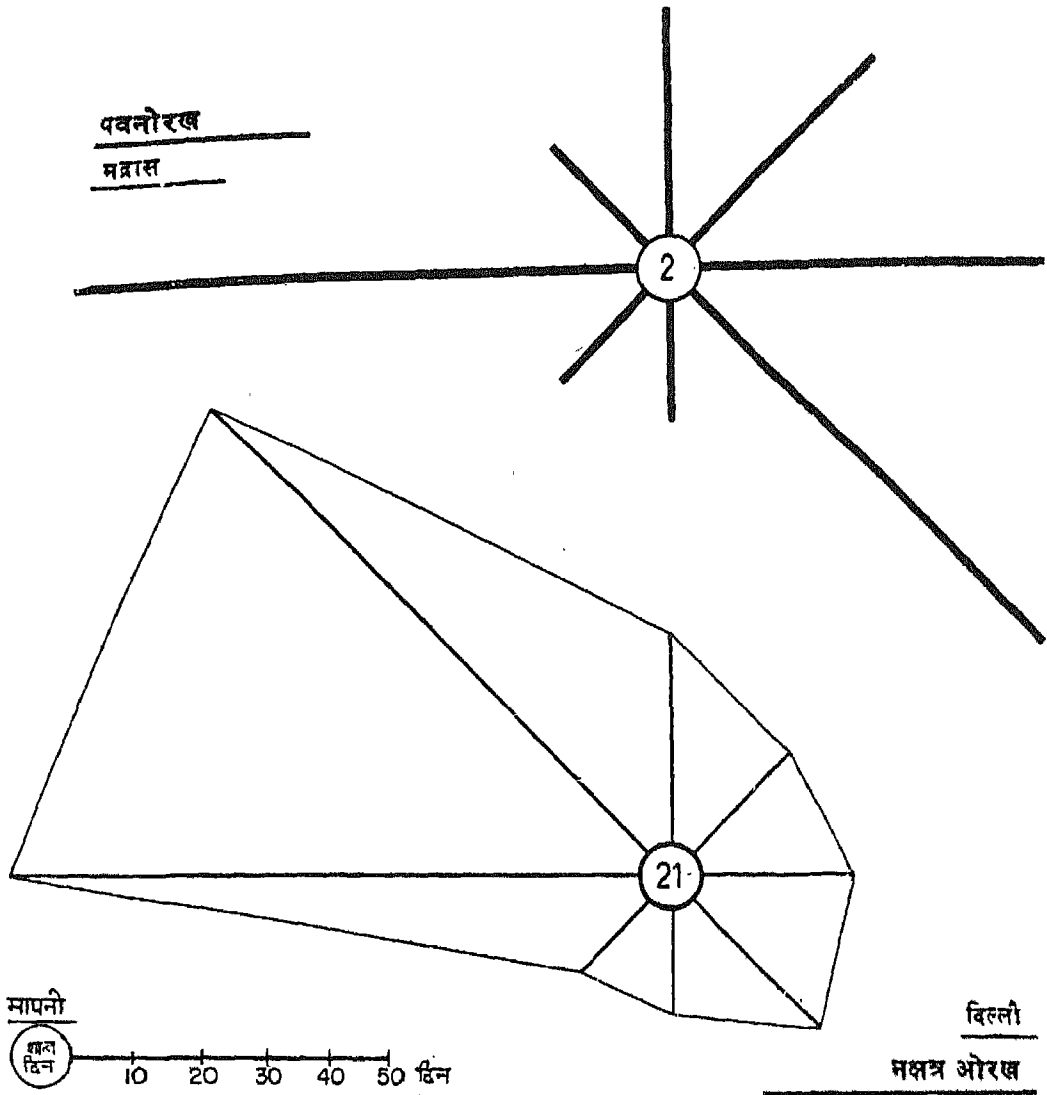
चित्र—27 पवनोरख एवं तारा-आरेख

उन्हें बिन्दु विधि द्वारा दिखाने से उसी उद्देश्य की पूर्ति होती है जो उन फसलों के वर्णमात्री मानचित्र से होती है।

बिन्दु मानचित्र चाहे बड़ी मापनी के मानचित्र पर बनाए जाने वाले लक्षणों के अनुसार दो या अधिक रंगों से दिखाया जाए तो वे अधिक प्रभावी या लाभप्रद हो सकते हैं। उदाहरणार्थ ग्रामीण और नगरीय जनसंख्या अथवा फसलों के क्षेत्र को अलग-अलग फसलों के अंतर्गत दिखाने के लिए विभिन्न रंगों के बिन्दु प्रयोग किए जा सकते हैं।
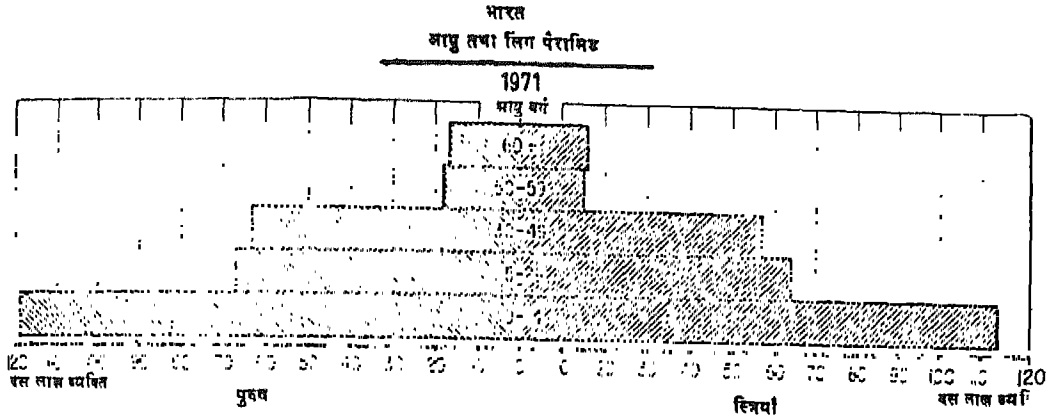
चित्र—28 आयु-लिंग पिरैमिड—भारत की जनसंख्या (1971)

सममान रेखा—मानचित्र

सममान-रेखाएँ : वह काल्पनिक रेखाएँ हैं जो मानचित्र पर समान मानों के स्थानों को मिलाती है। ये रेखाएँ उच्चावच मानचित्र पर बनी समोच्च रेखाओं से मिलती-जुलती होती है। इसीलिये इन्हें सममान रेखाओं, समान रेखाओं या समोच्च रेखाओं के नाम से पुकारा जाता है। अतः इस तथ्य को ध्यान में रखकर ही सममान रेखा-मानचित्र बनाया जाता है (चित्र 31)। यदि आँकड़े प्रशासनिक इकाइयों अर्थात जिले, तहसील, परगना या ग्राम के आधार पर उपलब्ध हैं, तो उन इकाइयों की सीमाओं को मानचित्र पर अंकित करके प्रत्येक इकाई का आँकड़ा उसके मध्य में लिख दिया जाता है। फिर सभी प्रेक्षणों के बारम्बारता बंटन के आधार पर उपयुक्त वर्ग अन्तराल चुने जाते हैं और समान मान वाले स्थानों को निष्कोण वक्र से मिलाया जाता है। संलग्न मानचित्र में सभी मौसम केन्द्रों के आंकड़े अंकित किए गए हैं और उनकी मदद से वर्षा वितरण का सममान रेखा-मानचित्र बनाया गया है। निम्न, मध्यम, उच्च आदि वर्ग अन्तराल चुने गए हैं (अध्याय 7 देखिए) वर्षा की विविधता को स्पष्ट रूप से अलग-अलग करने के लिए रेखाओं की आभाओं का प्रयोग किया गया है। गहरी आभाएँ ऊँचे मानों को प्रदर्शित करती है। आभाओं के स्थान पर रंगों का भी प्रयोग हो सकता है। आगे लिखित लक्षणों को भी मानचित्र पर प्रदर्शित करने के लिए यह विधि अपनाई जाती है :
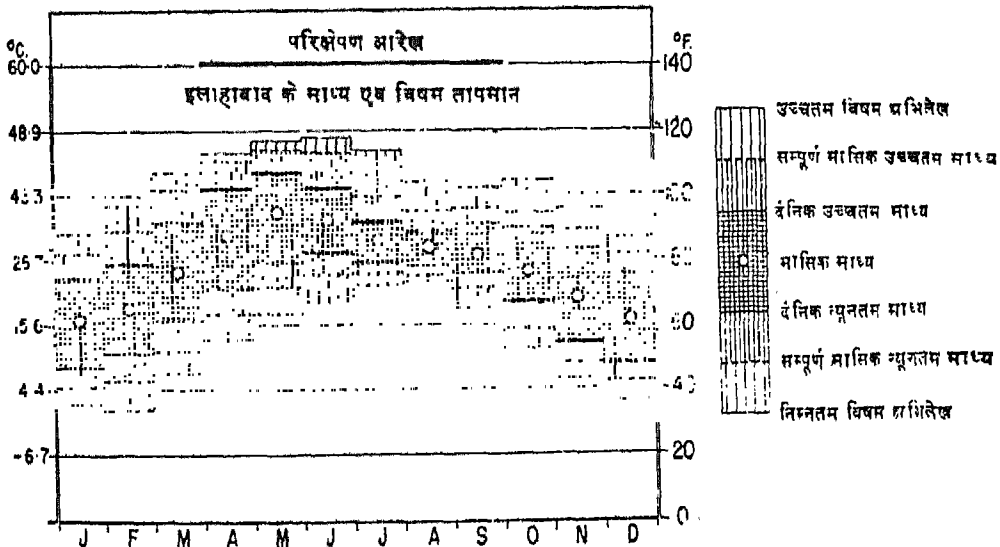
चित्र—29 परिक्षेपण आरेख

1. स्थल रूप
2. जनसंख्या घनत्व, वृद्धि-दर आदि।
3. फसलों का वितरण

यहाँ इस बात का अवश्य ध्यान रखना चाहिए कि आँकड़ों को मानचित्र पर प्रदर्शित करने से पूर्व उन्हें अनुपात, प्रतिशत या सकेन्द्रण के सूचक के रूप में अवश्य परिवर्तित कर लिया जाए। उदाहरणार्थ भारत का प्रति वर्ग किलोमीटर जनसंख्या घनत्व का मानचित्र बनाने के लिए सर्वप्रथम प्रत्येक जिले की जनसंख्या में उस जिले के कुल क्षेत्रफल का भाग कर देते हैं। इसी प्रकार प्रत्येक उपज के अन्तर्गत क्षेत्रफल प्रदर्शित करने के लिए उसे पहले सम्पूर्ण शस्य क्षेत्र के प्रतिशत में निकाल लेते हैं।

सममानरेखीय विधि द्वारा मानचित्र बनाने का सबसे अच्छा लाभ यह है कि इसके द्वारा वितरण प्रतिरूपों और विविधताओं का निरूपण यथार्थ रूप में होता है। सममान रेखाओं की मदद से विभिन्न वर्ग अन्तरालों के प्रतिरूपों की विभिन्नताओं को, चाहे वे आकस्मिक हों अथवा मंद अलग-अलग करना आसान है।

वर्णमात्री मानचित्र

इस विधि में जिन प्रशासनिक इकाइयों के आँकड़े उपलब्ध होते हैं उनकी सीमाएँ मानचित्र पर पहले उतारी जाती है। फिर (चित्र 32) प्रत्येक प्रशासनिक इकाई के भीतर उनकी जनसंख्या या फसलों के अनुपातों अथवा प्रतिशत आँकड़ों को पेन्सिल से लिख लिया जाता है। कभी-कभी इसके बजाय अनुपात या प्रतिशत के मानों को उनके बढ़ते अथवा घटते हुए क्रम से लिख लिया जाता है और फिर उनके बीच बारम्बारता बंटन का अध्ययन कर उपयुक्त वर्ग अन्तरालों को चुना जाता है (अध्याय 7 देखिए)। वर्ग अन्तरालों को A B C D आदि वर्गों में अंकित कर देते हैं। फिर इन वर्गों के मानों के संदर्भ में प्रत्येक प्रशासनिक इकाई के मान को आँका जाता है और उससे संगति रखने वाला वर्ग अंतराल का अक्षर मानचित्र पर बनी उस प्रशासनिक इकाई के भीतर लिख दिया जाता है। इस प्रकार मानचित्र पर प्रत्येक प्रशासनिक इकाई के भीतर उससे सम्बन्धित वर्ग अन्तराल का अक्षर अंकित कर देते हैं। फिर समान अक्षर वाले भागों को एक-सी रेखीय आभाओं या रंगों से भर देते हैं। इससे मानचित्र पर दिखाए लक्षणों में समानताएँ एवं विविधताएँ स्पष्ट रूप से उभर आती हैं। एक-सी मानों वाली प्रशासनिक इकाइयाँ मानचित्र पर एक सजातीय वर्ग की तरह दिखाई देंगी। ऐसे सजातीय वर्ग में यदि प्रशासनिक इकाइयों के स्वरूप को बनाए रखना आवश्यक हो तो उनकी सीमाओं को कायम रखा जाता है अन्यथा उन्हें मिटा देते हैं।

वर्णमात्री विधि के प्रयोग में लाभ के साथ-साथ कुछ कमियाँ भी हैं। प्रशासनिक इकाइयों की सीमाएँ कायम रखने से प्रादेशिक स्तर पर आँकड़ों का मिलाना आसान हो जाता है। समानमानों वाली प्रशासनिक इकाइयाँ मानचित्र पर सवर्ण प्रदेशों के रूप में ऊपर उभर आती हैं। अत: प्रशासकों तथा आयोजकों द्वारा उनके प्रतिरूपों की व्याख्या करना सरल होता है। परन्तु इस विधि में कमियाँ मुख्यत: प्रशासनिक इकाइयों की विभिन्न आकृति और आकार के कारण उपस्थित होती हैं। प्रशासनिक भूमि के वास्तविक वितरण प्रतिरूपों के अनुरूप नहीं होते। उदाहरणार्थ, किसी बड़े जिले की सीमाओं के भीतर दो बिल्कुल भिन्न प्रकार के भाग हो सकते हैं।

प्रवाह मानचित्र

प्रवाह मानचित्रों से गति का बोध होता है, अत: उन्हें 'गतिशील' मानचित्र कहा जाता है (चित्र 33)। इन मानचित्रों को लोगों तथा वस्तुओं के आवागमन के आँकड़ों के प्रयोग द्वारा बनाया जाता है। ऐसे मानचित्र के दो प्रमुख लक्षण हैं—पहला आवागमन दिशा और दूसरा घूमने या यात्रा करने वाले लोगों की संख्या या ढोए जाने वाले माल की यात्रा। प्रवाह मानचित्र बनाने के लिए निम्नलिखित विधि अपनाई जाती है :

(क) पहले किसी चुने हुए क्षेत्र का मानचित्र बनाया जाता है और उसमें मुख्य-मुख्य स्थानों को अंकित करने के साथ प्रमुख परिवहन मार्ग जैसे रेलमार्ग और सड़कें दिखाई जाती हैं।

(ख) फिर लोगों अथवा सामान के एक स्थान पर लाए या ले जाने से सम्बन्धित आँकड़े एकत्रित किये जाते हैं।

(ग) इसके बाद एक उपयुक्त मापनी चुनकर मापनी और उसके अनुसार लोगों की संख्या या सामान की मात्रा को मोटी रेखा अथवा रिबन द्वारा प्रदर्शित किया जाता है। रेखा की मोटाई लोगों की संख्या या सामान की मात्रा के अनुपात में होती है।

प्रत्येक दिशा में आवागमन दिखाने के लिए परिवहन मार्गों के दोनों ओर उपयुक्त मोटाई के रिबन बना दिए
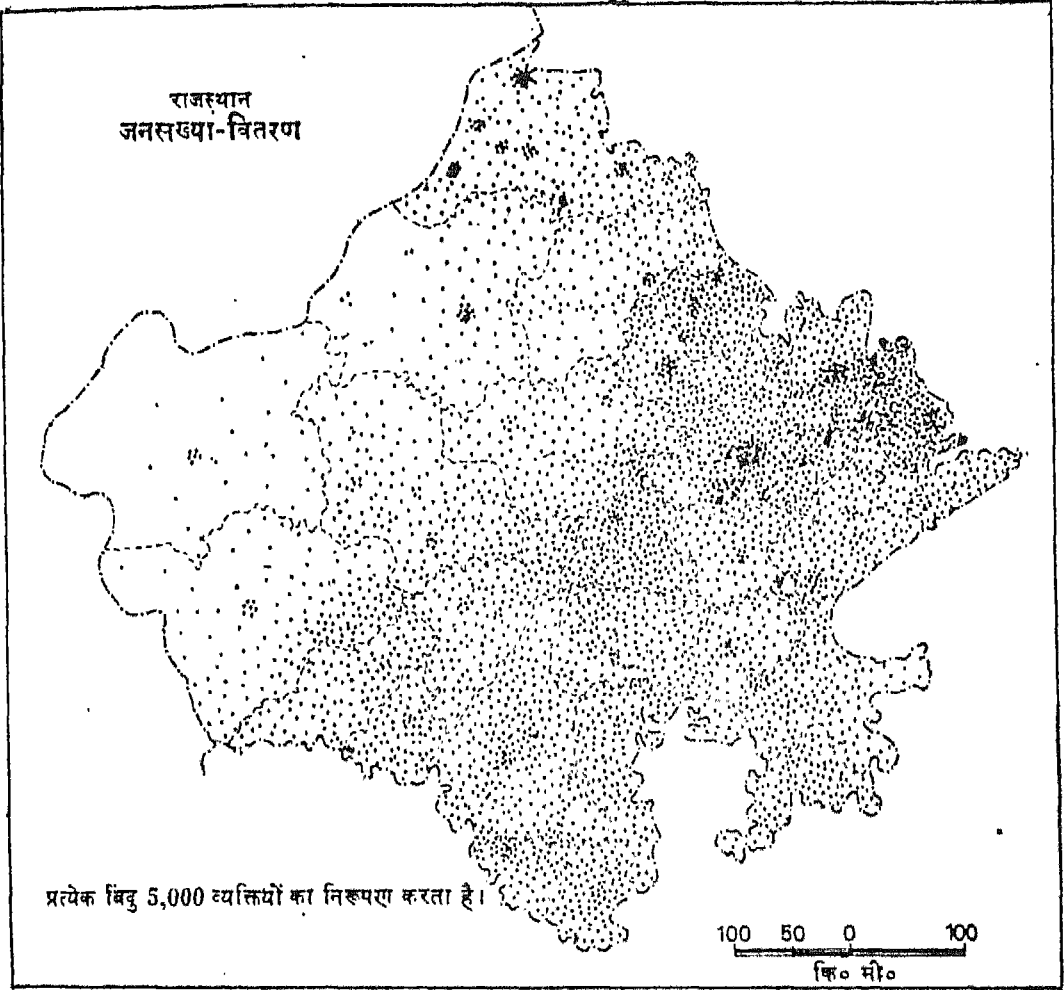
चित्र —30 बिन्दु मानचित्र (जनसंख्या का वितरण)

जाते है। दो अलग-अलग मोटाई के रिबनों को स्पष्ट करने के लिए उन्हें विभिन्न रेखीय आभाओं अथवा रंगों से भर दिया जाता है। इसी प्रकार जिन स्थानों पर प्रवाह-रिबन विभिन्न दिशाओं से आकर मिलते हैं वहाँ रिबनों की मोटाई उस स्थानों के महत्व को स्पष्ट करती है। इन स्थानों को जो विभिन्न दिशाओं से आने वाले लोगों और वस्तुओं के मिलन बिन्दु होते है. *मार्ग-संगम* नगर कहलाते है।

चित्र 33 में आप देखेंगे कि करनाल एक महत्त्वपूर्ण मार्ग-संगम नगर है। जो सड़क करनाल को पानीपत और आगे दक्षिण में दिल्ली से मिलती है, उस पर आवागमन की तीव्रता सबसे अधिक है। प्रवाह मान-चित्र का एक और उपयोग यह है कि उसके द्वारा विभिन्न स्थानों अथवा मार्ग-संगम नगरों से बाहर की ओर जाने वाले रिबनों की मोटाई का सूक्ष्म रूप से अध्ययन किया जाता है। रिबनों की मोटाई में जहाँ कहीं भी अचानक
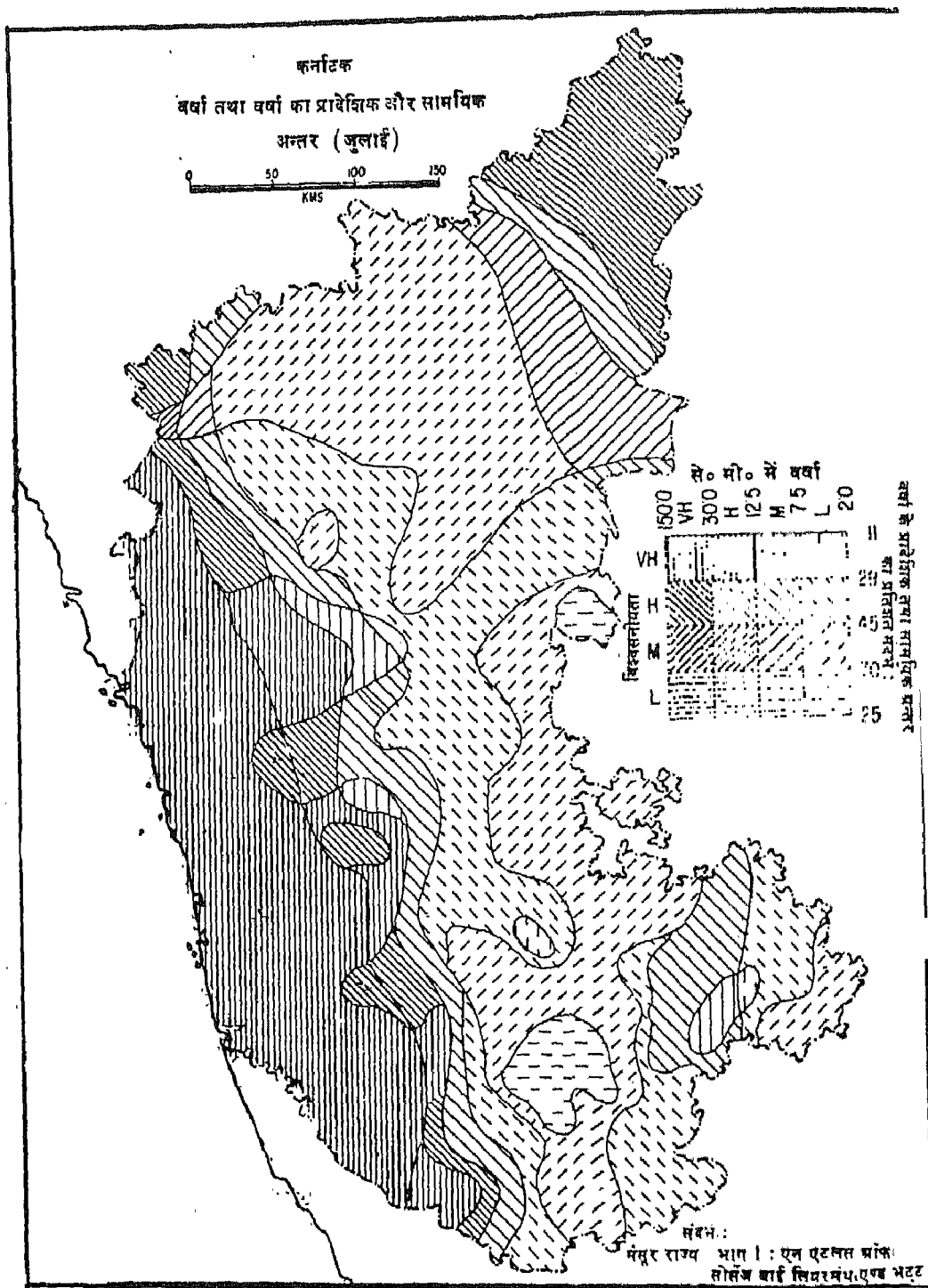
चित्र—31 सममान रेखा-मानचित्र

परिवर्तन आता है, उसे चारों तरफ अंकित कर लेते हैं। प्राय: कुछ दूरी चलने के बाद अन्य प्रमुख मार्ग-संगम नगर के निकट जहाँ और वस्तुओं का आवागमन बढ़ने लगता है, रिबन की मोटाई भी धीरे-धीरे बढ़ने लगती है। इस

संदर्भ : माइक्रो लेवल प्लानिंग बाई भट्ट एल० एम०

चित्र—32 वर्णमात्री मानचित्र
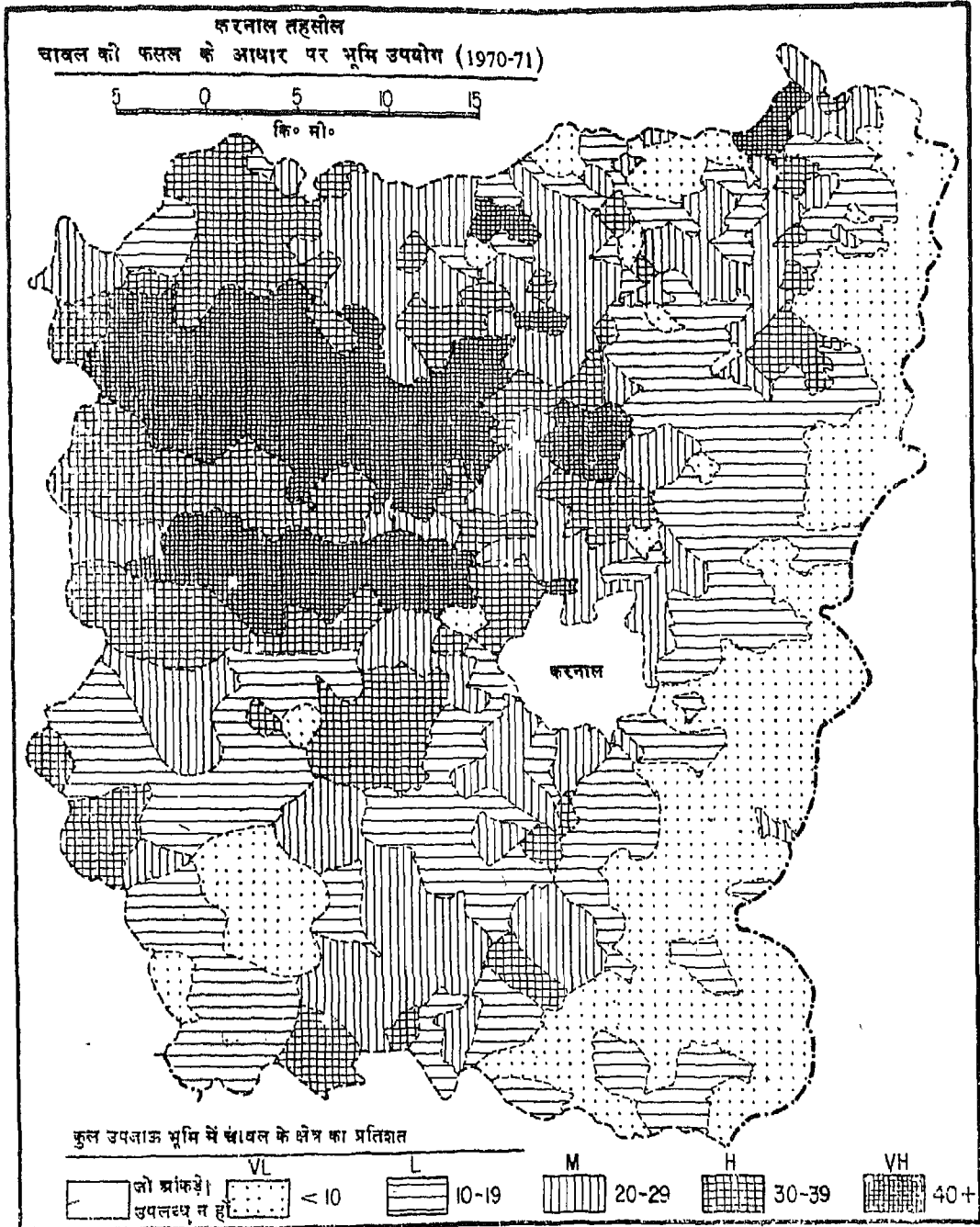
प्रकार अध्ययन किए जाने वाले किसी क्षेत्र को कई मार्ग-संगम केन्द्रों और उनके प्रभाव क्षेत्रों अर्थात् *मार्ग-संगम केन्द्रों के प्रदेशों* में बाँटा जाता है।

वस्तु प्रवाह मानचित्रों में प्रवाह-रिबनों को वस्तुओं की श्रेणी और उनकी मात्रा के अनुसार उपविभागों में बाँटा जाता है। इस विषय पर भी अध्याय 6 में क्षेत्रीय अध्ययन के अन्तर्गत चर्चा की गई है।

भूमि उपयोग, जनसंख्या आदि आँकड़ों के विपरीत लोगों तथा वस्तुओं के आवागमन से सम्बन्धित आँकड़े कठिनाई से प्राप्त होते हैं। दूसरे प्रवाह प्रतिरूपों का
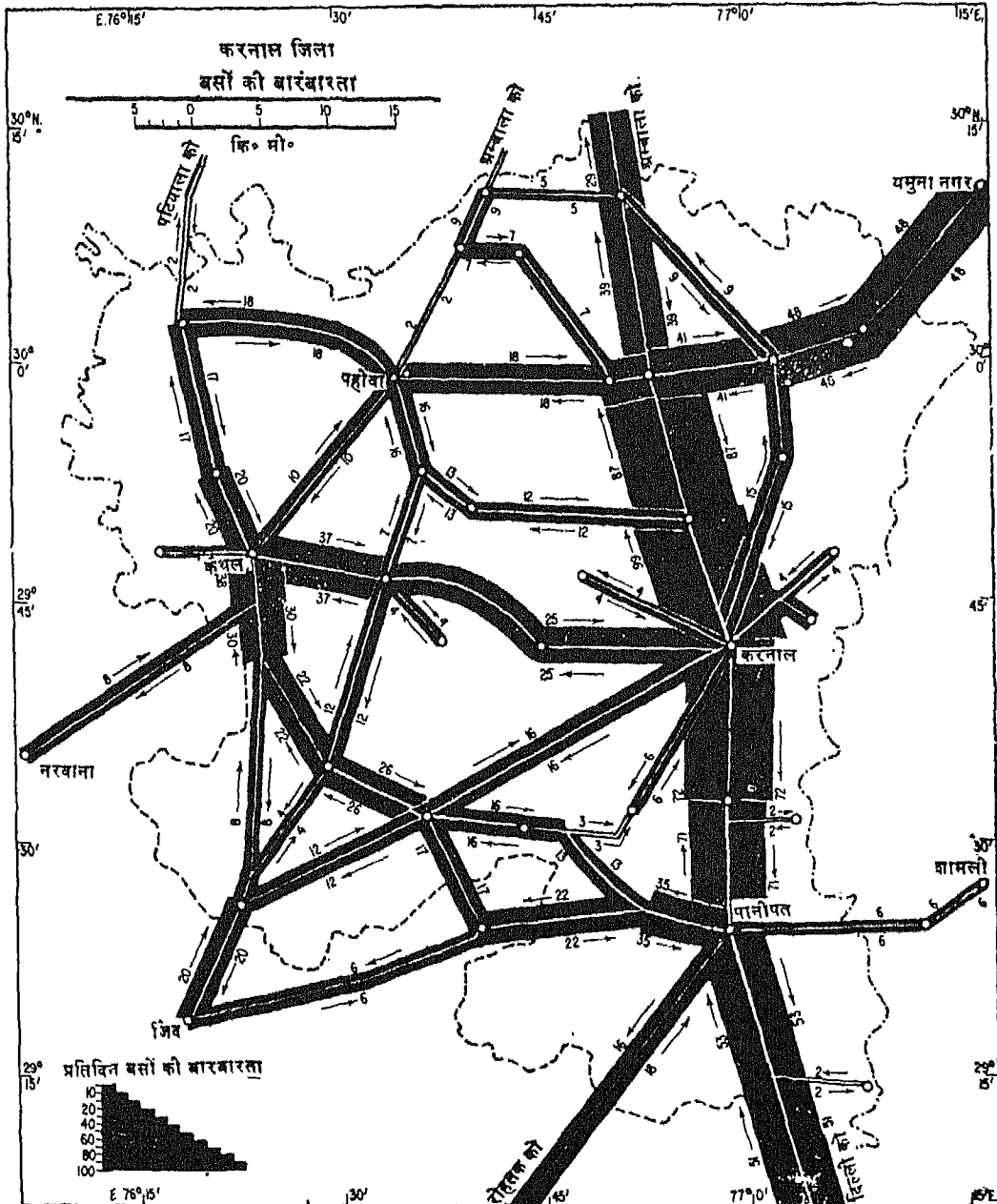
चित्र—33 प्रवाह मानचित्र
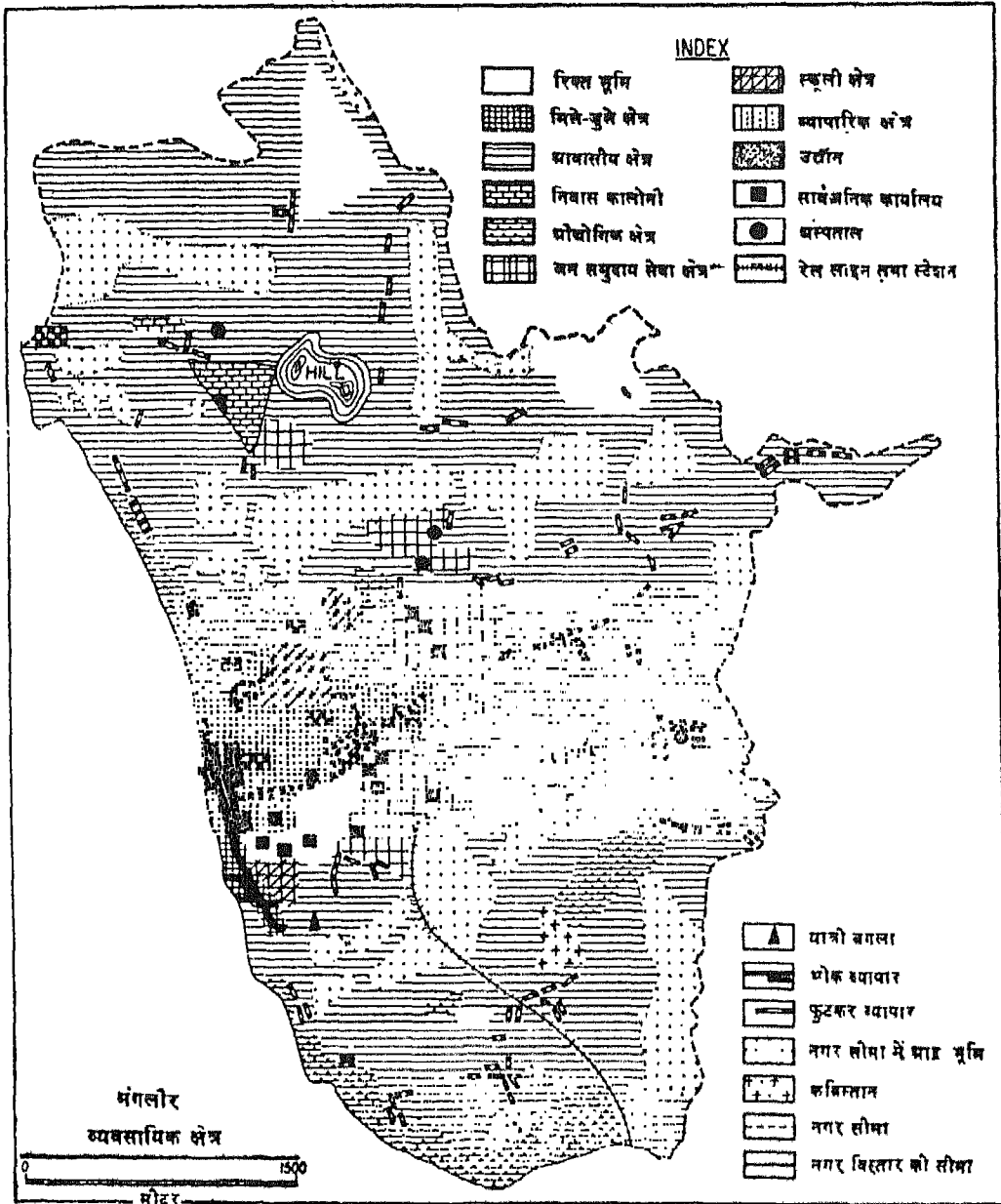
चित्र—34 रंगारेखी मानचित्र

अध्ययन स्वयं ही भूगोल का एक विशिष्ट एवं नवीन विषय है। लोगों तथा वस्तुओं के आवागमन के वास्तविक आँकड़े कम मिलने के कारण आप प्रवाह मानचित्र बनाने के लिए बसों और रेलों की समय सारणियों की मदद से बसों और रेलगाड़ियों की बारम्बारता के आँकड़ों का प्रयोग कर सकते हैं।

रंगारेखी मानचित्र

वितरण प्रतिरूपों और आवास स्वरूपों को मानचित्र पर दिखाने के लिए रंगारेखी मानचित्र बनाए जाते हैं (चित्र 34)। ये प्राय: अत्यन्त सामान्यीकृत मानचित्र होते हैं जैसा कि किसी नगर या ग्राम के मानचित्र में विभिन्न क्षेत्रों, भूमि उपयोग अथवा कार्य स्थलों जैसे व्यापारिक और विविध आवासीय क्षेत्र, पार्क और क्रीड़ा स्थल, औद्योगिक क्षेत्र, विद्यालय, अस्पताल आदि के अनुसार अलग-अलग रंगों या आभाओं से दिखाते हैं। गाँव के मानचित्र में लोगों के आवासों या मकानों को उनके विभिन्न समुदायों या धन्धों के अनुसार अलग-अलग किया जा सकता है। यह एक प्रकार का गुणात्मक मानचित्र होता है जिसमें प्रतीकों, रेखीय आभाओं या रंगों का प्रयोग साथ-साथ किया जाता है। रंगारेखीय विधि का एक और उपयोग यह है कि इसके द्वारा विभिन्न कालों या समयों में बस्ती अथवा नगर के प्रसार का अध्ययन किया जा सकता है।

आंकित प्रतीक मानचित्र

सांख्यिकीय आँकड़ों को आरेखों के रूप में निरूपित करने के विषय पर पिछले पृष्ठों में चर्चा की जा चुकी है। जहाँ आँकड़े स्थिति अथवा क्षेत्रों के अनुसार उपलब्ध होते हैं, तो उन्हें आरेखों के रूप में मानचित्र पर निरूपित किया जाता है इससे वितरण प्रतिरूपों तथा उसकी विभिन्नता को समझने में आसानी होती है। इस प्रकार के मानचित्रों के अन्तर्गत वर्षा की प्रादेशिक विविधता, उद्योगों के वितरण प्रतिरूप, शिक्षा, स्वास्थ्य, बैंक, संचार और मनोरंजन की सुविधाओं आदि को दिखाने वाले मानचित्र हो सकते हैं।

अध्याय 4

मानचित्रों की व्याख्या

प्रस्तावना :

भूगोलवेत्ता का एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण साधन मानचित्र है जिसकी मदद से वह भूपृष्ठ के विविध लक्षणों के वितरण की व्याख्या करता है। मानचित्र *सूचनापूर्ण विश्लेषणात्मक* और *योजना सम्बन्धी* मानचित्रों की भाँति *निर्देशात्मक* हो सकते हैं। अतः मानचित्रों के बनाने के उद्देश्य अलग-अलग होते हैं और इसीलिए हम उनका प्रयोग विभिन्न उद्देश्यों की पूर्ति के लिए करते हैं। आप में से बहुतों ने पर्वतीय नगरों, ऐतिहासिक स्थानों और धार्मिक स्थानों एवं बड़े-बड़े नगरों तथा गत बीस वर्षों के आर्थिक विकास के परिणामस्वरूप विकसित हुए कुछ नवीन औद्योगिक नगरों के पर्यटक मानचित्र अवश्य देखे होंगे। पर्यटक मानचित्रों का प्रयोग बहुत सीमित होता है और इनके विपरीत स्थलाकृतिक मानचित्रों से हमें अनेक प्रकार की सूचनाएँ मिलती हैं, जैसे भौतिक लक्षण, प्राकृतिक वनस्पति, ग्रामों तथा नगरों का वितरण, महामार्ग तथा रेलमार्ग और सेवाएँ जैसे, विश्रामगृह, बाजार, डाकघर, मंदिर, मस्जिद तथा गिरजाघर आदि। इसीलिए मानचित्रों को संसार की वास्तविक परिस्थितियों का प्रतिरूप माना जाता है। लेकिन आप जानते हैं कि मानचित्र कई कारणों से वास्तविकता का ठीक-ठीक निरूपण नहीं कर पाते। इसमें समय भी बहुत बड़ा कारक है क्योंकि भूपृष्ठ के कई लक्षण, विशेषतया मानवकृत लक्षण द्रुत गति से बदलते रहते हैं और मानचित्र उनके अनुसार शीघ्रता से नहीं बदल पाते। इसके अतिरिक्त मापनी भी एक समस्या है। आपने मापनी के अध्याय में पढ़ा होगा कि छोटी मापनी पर बने मानचित्रों में कुछ न कुछ जानकारी छोड़नी पड़ती है।

मानचित्र : मानचित्रों का वर्गीकरण कई प्रकार से किया जाता है। मापनी के आधार पर मानचित्र तीन प्रकार के होते हैं : *(1) भूकर मानचित्र, (2) स्थलाकृतिक मानचित्र और (3) एटलस तथा दीवारी मानचित्र*

1. **भूकर मानचित्र :** ये मानचित्र पूर्णतया भूसम्पत्ति से सम्बन्धित होते हैं, अर्थात् ये किसी देश की लेखा-पुस्तिका के रूप में होते हैं जिनका प्रयोग भूसम्पत्ति की वैधानिक व्याख्या करने के लिए और कर लगाने के लिए किया जाता है। व्यावहारिक रूप में उनमें उन मानचित्रों को सम्मिलित किया जाता है, जो काफी बड़े पैमाने पर तैयार किए जाते हैं। इनमें प्रत्येक खेत की लम्बाई-चौड़ाई यथार्थ रूप में प्रकट की जाती है। उदाहरण के लिए वे मानचित्र जो 1 : 2500 या 25 इंच-मानचित्र के पैमाने पर खींचे गए हैं, अर्थात् जिनमें मानचित्र पर का 25 इंच भूमि पर के 1 मील के बराबर होता है, वे भूकर मानचित्र कहे जाते हैं। भूकर मानचित्रों का उपयोग किसी गाँव अथवा नगर के भूमि-उपयोग के मानचित्र बनाने में होता है।

2. **स्थलाकृतिक मानचित्र :** ये मानचित्र एक ओर साधारण मानचित्र तथा छोटे पैमाने पर बने मानचित्र तथा दूसरी ओर खाका या भूकर मानचित्र के बीच के होते हैं। वे मुख्यतया भूमि के मापन या सर्वेक्षण पर आधारित होते हैं और उनकी मापनी इतनी बड़ी होती है, कि जिसके कारण उनमें सड़कें, नगरों का का, समोच्च रेखाएँ तथा बहुत से अन्य ब्यौरे दिखाना आसान होता है। परन्तु इन मानचित्रों पर प्रत्येक खेत या भूखंड की सीमाएँ नहीं दिखाई जातीं। स्थलाकृतिक मानचित्र प्रायः धरातलीय लक्षण जैसे, जंगल, नदियाँ, झीलें तथा मनुष्य द्वारा निर्मित या सांस्कृतिक लक्षण जैसे, सड़कें, रेलें, नहरें तथा बस्तियाँ आदि को प्रदर्शित करते हैं।

स्थलाकृतिक मानचित्र को सामान्यतः 'टोपोशीट' कहा जाता है और इसकी मापनी साधारणतया 1 : 50,000,

1 : 62, 500, 1 : 63,360 या 1 : 100,000 होती है। भारत में भारतीय सर्वेक्षण विभाग देश के विभिन्न भागों के टोपोशीट अलग-अलग मापनी पर तैयार करता है।

3. **एटलस तथा दीवारी मानचित्र** : मापनी की दृष्टि से यदि एक ओर भूकर या बड़े पैमाने के मानचित्रों का वर्ग आता है तो दूसरी ओर एटलस और दीवारी मानचित्र अर्थात छोटी मापनी के मानचित्रों का वर्ग है। एटलस और दीवारी मानचित्रों द्वारा एक ही दृष्टि में काफी बड़े क्षेत्र का ज्ञान हो जाता है और वे एक प्रदेश का विहंगम दृश्य उपस्थित करते हैं। अतः उनसे टोपोशीट के समान विस्तृत विवरण प्राप्त नहीं होता।

फिर भी *एटलस मानचित्र* संसार के विभिन्न भागों की भौगोलिक सूचनाओं के बृहत कोष का काम करते हैं, विशेषकर उन लोगों के लिए जो उनकी भाषा समझते हैं और जानते हैं कि उन मानचित्रों को कहाँ, कब और कैसे प्रयोग किया जाय। यदि उन्हें ठीक से पढ़ा जाय तो उनसे बहुत बड़ी मात्रा में सामान्यीकृत सूचनाएँ प्राप्त होंगी जिनका सम्बन्ध किसी बहुत बड़े क्षेत्र या भूखंड की स्थिति, विस्तार, आकृति, उच्चावच, वनस्पति, जलवायु, उपज, खनिज, उद्योग और जनसंख्या-वितरण से होगा। एटलस मानचित्रों के क्रमिक उपयोग से मुख्य आर्थिक क्रियाओं तथा समाचारपत्रों में प्रकाशित प्रतिदिन की राजनीतिक घटनाओं को समझने में आसानी होती है।

दीवारी मानचित्र : ये वास्तव में एटलस मानचित्र होते हैं, जिन्हें दूर से दिखाने के विचार से बड़ा बनाया जाता है। इस दृष्टि से वे एटलस मानचित्रों की तुलना में बड़ी मापनी के मानचित्र कहे जा सकते हैं। फिर भी वे प्रायः इतने अधिक ब्यौरे प्रकट नहीं करते जितने छोटी मापनी के एटलस मानचित्रों में मिलते हैं। ये मानचित्र बड़े जनसमूह तथा कक्षाओं में छात्रों के उपयोग के लिए विशेषरूप से लाभदायक हैं, क्योंकि उन्हें दीवार पर टाँग कर दूर से पढ़ा जा सकता है।

मानचित्रों का दूसरा वर्गीकरण उनके कार्यों के अनुसार होता है। उदाहरण के लिए एटलस मानचित्रों की कई किस्में होती हैं। इन मानचित्रों में उच्चावच, जलवायु, वनस्पति, जनसंख्या, परिवहन के साधन, भूमि-उपयोग के प्रतिरूप और राजनीतिक विभाग दिखाए जा सकते हैं। इनमें से मुख्य हैं : उच्चावच, जलवायु, जनसंख्या, भूमि-उपयोग, प्राकृतिक सम्पदा और आर्थिक क्रियाओं के मानचित्र।

उच्चावच मानचित्र : उच्चावच मानचित्रों से हमें धरातलीय लक्षणों अर्थात् स्थलरूपों जैसे, मैदानों, घाटियों, पठारों, कटकों तथा पर्वतों की जानकारी मिलती है। इनसे किसी प्रदेश के अपवाह-तंत्र का भी बोध होता है। मानचित्र पढ़ने का कुछ अभ्यास हो जाने के बाद दृश्यभूमि और उसकी ऊँचाई का मानचित्र बनाना सम्भव हो जाता है।

उच्चावच की जानकारी इन मानचित्रों द्वारा बड़ी सरलता से हो जाती है। इनकी मदद से मानवीय बस्तियों, सड़कों, बाँधों, नहरों आदि के निर्माण के लिए उपयुक्त स्थलों को ढूँढना आसान हो जाता है। हम इन मानचित्रों से कुछ अंश तक किसी प्रदेश की कृषि-क्षमता का भी अनुमान लगा सकते हैं। यह इस बात पर निर्भर करता है कि वह प्रदेश कितना पहाड़ी है अथवा मैदानी और उसके जल-साधन कैसे हैं।

जलवायु सम्बन्धी मानचित्र : जलवायु सम्बन्धी मानचित्र हमें तापमान, वायुदाब, वर्षा, वायु और आकाश की दशाओं के सम्बन्ध में सूचना देते हैं। वे हमको ऐसी सामान्यीकृत सूचना देते हैं जो एक निश्चित अवधि में एकत्रित किए गए आँकड़ों पर आधारित रहती है। संसार के विभिन्न भागों की जलवायु का ज्ञान हमें इन मानचित्रों द्वारा होता है।

इन मानचित्रों से प्राप्त सूचना प्राकृतिक वनस्पति तथा कृषि-उपज जानने में भी लाभदायक होती है। यह इस बात का भी ज्ञान देते हैं कि कोई प्रदेश मानव-वासस्थान के लिए उपयुक्त या अनुपयुक्त है।

जनसंख्या मानचित्र : इन मानचित्रों की सहायता से हमें दोनों, नगरीय तथा ग्रामीण जनसंख्या के वितरण और एक निश्चित अवधि में जनसंख्या की वृद्धि के बारे में जानकारी मिलती है। मानव और वातावरण के महत्त्वपूर्ण पहलुओं को अच्छी तरह समझने के लिए विभिन्न प्रकार के बहुत से जनसंख्या मानचित्र बनाए जाते हैं। इनमें से प्रमुख हैं जनसांख्यिकीय, व्यावसायिक, सामाजिक-सांस्कृतिक और देश के विभिन्न भागों का आर्थिक विकास से संबंधित मानचित्र। इन मानचित्रों को बनाने के लिए हमें विभिन्न प्रकार के सांख्यिकीय आँकड़ों की आवश्यकता पड़ती है और साथ ही उन्हें मानचित्र पर प्रदर्शित करने के लिए नई-नई विधियाँ अपनानी होती हैं।

राजनीतिक तथा प्रशासनिक मानचित्र : ऊपर बताए

गए मानचित्रों के अतिरिक्त भूगोलवेत्ता को राजनीतिक और प्रशासनिक इकाइयों को भी दिखाने के लिए आधार मानचित्र बनाने होते हैं। सांख्यिकीय आंकड़े प्रायः प्रशासनिक अथवा राजनीतिक इकाइयों में मिलते हैं, अतः उन आंकड़ों को राजनीतिक या प्रशासनिक मानचित्रों पर ही दिखाया जाता है। उदाहरणार्थ भारत में नीचे लिखे राजनीतिक-प्रशासनिक विभाग भारतीय सर्वेक्षण विभाग और केन्द्रीय तथा राज्य सरकारों द्वारा बनाए गए मानचित्रों में दिखाए जाते हैं।

राष्ट्र
राज्य तथा संघ राज्य क्षेत्र
जिला
तहसील (तालुका) या थाना या अंचल
परगना
गाँव

स्थलाकृतिक मानचित्रों या टोपोशीटों को पढ़ने के लिए मानचित्र को ठीक से लगाना, उसकी व्यावहारिक भाषा समझना, रूढ़ चिह्नों, प्रतीकों तथा मानचित्रों आदि का उपयोग विभिन्न प्रकार के भौतिक तथा सांस्कृतिक लक्षणों को दिखलाने में किया जाता है, को जानना आवश्यक होता है।

मानचित्र स्थापन : जब कोई व्यक्ति स्थानीय टोपोशीट का क्षेत्र में अध्ययन करता है तो उसके लिए यह आवश्यक हो जाता है कि वह उसे ठीक तरह से स्थापित करे अर्थात् मानचित्र का उत्तरी बिन्दु भौगोलिक उत्तर की दिशा में रहे। हम लोग सामान्यतः चुंबकीय कंपास (कुतुबनुमा) के प्रयोग द्वारा उत्तर दिशा मालूम करते हैं। परंतु यह ध्यान रखना जरूरी है कि कंपास से बताई गई उत्तर दिशा वास्तविक उत्तर या भौगोलिक उत्तर नहीं है, वरन् यह चुम्बकीय उत्तर होता है। जब हमें चुम्बकीय उत्तर दिशा ज्ञात हो जाती है, तो हम भौगोलिक उत्तर भी आसानी से काफी यथार्थ रूप में ज्ञात कर सकते है क्योंकि प्रत्येक स्थलाकृतिक मानचित्र पर चुम्बकीय उत्तर का दिक्पात अथवा चुम्बकीय उत्तर और भौगोलिक उत्तर का कोणात्मक अन्तर दिया रहता है।

रूढ़ चिह्नों का प्रयोग : मानचित्र की स्थापना तथा इसकी मापनी को समझने के पश्चात् यह महत्वपूर्ण बात मानचित्र पढ़ने वाले के लिए यह भी है कि वह मानचित्र में प्रयुक्त किए गए चिह्नों तथा प्रतीकों को भी अच्छी तरह से जान ले, जो टोपोशीट पर एक सांकेतिक सूची में कुंजी के रूप में दिए गए रहते हैं। ऐसे प्रतीकों को मानचित्र में प्रयुक्त करने का लक्ष्य मानचित्र को सूचनात्मक तथा अधिकतम पठनीय बनाना है। सामान्य प्रतीक तथा अक्षर, जो विभिन्न उच्चावच तथा सांस्कृतिक दशाओं के लिए प्रयुक्त होते हैं, रूढ़ चिह्नों के नाम से पुकारे जाते हैं।

जो व्यक्ति भारतीय सर्वेक्षण विभाग द्वारा बनाए गए टोपोशीट में प्रयुक्त रूढ़ चिह्नों को पढ़ सकता है, वह संसार के किसी भी मानचित्र को बिना अधिक कठिनाई के पढ़ सकता है, चाहे वे विदेशी भाषाओं जैसे फ्रेंच या जर्मन में ही क्यों न तैयार किए गए हों, क्योंकि यह चिह्न अधिकांशतः संसार भर में प्रयुक्त होते हैं।

मानक रंगों का प्रयोग

रूढ़ चिह्नों के अतिरिक्त टोपोशीट में विभिन्न प्रकार के भूमि-उपयोग के वितरण को दिखाने के लिए मानक रंगों का प्रयोग करते हैं। लगभग सारे संसार के मानचित्रों पर भूमि-उपयोग दिखाने के लिए इन रंगों का प्रायः एक समान प्रयोग होता है। प्रमुख भूमि-उपयोगों को दिखाने के लिए निम्नलिखित रंग प्रयोग किए जाते हैं :

भूमि-उपयोग	रंग
1. जोता गया क्षेत्र	पीला
2. वन	गहरा हरा
3. घासभूमि	हल्का हरा
4. अकृष्य बंजर भूमि	भूरा
5. निर्मित क्षेत्र अर्थात् गाँव, नगर, सड़कें आदि	लाल
6. जलीय क्षेत्र	नीला

यदि आपको रंगीन टोपोशीट पर विभिन्न प्रकार के भूमि-उपयोग का अध्ययन करना हो तो उनका विस्तार और वितरण-प्रतिरूप जानने के लिए उन्हें किसी ट्रेसिंग कागज पर उतारिए। आप देखेंगे कि विभिन्न मानचित्रों पर इन रंगों के क्षेत्र और वितरण-प्रतिरूपों में बहुत विषमता है। इसका मुख्य कारण यह है कि मानचित्र पर दिखाए गए क्षेत्रों की भौगोलिक विशेषताएँ अलग-अलग हैं। आप इन क्षेत्रों के भूलक्षणों, अपवाह-तंत्र, जलवायु और अन्य विशेषताओं के आधार पर भूमि-उपयोगों की विविधता के कारणों का विश्लेषण कर सकते हैं।

भौतिक लक्षण और उनकी व्याख्या

पृथ्वी का पृष्ठ पर्वत, घाटी, मैदान एवं समुद्र से भरा है। भूसतह की ये ऊँचाइयाँ एवं खाइयाँ परिभाषानुसार उच्चावच कही जाती हैं। इस उच्चावच का सर्वोत्तम निरूपण माडलों द्वारा किया जाता है। परन्तु माडल प्रायः अधिक कीमती और भारी होते हैं। उनका एक स्थान से दूसरे स्थान पर लाना या ले जाना कष्टसाध्य है। इसके अलावा उनका ऊर्ध्वाधर पैमाना क्षैतिज पैमाने की अपेक्षा बहुत बढ़ जाता है। इन्हीं कारणों से माडलों का प्रयोग सीमित है।

सड़कें, पक्की: महत्वानुसार; मील-पत्थर
" कच्ची, निर्मित: महत्वानुसार; पुल
सड़क, कच्ची, अनिर्मित। रास्ता, लद्दू का, दर्रे सहित। पगडंडी, पुल सहित
पुल: पायों वाला; पायों बिना। काजवे। पांस या नौकाघाट
नाले: तल में मार्ग सहित; संदिग्ध। नहर
बांध: चिना हुआ अथवा पत्थरों से पटा; मिट्टी से पटा। बंधिका
नदी के तट: अल्प प्रवण; अति प्रवण, 10 से 19 फुट तक, 19 फुट से ऊपर
नदी: सूखी, धारा सहित: द्वीप और चट्टानों सहित; ज्वारीय
जलमग्न चट्टानें। उथला जल। दलदल। नड़
कूप: पक्का; कच्चा। नलकूप। सोता। तालाब: बारहमासी; अन्य
पुश्ते: सड़क अथवा रेल की पटरी के; तालाब के। कटी-फटी भूमि
रेल की पटरी, चौड़ी लाइन: दोहरी; इकहरी स्टेशन सहित; निर्माणाधीन
" अन्य लाइनें: " ; " मील-पत्थर सहित; "
हल्की रेलवे या ट्रामवे। तार। कटान, सुरंग सहित
समोच्च-रेखाएं उप-आकार सहित। आकृति रेखाएं। चट्टानी ढाल। ढोंग
बालू के आकार: (1) सपाट, (2) बालू के टिब्बे (पक्के), (3) बालू के टिब्बे (कच्चे)
नगर अथवा गांव: आबाद: उजाड़। गढ़
झोंपड़ियां: स्थाई; अस्थाई। मीनार। पुरातन अवशेष
मंदिर। छतरी। गिरजाघर। मस्जिद। ईदगाह। मकबरा। कब्रें
प्रकाशस्तम्भ। प्रकाशपोत। बोया: प्रकाशित; अप्रकाशित। लंगरगाह
खान। बेल, जाली पर चढ़ी। घास। झाड़-झंकाड़
पेड़: पनई ताड़; अन्य ताड़; केला; शंकु जाति; बांस; अन्य पिंड गुने
सीमा, अंतर्राष्ट्रीय
" राज्य: सीमांकित: असीमांकित
" जिला; परगना, तहसील या तालुक; वन
सीमा-स्तम्भ: सर्वेक्षित; अनुपलब्ध; गांवों का त्रिसीमास्तम्भ
ऊंचाइयां, त्रिकोणीयन: चोटि की; बिन्दु; गणित 200 200 200
तल चिह्न: ज्योडीय; त्रिकोणमिति; नहरी; अन्य त चि 200 त्रि 200 . 200 .200
डाकघर। तारघर। डाकतारघर। थाना डाक तार डाकतार थाना
डाक या पाली बंगला। निरीक्षण भवन। विश्राम गृह डा बंग नि भव (नहर) वि गृह (वन)
सर्किट हाउस। पड़ाव स्थान: बन्द; संरक्षित स हाउस पड़ाव बं वन सं वन
लोककर लिखे नाम: प्रशासकीय; क्षेत्रीय या जनजातीय पि डि ना गा

चित्र—35 रूढ चिह्न

उच्चावच दिखाने की विधियाँ : मानचित्र बनाने वालों को पृथ्वी के तरंगित पृष्ठ को एक समतल पर निरूपित करने की समस्या का सामना करना पड़ता है। उच्चावच मानचित्र समुद्रतल से ऊपर की स्थल की ऊँचाइयों को एक समतल सतह पर प्रदर्शित करते हैं। मानचित्रों पर उच्चावच दिखाने की कई विधियाँ हैं। इनमें से प्रमुख विधियाँ हैं : समोच्च रेखाएँ, आकृति रेखाएँ, स्तर-रंजन, पहाड़ी छायाकरण तथा हैश्यूर। कभी-कभी एक मानचित्र पर कई विधियों का एक स्थान पर प्रयोग किया जाता है, जैसे समोच्च रेखाएँ तथा स्तर-रंजन, समोच्च रेखाएँ तथा हैश्यूर, समोच्च रेखाएँ तथा पहाड़ी छायाकरण आदि।

समोच्च रेखाएँ : समोच्च रेखा, मानचित्र पर खींची गई वह कल्पित रेखा है जो माध्य समुद्रतल से समान ऊँचाई वाले स्थानों को मिलाती है। दूसरे शब्दों में, समोच्च रेखा समुद्रतल से नियत अथवा समान ऊँचाई वाली एक रेखा है। समोच्च रेखाओं द्वारा उच्चावच दिखाने की विधि सम्भवत: सबसे यथार्थ, सामान्य एवं

चित्र—36 समोच्च रेखीय मानचित्र

लोकप्रिय है। उच्चावच लक्षणों के परिशुद्ध निरूपण की यह सबसे उपयोगी विधि है। यदि किसी छोटे क्षेत्र का सावधानीपूर्वक विस्तृत अध्ययन करना हो तो यह विधि विशेषरूप से उपयोगी होगी।

समोच्च रेखाएँ, क्षेत्र में किए गए वास्तविक सर्वेक्षण के आधार पर खींची जाती हैं। समोच्च रेखाओं द्वारा किसी धरातल के विन्यास का प्रदर्शन करने वाले मानचित्र को समोच्च रेखीय मानचित्र कहते हैं।

समोच्च रेखाएँ विभिन्न तलों पर खींची जाती हैं, जैसे समुद्रतल से 20, 50 या 100 मीटर ऊपर अथवा 50, 100 या 200 फुट ऊपर। दो उत्तरोत्तर समोच्च रेखाओं के अन्तर को ऊर्ध्वाधर अन्तराल धरातल कहते हैं और इसे सूक्ष्म रूप में सामान्यत: ऊ. अ. = (Vertical Interval or V. I.) = अक्षरों में लिखते हैं। किसी भी समोच्च रेखीय मानचित्र पर ऊर्ध्वाधर अन्तराल निश्चित होता है और यह मीटर या फुट में दिया रहता है। यद्यपि दो समोच्च रेखाओं के बीच का ऊर्ध्वाधर अन्तराल अपरिवर्तित रहता है, उनके बीच की क्षैतिज दूरी ढलान पर निर्भर होने के कारण एक स्थान से दूसरे स्थान पर बदलती रहती है। दो उत्तरोत्तर समोच्च रेखाओं के बीच की इस क्षैतिज दूरी को क्षैतिज तुल्यांक कहते हैं हैं और इसे सूक्ष्म रूप से सामान्यत: क्षै० तु० (Horizontal Equivalent or H. E.) अक्षरों में लिखते हैं। यह आमतौर पर मीटर या गज में दिया रहता है। मन्द ढलानों के लिए क्षैतिज तुल्यांक का मान अधिक होता है और तीव्र ढलानों के लिए अपेक्षाकृत कम होता है।

कभी-कभी समोच्च रेखाओं की दिशा से खींची गई खंडित रेखाओं का प्रयोग विशेष तौर पर पहाड़ी तथा पर्वतीय प्रदेशों को निरूपित करने के लिए किया जाता है। इन्हें आकृति रेखाएँ कहते हैं। ये समोच्च रेखाओं के समान यथार्थ नहीं होतीं और बिना किसी परिशुद्धि मापन के केवल प्रेक्षण के ही आधार पर बनाई जाती हैं। ये छोटे-छोटे लक्षणों, जिन्हें समोच्च रेखाओं से नहीं दिखाया जा सकता, को प्रकट करने में सहायक होती हैं। ऐसा विशेषतया उन मानचित्रों में किया जाता है जिनमें पर्वतीय स्थलाकृतियों को समोच्च रेखाओं द्वारा निरूपित करते हैं और समोच्च रेखाओं का ऊर्ध्वाधर अन्तराल बहुत अधिक होता है।

स्तर-रंजन : एक विस्तृत क्षेत्र के उच्चावच वितरण को दिखाने की यह साधारण विधि है। सामान्यत: देशों या महाद्वीपों के उच्चावच या तुंगता को प्रकट करने में जो रंग-व्यवस्था अपनाई जाती है वह लगभग सारे संसार में एक समान है। समुद्र को नीला रंगते हैं। सामान्यत: गहरा नीला रंग गहरे समुद्र को और हल्का नीला छिछले समुद्र को व्यक्त करता है। निम्न भूमि गहरे हरे रंग से दिखाई जाती है और स्थल की ऊँचाई जैसे-जैसे बढ़ती जाती वैसे-वैसे क्रमश: हल्का भूरा, गहरा भूरा, किरमिजी, लाल तथा सफेद रंगों का प्रयोग किया जाता है।
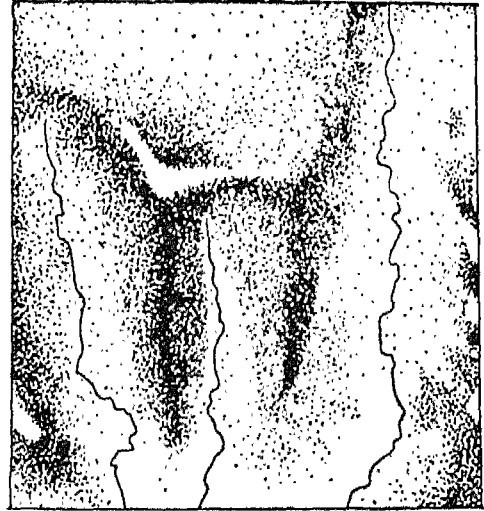
चित्र—37 (a) पहाड़ी छाया करण द्वारा उच्चावच प्रदर्शन
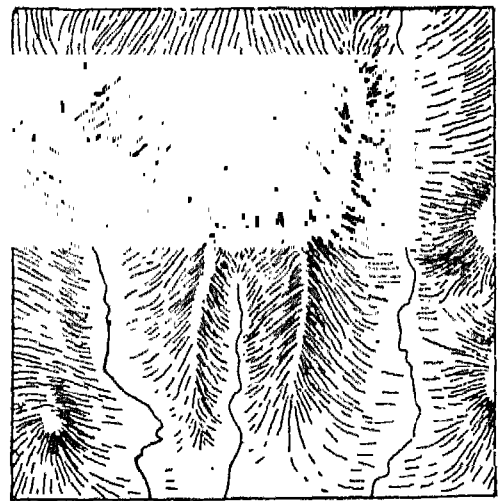
चित्र—37 (b) हैश्यूर द्वारा उच्चावच प्रदर्शन
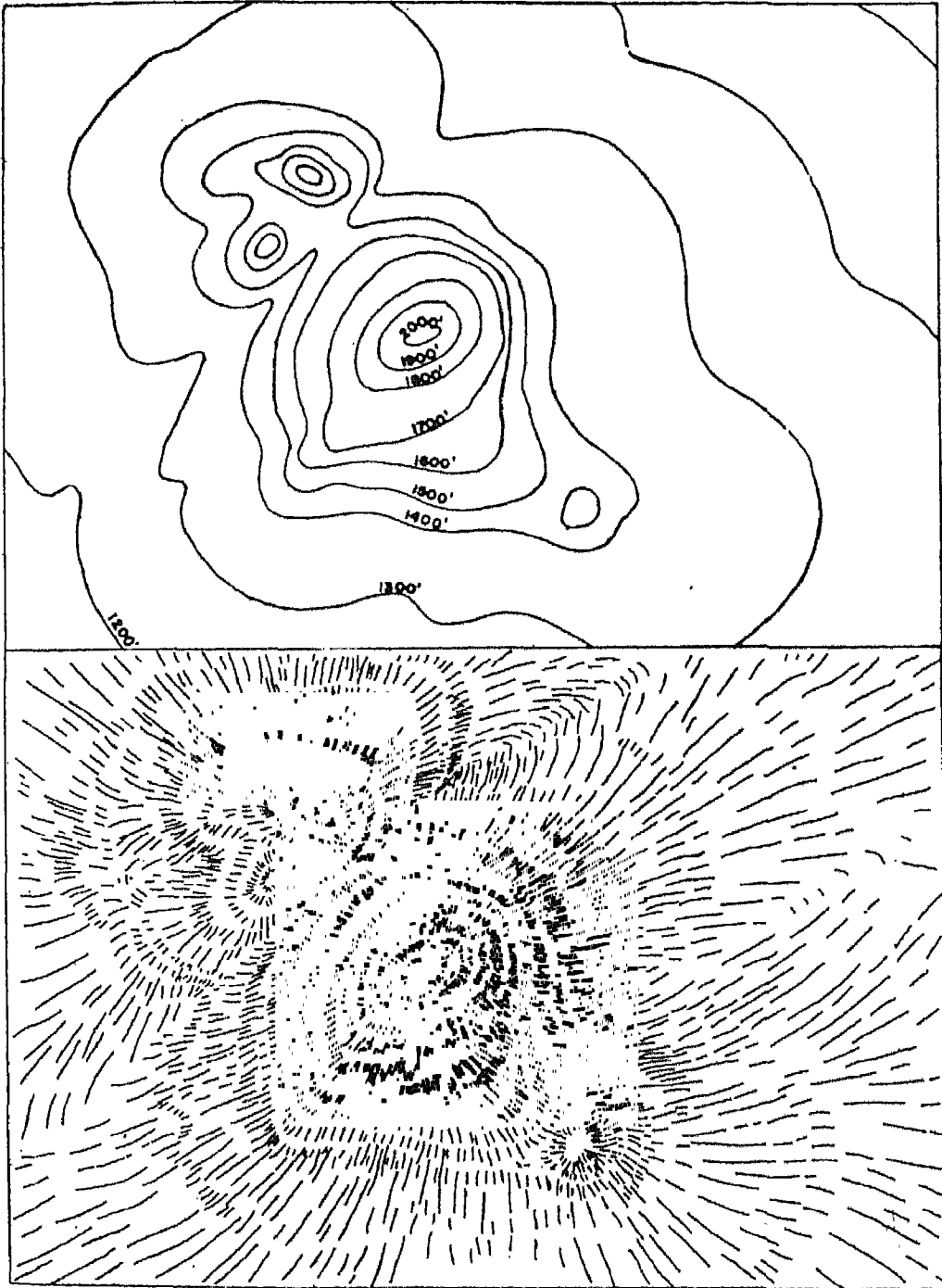
चित्र 38 समोच्च रेखाओं एवं हैश्यूर द्वारा उच्चावच

प्रत्येक रंग द्वारा निरूपित वास्तविक ऊँचाइयों को स्पष्ट करने के लिए मानचित्र के एक किनारे पर कुंजी दी जाती है। किसी विशाल प्रदेश के उच्चावच का एक व्यापक रूप प्रदर्शित करने के लिए यह विधि उपयोगी है।

पहाड़ी-छायाकरण : इस विधि में प्रदेश के उच्चावच को मानचित्र पर केवल दक्षिण एवं पूर्व के ढालों को छायांकन द्वारा प्रकट करते हैं। दूसरे शब्दों में, यह कल्पना की जाती है, कि वह प्रदेश पश्चिमोत्तर दिशा में स्थित प्रकाश-स्रोत से प्रविष्ट होता है, और इसके दक्षिण और पूर्वाभिमुख कलक छाया में रहेंगे। बहुधा इस विधि का प्रयोग समोच्च रेखाओं के साथ में करते हैं।

हैश्यूर : हैश्यूर वे छोटी सरल रेखाएँ हैं, जो मानचित्र पर भूमि के ढलान में अन्तरों को बोध कराने के लिए खींची जाती हैं। वह अधिकतम ढाल की दिशा में खींची गई रेखाएँ होती हैं। हैश्यूर पहाड़ी अथवा कटक के शीर्ष से बाद तक समोच्च रेखाओं पर लम्बवत: खींची जाती हैं। जब ढलान तीव्र होता है तो ये रेखाएँ मोटी तथा घनी बनाई जाती हैं और जब ढलान मन्द होता है तो ये पतली और दूर-दूर होती हैं।

ऐसे मानचित्र पर सबसे सघन छाया वाले भाग खड़े कगारों को निरूपित करते हैं और हल्की छाया वाले भाग मन्द ढाल दिखाते हैं। रिक्त स्थान पठार, पहाड़ी-शीर्ष एवं लगभग समतल घाटी-तल को प्रकट करते हैं। हैश्यूर द्वारा स्थल-विन्यास का बहुत ही अच्छा निरूपण होता है, परन्तु वे वास्तविक ऊँचाइयों का बोध नहीं कराते।

समोच्च रेखाओं का अन्तर्वेशन : मानचित्र पर समोच्च रेखा खींचने की विधि से पूर्व स्थान की ऊँचाई और निर्देश-चिह्न जानना आवश्यक है। सर्वेक्षक, सर्वेक्षण यंत्रों की सहायता से, कुछ स्थानों पर स्थानीय सतह की समुद्रतल से वास्तविक ऊँचाई ज्ञात करते हैं। इस प्रकार क्षेत्र में ज्ञात की गई और मानचित्र पर संगत-बिन्दुओं पर आलेखित ऊँचाई को *स्थान की ऊँचाई* कहते हैं। स्थान की ऊँचाई मानचित्र पर एक बिन्दु के साथ ऊँचाई को मीटर या फुट में अंकित कर दिखलाई जाती है।

कई बार विशिष्ट बिन्दुओं की ऊँचाई स्थाई निर्देश के लिए, क्षेत्र में उपस्थित पत्थरों या मकानों (इमारतों) जैसी प्रमुख एवं टिकाऊ वस्तुओं पर अंकित की जाती है। यह ऊँचाइयाँ यांत्रिक विधियों से ठीक-ठीक ज्ञात की जाती हैं और मीटर या फुट के दसांश तक अंकित की जाती हैं। इन्हें *निर्देश-चिह्न* कहते हैं। मानचित्र पर निर्देश-चिह्न को नि० चि० (Bench Mark or B. M.) के साथ, इस चिह्न की माध्य समुद्रतल से वास्तविक ऊँचाई को अंकित कर प्रकट किया जाता है। इस प्रकार निर्देश-चिह्न, उस चिह्न की सही ऊँचाई बताता है, न कि भूमि की। यह स्थानीय अध्ययन-कार्यों के लिए अति उपयोगी होते हैं, क्योंकि इन स्थानों की ऊँचाई ज्ञात करने में ये निर्देश-बिन्दुओं का कार्य करते हैं। अत: निर्देश-चिह्न मानचित्र की उपयोगिता को बढ़ाते हैं।

यदि क्षेत्र में उपस्थित कुछ स्थानों की ऊँचाइयाँ मानचित्र के संगत बिन्दुओं पर आलेखित हों, तो समोच्च रेखाओं का अन्तर्वेशन संभव होता है। सर्वप्रथम मानचित्र पर आलेखित अधिकतम एवं न्यूनतम स्थान ऊँचाइयों का सावधानीपूर्वक अध्ययन करना पड़ता है और फिर इनका अन्तर ज्ञात करना होता है। इसके आधार पर दूसरा कदम होता है समोच्च रेखाओं का अन्तराल ज्ञात करना जो निश्चित रूप से समरूप और कार्य (उद्देश्य) के उपयुक्त होता है। सामान्यत: यह ऊँचाई के कुल अंतर पर निर्भर करता हुआ 20, 50 या 100 मीटर जैसे पूर्ण अंकों में लिया जाता है।

इस स्थिति में चूँकि ऊँचाई का अन्तर 520 मीटर है, समोच्च रेखा का अन्तराल 100 मीटर, जो एक पूर्ण अंक है, चुनना सुविधाजनक होगा। अब निम्नतम समोच्च रेखा से शुरू करिए, जो इस स्थिति में 1200 मीटर की रेखा होगी। इस समोच्च रेखा को उस पेटी में होकर गुजरना पड़ेगा, जिसके एक ओर 1,100 मीटर और दूसरी ओर 1,300 मीटर की ऊँचाइयाँ होंगी। समोच्च रेखा का
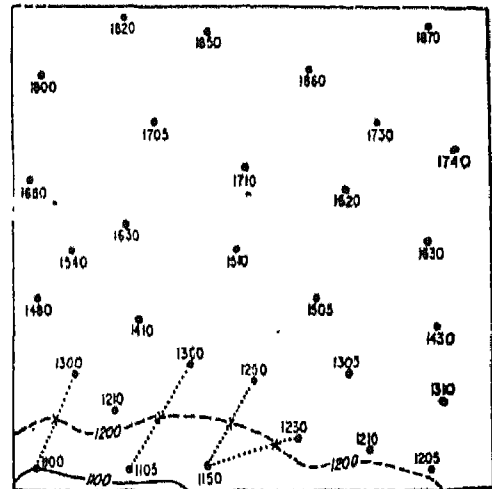
चित्र—39 समोच्च रेखाओं का अन्तर्वेशन

वास्तविक पथ 1,100 मीटर से 1,300 मीटर के बीच स्थित स्थानों की ऊँचाइयों पर निर्भर करेगा। यह कल्पना की जाती है कि दो स्थानीय ऊँचाइयों के बीच का ढाल सम है। इसलिए 1,150 व 1,250 मीटर की स्थानीय ऊँचाइयों के बीच से गुजरने वाली 1,200 मीटर की समोच्च रेखा दोनों स्थानों के ठीक मध्य से गुजरेगी। फिर 1,150 मीटर और 1250 मीटर की स्थानीय ऊँचाई के मध्य से गुजरने वाली यह समोच्च रेखा बाद वाली ऊँचाई के पास से गुजरेगी। वास्तव में यह समोच्च रेखा इस प्रकार खींची जाएगी, कि उपरोक्त दोनों स्थानीय ऊँचाइयों से इसकी दूरी क्रमशः 5 और 3 के अनुपात में रहे। अन्य स्थानीय ऊँचाई की सहायता से अब तुम स्वयं समोच्च रेखाएँ खींच सकते हो।

मानचित्र पर समोच्च रेखाओं को खींचते समय कुछ बातें ध्यान में रखनी चाहिए। किसी भी क्षेत्र में समोच्च रेखाएँ न तो अकस्मात आरम्भ होती है और न उनका अन्त ही अकस्मात होता है। मानचित्र पर या तो वे सीमा तक जाती हैं या सम्वृत (बन्द) प्रतिरूप बनाती हैं। दो विभिन्न मानों की समोच्च रेखाएँ आपस में एक दूसरे को नहीं काटतीं। वैसे, जलप्रपात और भृगु की स्थिति में, जहाँ ढाल ऊर्ध्वाधर, होता है, समोच्च रेखाएँ परस्पर मिलकर एक हो जाती हैं। समोच्च रेखा का मान अंकित करने में भी सावधानी रखनी चाहिए। रेखा पर उसका मान उस ओर अंकित करना चाहिए जिस ओर ऊँचाई बढ़ती हो। इनके मान उन बिन्दुओं पर अवश्य अंकित करने चाहिए, जहाँ वे मानचित्र की सीमा को काटती हों।

उच्चावच लक्षणों का निरूपण

समोच्च रेखाओं की परस्पर दूरी (अन्तराल) हमारे लिए महत्वपूर्ण है क्योंकि यह ढलान की प्रवणता को व्यक्त करती है। जब ढाल तीव्र होता है तो समोच्च रेखाएँ पास-पास होती हैं, और जब वह मन्द होता है तो समोच्च रेखाएँ दूर रहती हैं। समोच्च रेखाओं के संवृत प्रतिरूपों से पृथ्वी के धरातल पर उपस्थित प्राकृतिक लक्षणों की आकृति या रूप का बोध होता है। समोच्च रेखाओं के विशिष्ट प्रतिरूपों द्वारा कुछ प्राकृतिक लक्षणों के निरूपण का अध्ययन एक रोचक विषय हो सकता है।

शांकव पहाड़ी : एक शांकव पहाड़ी अपनी आसपास की भूमि से लगभग समान रूप से ऊपर उठती है। ज्वालामुखी शंकु इस तरह की पहाड़ी का एक विशिष्ट उदाहरण है। समढाल वाली एक शांकव पहाड़ी ऐसी संकेन्द्री समोच्च रेखाओं द्वारा निरूपित होती है, जो नियमित रूप से समान अन्तर पर खिंची होती हैं।

पठार : समीपवर्ती मैदान से ऊपर उठी सपाट सतह वाली उच्चभूमि को पठार कहते हैं। पठार के निरूपण में किनारों के ढाल पर सटी-सटी समोच्च रेखाएँ और उसकी सतह पर उनकी अनुपस्थिति या चौड़े अन्तराल ध्यान आकर्षित करते हैं।
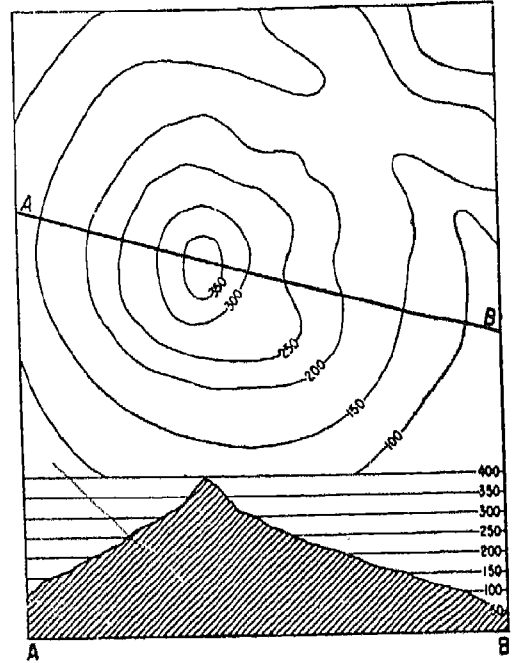
चित्र—40 शांकव पहाड़ी
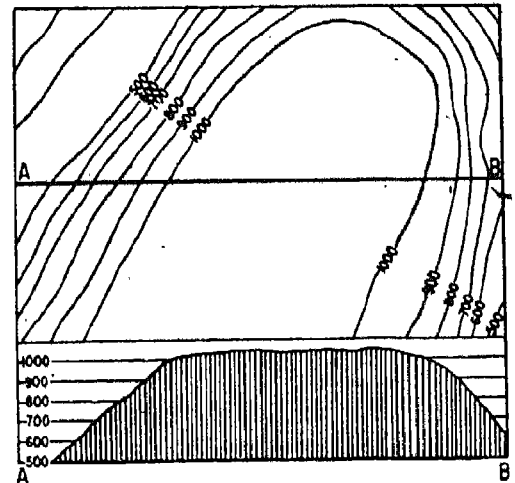
चित्र—41 पठार

कटक : कटक, बहुधा तीव्र किनारों से परिपूर्ण एक पतली एवं लम्बी उच्च भूमि की पट्टी बनाने वाली पहाड़ी अथवा पहाड़ियों की शृंखला होती है। यह मानचित्र पर लगभग दीर्घवृत्ताकार समोच्च रेखाओं द्वारा निरूपित की जाती है।

टेकरी युक्त मैदान : टेकरी एक नीची तथा पृथक पहाड़ी होती है और सामान्यतः यह गोलाकार आकृति की होती है। बहुधा मैदान में ऐसी पहाड़ियाँ जहाँ-तहाँ पाई जाती हैं। सामान्यतः वृत्ताकार आकृति की छोटी-छोटी समोच्च रेखाएँ टेकरी को निरूपित करती हैं और प्रदेश के बाकी भाग में इन रेखाओं के दूर-दूर स्थित होने या उनके अभाव अथवा अनुपस्थित होने से मैदान का बोध होता है।
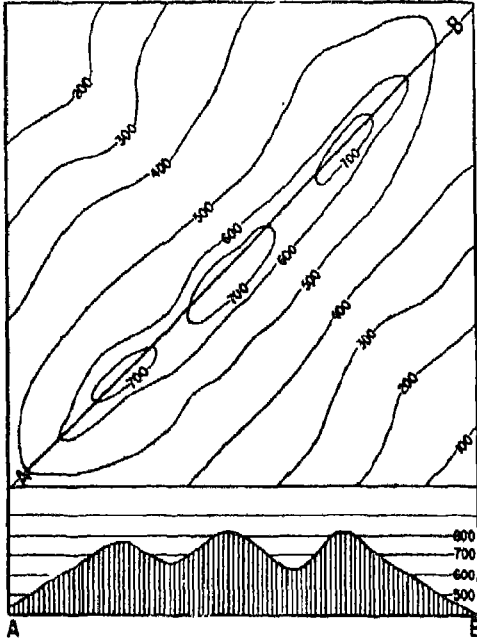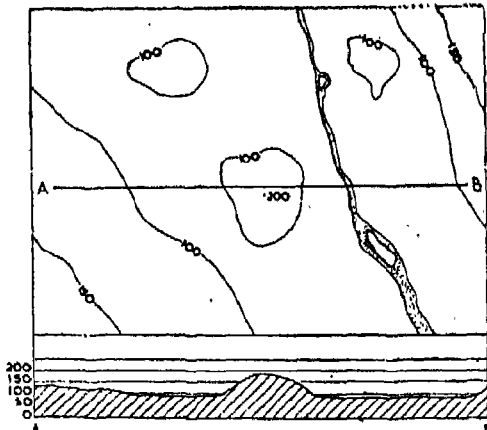
चित्र—42 कटक

चित्र—43 टेकरी युक्त मैदान

घाटी : दो पहाड़ों या कटकों के बीच स्थित निम्न भू-भाग को घाटी कहते हैं और इसमें बहुधा नदी बहती है। घाटी आमतौर पर 'V' आकार की समोच्च रेखाओं से दिखाई जाती है। 'V' का खुला हुआ मुख निम्न स्थान अथवा निचाई की ओर और नुकीला भाग उच्च स्थल या पहाड़ी अथवा ऊँचाई की ओर संकेत करता है।

पर्वत-स्कंध : पर्वत-सकंध उच्च भूमि का वह जिह्वाकार भाग है जो ऊँची भूमि से नीची भूमि की ओर निकला है। यह भी 'V' आकार की समोच्च रेखाओं से दिखाया जाता है। परन्तु वे घाटी के समोच्च रेखाओं के उल्टे क्रम से होती हैं। 'V' का खुला मुख उच्च स्थल की ओर तथा नुकीला भाग निम्न स्थल की ओर संकेत करता है।

भृगु : किसी झील, नदी, समुद्र या मैदान के किनारे पर उपस्थित ऊँचा एवं दीवार के सामने खड़े ढाल वाला शैल-फलक भृगु कहलाता है। मानचित्र पर भृगु की पहचान समोच्च रेखाओं के बहुत निकट होने से होती है और ये परस्पर एक दूसरे को स्पर्श कर अंत में मिल जाती हैं। (चित्र 45) कभी-कभी भृगु के लिए मानचित्र पर विशेष चिह्न या प्रतीक का प्रयोग किया जाता है।

जलप्रपात : नदी-तल के उर्ध्वाधर ढाल पर पानी के अकस्मात गिरने के स्थल को जलप्रपात कहते हैं। मानचित्र पर जलप्रपात की पहचान नदी को पार करने वाली समोच्च रेखाओं के परस्पर मेल से होती है (चित्र 46)

ढाल के विभिन्न रूप : जब मानचित्र पर समोच्च रेखाएँ समान दूरी पर होती हैं तो ढाल सम होता है। ऐसा समढाल बिरले ही पाया जाता है। बहुधा हम देखते हैं कि पहाड़ी ढाल पर समोच्च रेखाएँ या तो शिखर की ओर अथवा गिरिपाद की ओर परस्पर समीप होती हैं। जब समोच्च रेखाएँ गिरिशिखर की अपेक्षा गिरिपाद के निकट अधिक समीप होती हैं तो ढाल उत्तल कहा जाता है। इन समोच्च रेखाओं की रचनाओं का ज्ञान तकनीकी दृष्टिकोण से बड़ा महत्वपूर्ण होता है। पहाड़ी के उत्तल ढाल की स्थिति में गिरिशिखर (क स्थान) और गिरिपाद (ख स्थान) पर उपस्थित व्यक्ति परस्पर एक दूसरे को नहीं देख सकते। ऐसा बीच में आने वाली भूमि के कारण होता है, जो उनके दृष्टि-पथों को अवरुद्ध करती है। जब समोच्च
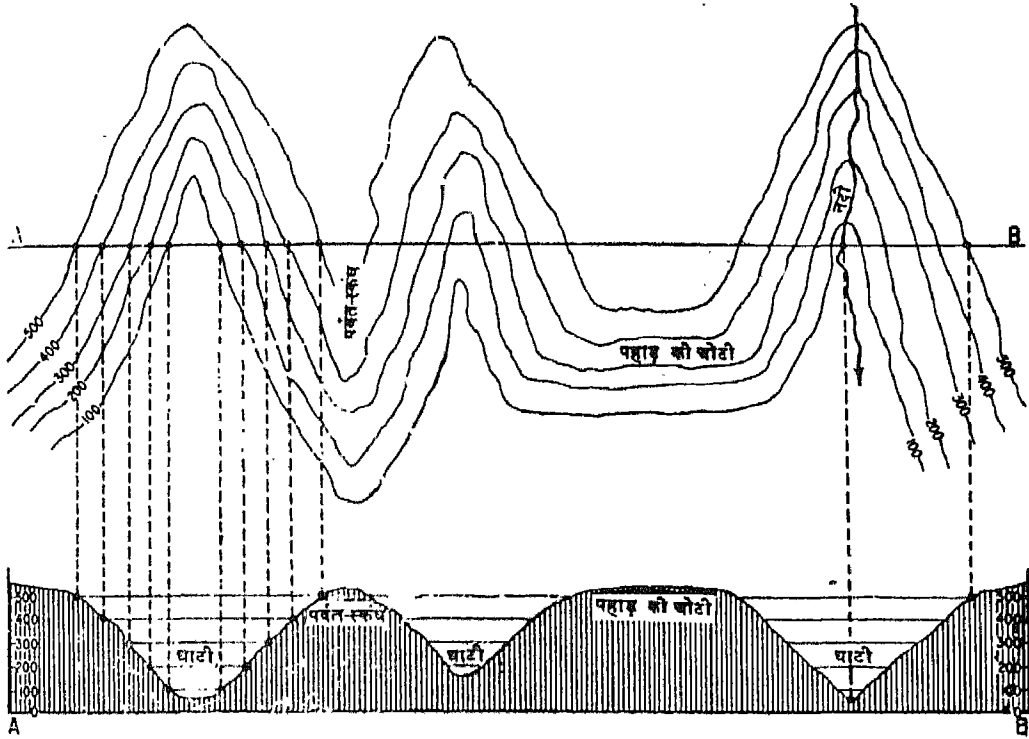
चित्र—44 घाटी और पर्वत-स्कंध
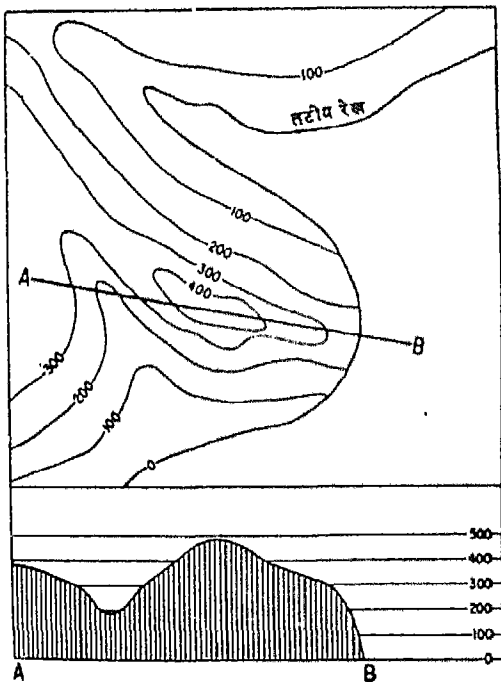
चित्र—45 भृगु
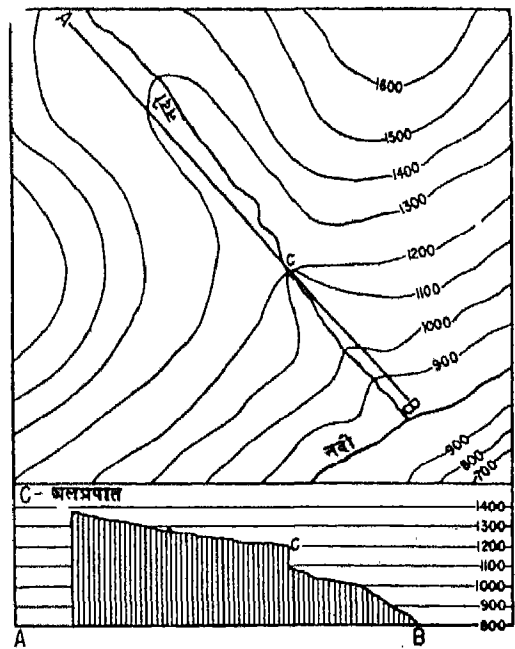
चित्र—46 जल प्रपात
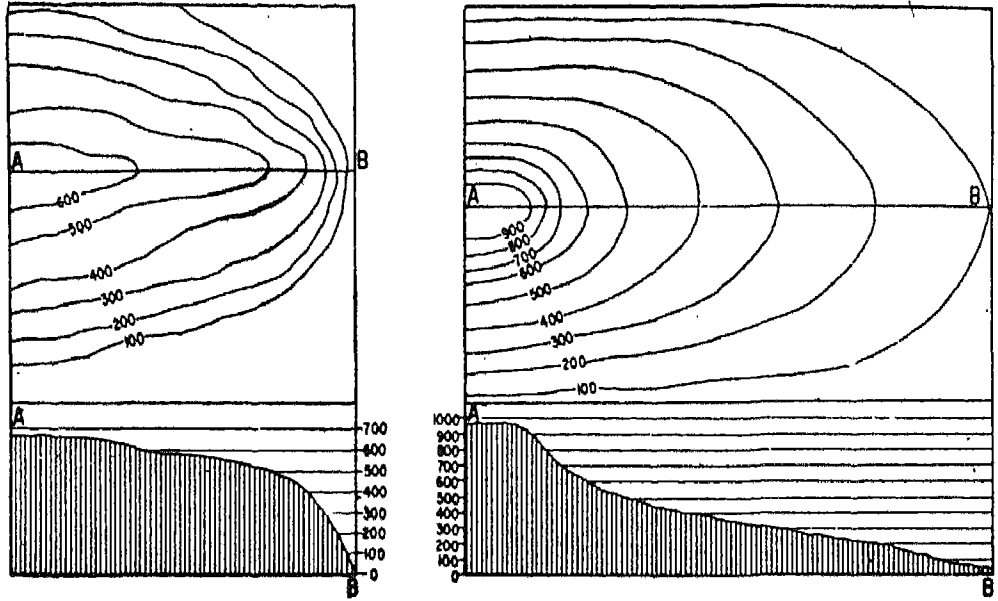
चित्र—47 उत्तल और अवतल ढाल

रेखाएँ गिरिपाद की अपेक्षा गिरिशिखर के निकट अधिक समीप होती हैं तो ढाल अवतल कहलाता है। ऐसी स्थिति में गिरिशिखर (क स्थान) और गिरिपाद (ख स्थान) पर उपस्थित व्यक्ति एक दूसरे को देख सकते हैं, क्योंकि उनके बीच दृष्टिरेखा को अवरुद्ध करने वाली उभरी हुई भूमि पाई जाती नहीं। (चित्र 47)

अनुप्रस्थ परिच्छेद या पार्श्वचित्र खींचना : समोच्च रेखीय मानचित्र से भूभाग के स्वरूप की अच्छी जानकारी प्राप्त होती है। मानचित्र पर दृश्यभूमि की यथार्थता की कल्पना के लिए कुछ रेखाओं पर अनुप्रस्थ परिच्छेद (पार्श्वचित्र) का खींचना उपयोगी होता है।

यदि भूमि का एक भाग किसी सरल रेखा पर उर्ध्वाधर काटा जाए तो इसका पार्श्वचित्र **अनुप्रस्थ परिच्छेद** होगा। इसे **परिच्छेद** या **परिच्छेदिका** भी कहते हैं। यदि रेलपथ पूर्णतया समतल और सीधा हो तो रेलमार्ग-कटान एक प्रकार की परिच्छेदिका होगी।

अतः अनुप्रस्थ परिच्छेद हमें किसी रेखा पर ऊँचाइयों, ढाल और गर्तों की वास्तविक जानकारी देता है और इस प्रकार यह हमें धरातलीय विन्यास की स्पष्ट कल्पना करने में अधिक सहायक होता है।

अनुप्रस्थ परिच्छेद खींचने के लिए रेखीय मानचित्र A और B कोई दो बिन्दु ले लिए जाते हैं। A B को मिलाते हुए एक सरल रेखा खींचिए। कागज के किनारे पर उन बिन्दुओं के अनुसार पेन्सिल से निशान लगाइए, जिन पर A B रेखा समोच्च रेखाओं को काटती है। प्रत्येक निशान पर समोच्च रेखा का मान अंकित कर दीजिए। अब इस A B रेखा पर पेन्सिल के प्रत्येक निशान से लम्ब खींचिए। एक उपयुक्त पैमाना, जैसे 1 सेंटीमीटर बराबर 100 मीटर, मानकर प्रत्येक लंब पर उसके संगत समोच्च रेखा के मान के अनुसार ऊँचाई निश्चित कर दीजिए, अब इन लंब रेखाओं के शीर्षों को निष्कोण वक्र द्वारा मिलाने पर अनुप्रस्थ परिच्छेद बन जाएगा। यह स्मरण रखना चाहिए कि इस प्रकार के खींचे गए अनुप्रस्थ परिच्छेदों में उर्ध्वाधर पैमाना क्षैतिज पैमाने की अपेक्षा बहुत अधिक बढ़ जाता है (चित्र 48)
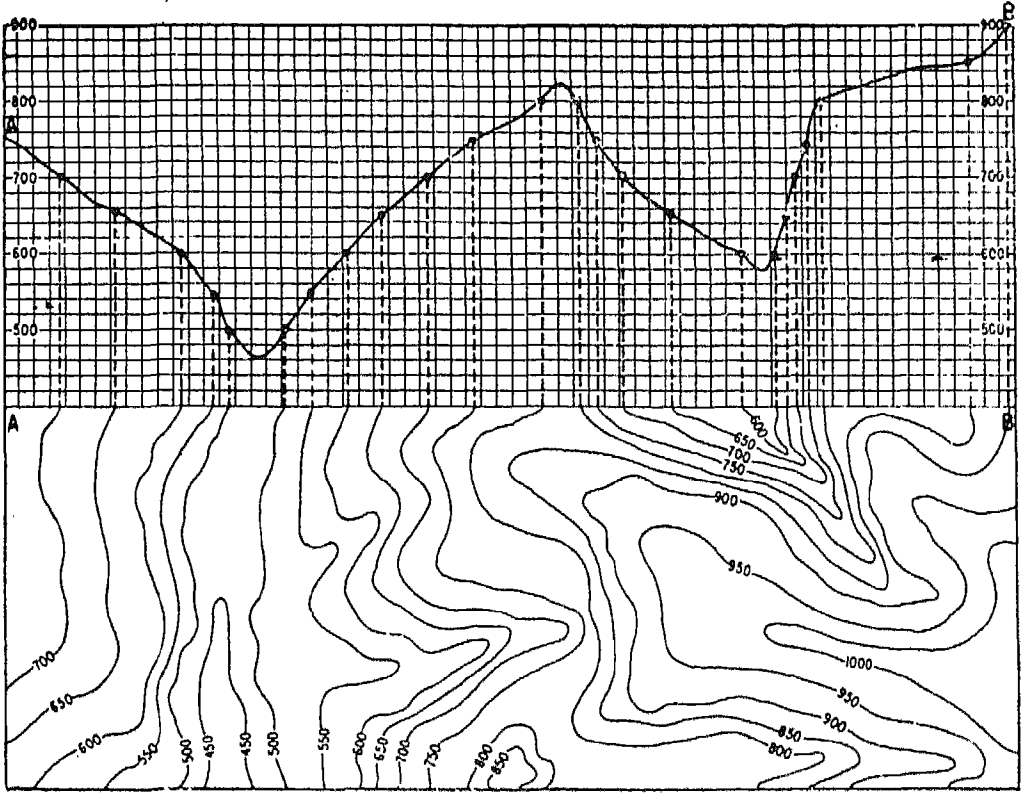
चित्र—48 समोच्च रेखाओं से परिच्छेदिका खींचना

स्थलाकृतिक मानचित्रों की व्याख्या

सामान्यत: एक स्थलाकृतिक मानचित्र की व्याख्या इन शीर्षकों के अंतर्गत की जाती है : (1) साधारण सूचनाएँ, (2) उच्चावच और अपवाह, (3) भूमि-उपयोग, (4) परिवहन तथा संचार के साधन और (5) मानव बस्तियाँ।

(1) साधारण सूचनाओं के अन्तर्गत: निम्नलिखित प्रश्नों का उत्तर ज्ञात किया जाता है : टोपोशीट का नाम तथा संख्या क्या है ? मानचित्र में किस विशेष क्षेत्र को प्रदर्शित किया गया है ? वह किन अक्षांशों और देशान्तरों के बीच स्थित है ? टोपोशीट के प्रकाशक कौन हैं वह कहाँ और किस मापनी पर मुद्रित हुआ है ? मानचित्र में प्रदर्शित क्षेत्र का निकटतम क्षेत्रफल क्या है ? क्या भौतिक तथा मानव भूगोल सम्बन्धी कोई विशेष तथ्य उस मानचित्र में दिए गए हैं ?

(2) उच्चावच तथा अपवाह के शीर्षक में साधारणतया नीचे लिखे प्रश्न पूछे जा सकते हैं : मानचित्र में समोच्च रेखाएँ किस अंतराल पर खींची गई हैं ? वे कौन से भौतिक विभाग हैं जिनमें क्षेत्र को आसानी से बाँटा जा सकता है ? इन भौतिक विभागों का वर्णन किस प्रकार किया जा सकता है ? मानचित्र में कौन-कौन से प्रमुख स्थलरूप दिखाए गए हैं, जैसे मैदान, पठार, घाटियाँ और पहाड़ियाँ। क्या इन स्थलरूपों के कुछ विशेष लक्षण हैं ? क्या उस क्षेत्र में कोई महत्त्वपूर्ण जलविभाजक है ? क्या वहाँ के अपवाह-तंत्र में किसी विशेष बात का आभास मिलता है ? क्या क्षेत्र के साधारण ढाल के विषय में और प्रमुख नदी ढाल के विषय में कुछ कहा जा सकता है ?

(3) इस अध्ययन का अगला पक्ष है भूमि के उपयोग सम्बन्धी बातों की चर्चा। अत: हमें उस क्षेत्र में वनस्पति के प्रकार, जलवायु सम्बन्धी दशाएँ और मनुष्यों के अनुमानित उद्यम आदि के विषय में ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक होता है। इस सम्बन्ध में कुछ उपयुक्त प्रश्न इस प्रकार हो सकते हैं—इस क्षेत्र में कौन-कौन सी प्राकृतिक वनस्पति पाई जाती है ? किन-किन महत्त्वपूर्ण तरीकों से भूमि का उपयोग होता है ? लोगों के कौन-कौन से संभावी मुख्य उद्यम या जीविकोपार्जन के साधन हैं ?

(4) दिए गए मानचित्र से परिवहन तथा संचार साधनों के विषय में ऐसे प्रश्न किए जा सकते हैं—उस क्षेत्र में परिवहन के विभिन्न साधन कौन-कौन से हैं? क्या उस क्षेत्र में रेल तथा सड़कों की सुविधा है? क्या वे आवश्यकता को पूरी कर सकती हैं? क्या डाकघर के अतिरिक्त तार तथा टेलीफोन लाइनें भी हैं? संचार की लाइनें लोगों की सामान्य समृद्धि तथा औद्योगिक विकास के संबंध में क्या व्यक्त करती हैं? क्या स्थलाकृतिक लक्षणों तथा संचार की मुख्य लाइनों में कुछ आपसी संबंध है? क्या परिवहन के साधनों तथा बस्तियों के प्रतिरूप से कुछ संबंध मिलता है?

(5) फिर मानव बस्तियों के संबंध में जानकारी प्राप्त करने की बात आती है। इस संबंध में जो सूचना मिलती है वह भूमि के उपयोग तथा मनुष्यों के उद्यम के बारे में ज्ञान प्रदान करती है। इस संबंध में कुछ उपयोगी प्रश्न इस प्रकार के हो सकते हैं—इस प्रदेश में कौन-कौन से नगरीय केन्द्र हैं? वे कितने बड़े हैं? कौन-कौन से विशेष कार्य वहाँ होते हैं? वे औद्योगिक या व्यापारिक नगर हैं या प्रशासकीय नगर हैं? उनके विकास में कौन-कौन सी स्थानीय परिस्थितियाँ सहायक हैं? ग्रामीण बस्तियाँ कितनी घनी हैं? क्या वे समान रूप से क्षेत्र में फैली हैं? क्या ग्रामीण बस्तियाँ समूह में नहीं हैं? ऐसा क्यों?

मानचित्रों की व्याख्या करने की विधि

आपको यह स्मरण रखना चाहिए कि मानचित्र पर दिखाए विभिन्न लक्षणों का विवरण देना मानचित्र व्याख्या का प्रथम सोपान है। इसके बाद की अधिक महत्वपूर्ण व्याख्या वह होती है जिसमें मानचित्र पर दिखाए विभिन्न लक्षणों के बीच कार्य-कारण संबंधों और उन्हें प्रभावित करने वाले कारकों को स्पष्ट किया जाता है। उदाहरणार्थ, टोपोशीट पर प्रदर्शित प्राकृतिक वनस्पति और कृषिभूमि के वितरण को स्थलरूपों और अपवाह-तंत्र के संदर्भ में अच्छी तरह समझा जा सकता है। पहाड़ी और ऊबड़-खाबड़ क्षेत्र में विभिन्न प्रकार के भूमि उपयोगों और भूमि के ढलानों के बीच क्या संबंध हैं? क्या आप इसे नदी-घाटियों या उनके किनारों की कटकों के आरपार अनुप्रस्थ परिच्छेद बनाकर अच्छी तरह स्पष्ट कर सकते हैं? इसी प्रकार विभिन्न प्रदेशों की मानवीय बस्तियों के वितरण में अपनी-अपनी विशेषताएँ होती हैं, जिनके द्वारा वे एक दूसरे से अलग की जाती हैं। गंगा के विशाल मैदान के समतल क्षेत्रों और प्रायद्वीपीय पठार के काली मिट्टी के प्रदेशों तथा डेल्टाई क्षेत्रों में खेती करने की अत्यधिक सुविधाओं के कारण मानव बस्तियाँ समान रूप से इन क्षेत्रों के समस्त भाग पर फैली हुई हैं। इन प्रदेशों में परिवहन के मार्गों की सुविधाएँ भी अधिक हैं, और कुछ बस्तियाँ परिवहन-मार्गों के संदर्भ में अधिक अनुकूल स्थिति में होने के कारण यातायात और व्यापार के बड़े-बड़े केन्द्र बन गए हैं। ये मानचित्र पर बड़ी बस्तियाँ या नगरों के रूप में दिखाई देती हैं जहाँ विभिन्न दिशाओं से परिवहन के मार्ग आकर मिलते हैं। जिन क्षेत्रों में बाढ़ मैदानों के विस्तृत भाग हैं, या जहाँ पहाड़ी क्षेत्र हैं, वहाँ यातायात मार्ग प्रायः नदियों के समानान्तर जाते है और उन्हें उपयुक्त स्थानों पर ही पार करते हैं।

उपरोक्त कारकों के आधार पर मानचित्र व्याख्या के निम्नलिखित सोपान हैं:

1. टोपोशीट में दी गई संकेत-संख्या से मानचित्र में दिखाए गए क्षेत्र की स्थिति भारत में मालूम करिए। इसके लिए आप परिशिष्ट III में दिए टोपोशीट के संकेत मानचित्र का अध्ययन कर सकते हैं। इससे आप बड़ी मापनी या 1 इंच बराबर 1 मील वाले स्थलाकृतिक मानचित्र के भौतिक विभागों की विशेषताएं बड़े छोटे स्तर पर जान सकते हैं। मानचित्र की मापनी और समोच्च रेखाओं के बीच का अंतराल मालूम करिए। समोच्च रेखाओं के बीच के अंतराल की मदद से भौतिक लक्षण समझने में मदद मिलेगी।

2. निम्नलिखित लक्षणों को पाँच ट्रेसिंग कागजों पर उतारिए:

   2.1 वृहत स्थलरूप जैसे कटक, एकाकी पहाड़ी और अपरदित भूमि जो समोच्च रेखाओं द्वारा दिखाई गई है।

   2.2 अपवाह-तंत्र और जलीय लक्षण अर्थात् प्रमुख नदी, मुख्य-मुख्य सहायक नदियों, तालाब और कुएँ यदि वे मानचित्र पर बहुत अधिक हैं।

   2.3 भूमि-उपयोग अर्थात् वन, घासभूमि, गुल्मभूमि, कृष्य भूमि की सीमाएँ और अकृष्य भूमि, जैसे चट्टानी बंजरभूमि आदि। कृष्य भूमि की सीमाओं के लिए या तो सारे पीले रंग के क्षेत्र (यदि मानचित्र रंगीन है) को उतारिए अथवा निश्चित अंतराल पर अंकित बिन्दुओं के युगलों द्वारा मानचित्र पर दिखाई कृष्य भूमि की

सीमाओं को उतारिए। मानचित्र की मापनी के अनुसार यथार्थता जानने के लिए समोच्च रेखाओं की जानकारी सहायक होती है।

2.4 बस्तियों और परिवहन के प्रतिरूपों को उतारिए।

3. प्रत्येक लक्षण की मुख्य-मुख्य बातों को स्पष्ट करते हुए उनके वितरण की व्याख्या करिए।

4. ट्रेसिंग कागज पर उतारे गए मानचित्रों में से एक मानचित्र को दूसरे के ऊपर रखकर दोनों के बीच के संबंधों का अध्ययन करिए अर्थात् समोच्च रेखा और भूमि उपयोगों का संबंध, बस्तियों और परिवहन साधनों का संबंध, भूमि-उपयोग और भूआकारों का संबंध, आदि। एक ही मापनी के स्थलाकृतिक मानचित्र और उसके हवाई चित्र की तुलना करने से क्षेत्र के विभिन्न लक्षणों की जानकारी अधिक स्पष्ट हो जाती है।

ट्रेसिंग कागज पर उतारे मानचित्र, मूल मानचित्र, परिच्छेदिका, टिप्पणियाँ, ये सभी मिलकर मानचित्र की व्याख्या का कार्य पूरा करते हैं, जिसमें किसी क्षेत्र के विभिन्न लक्षणों के प्रतिरूपों के वितरण को सही ढंग से स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है।

कुछ चुने हुए स्थलाकृतिक मानचित्रों की व्याख्या

भारतीय सर्वेक्षण विभाग के 1 इंच के स्थलाकृतिक मानचित्रों की कुछ प्लेटों का ध्यानपूर्वक अध्ययन किया जाए यह अपेक्षित है। इनमें से प्रत्येक अलग-अलग क्षेत्रों के बड़े टोपोशीटों के छोटे-छोटे भाग हैं। प्रत्येक बड़े टोपोशीट से दो या तीन भाग इन प्लेटों के रूप में राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद द्वारा प्रकाशित "प्रयोगात्मक भूगोल" में दी गई है जिससे उन्हें मिलाकर टोपोशीट के अधिक से अधिक भाग की जानकारी हो सके।

जो टोपोशीट यहाँ सम्मिलित की गई है वे भारत के विभिन्न भागों का प्रतिनिधित्व करती हैं, उदारणार्थ महाराष्ट्र के कोकनतटीय पट्टी पर थाना जिले का एक भाग, तमिलनाडु के पूर्वी तट पर चिंगलपेट जिले का एक भाग, उत्तर प्रदेश में मिर्जापुर के आसपास के विन्ध्य पठार का किनारा तथा गंगा के मैदान का एक भाग, राजस्थान में अजमेर के दक्षिण में पहाड़ियों का एक भाग और चंडीगढ़ तथा कालका के बीच शिवालिक पहाड़ियों का एक भाग।

उल्हास नदी की निचली घाटी

यह भारतीय सर्वेक्षण विभाग द्वारा प्रकाशित एक इंच की टोपोशीट संख्या 47 ई/4 का एक भाग है। यह महाराष्ट्र राज्य में थाना जिले के एक भाग को प्रदर्शित करता है। उल्हास नदी की ज्वारीय एश्चुअरी इस क्षेत्र का एक महत्वपूर्ण लक्षण है। यह नदी पश्चिम की ओर बहकर अन्त में बंबई पोताश्रय में गिरती है। बंबई महानगर को जीवन प्रदान करने वाली कुछ जीवन-रेखाएँ इस क्षेत्र से होकर जाती हैं।

इस मानचित्र में दिखाए गए क्षेत्र का विस्तार 19° 8′ 30″ उ० से 19° 15′ उ० और 73° पू० से 73° 5′ पू० तक है। इस क्षेत्र का क्षेत्रफल लगभग 100 वर्ग किलोमीटर या 40 वर्गमील है।

इस क्षेत्र को मुख्यत: दो भौतिक भागों में बांट सकते हैं : (1) उल्हास नदी की निचली घाटी और (2) दक्षिण-पश्चिम की ओर उत्तर-दक्षिण दिशा में फैली हुई कटक जो निकटवर्ती निम्न भूमि से एकदम सीधी उठी हुई है।

दक्षिण-पश्चिमी भाग में कटक को छोड़कर अधिकांश क्षेत्र समुद्र-तल से 50 फुट (लगभग 16 मीटर) से कम ही ऊँचा है परन्तु यह बिल्कुल सपाट नहीं है, वरन् तरंगित है, जिसमें छोटी-छोटी पहाड़ियाँ और नदी के दोनों ओर उठे हुए पर्वत-स्कंध हैं।

नदी का विसर्पी मार्ग यह बतलाता है कि नदी अपने निचले भाग में एक काफी सपाट प्रदेश में से होकर बहती हैं। नदी के पूरे मार्ग में निम्न जलतल रेखा तथा उच्च जलतल रेखा बनी हुई हैं। इससे स्पष्ट होता है कि नदी में ज्वार-भाटा आता है।

ज्वार-सीमा दिखाने के लिए प्रयुक्त प्रतीक पर ध्यान दीजिए। नदी-तट के समीप के कच्छ ज्वार-जल के कारण बने हैं। नदी में गिरने वाली छोटी-छोटी नदियाँ मौसमी हैं और ज्वार-सीमा के ऊपर हैं। इससे एक और बात का पता चलता है कि बहुत सी नदियों की सदानीरा प्रकृति मुख्यत: ज्वारीय सीमा द्वारा निर्धारित होती है।

दक्षिणी-पश्चिमी भाग में उपस्थित पहाड़ियाँ एक कटक का अच्छा उदाहरण है। शिखर रेखा की प्रकृति का वर्णन कीजिए, चोटियों तथा उनकी ऊँचाई पर ध्यान दीजिए, कटक की लंबाई-चौड़ाई मापिए तथा धूप-डोंगर से होकर जाती हुई सुरंग पर अनुप्रस्थ काट खींचिए। इस क्षेत्र की स्थानीय भाषा में डोंगर शब्द का अर्थ है बड़ी पहाड़ी।

इस क्षेत्र में आप कौन-सी वनस्पति देखते हैं? ज्वार संबंधी वनस्पति आप कहाँ ढूढ़ेंगे?

संचार के मुख्य मार्ग कौन-कौन से हैं ? क्या वे स्थानीय आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए काफी हैं ? क्या आप को क्षेत्र में उपस्थित यातायात के स्वरूप का कुछ अनुमान लग सकता है ?

इस क्षेत्र के उच्चावच ने संचार के मुख्य मार्गों को किस प्रकार प्रभावित किया है ? रेलमार्गों तथा राष्ट्रीय महामार्गों पर कटक और उल्हास के प्रभावों को ध्यानपूर्वक समझिए।

संचार मार्गों के अतिरिक्त बंबई महानगर की ओर जाने वाले कौन-कौन से जीवन मार्ग हैं, जो इस क्षेत्र से होकर जाते हैं ?

देहाती बस्तियाँ कितनी घनी हैं ? इस क्षेत्र के दक्षिण-पश्चिम में कौन-सा प्रमुख प्राकृतिक साधन है ? क्या इस क्षेत्र में कोई नगरीय केन्द्र भी है ? ऐसी स्थिति कैसे उत्पन्न हो गई है ?

कल्याण : एक मार्ग-संगम नगर

कल्याण नगर की केन्द्रीय स्थिति इस मानचित्र पर प्रकट क्षेत्र का एक प्रमुख लक्षण है। पहले यह एक महत्वपूर्ण प्रशासकीय नगर था, जहाँ बोर घाट, और थलघाट से आने वाले मार्ग मिलते थे जिनमें से एक पश्चिमी घाट में उत्तर-पूर्व से तथा दूसरा दक्षिण-पूर्व से आता था। स्थानीय बोली में घाट शब्द का अर्थ दर्रा होता है। आजकल यह नगर उन रेलमार्गों के जंक्शन पर पड़ता है जो इन घाटों से होकर जाते हैं और बम्बई नगर का देश के अन्य भागों में सम्बन्ध स्थापित करते हैं।

इस मानचित्र पर दर्शाए गए क्षेत्र का अक्षांशीय तथा देशांतरीय विस्तार ज्ञात कीजिए और पहली शीट में दिखाए गए क्षेत्र से उनका सम्बन्ध स्थापित कीजिए।

इस क्षेत्र के सामान्य उच्चावच का कैसे वर्णन करेंगे ?

इसको एक तरंगित मैदान कहिएगा या एकाकी पहाड़ियाँ ?

कल्याण नगर किस नदी के तट पर स्थित है ? क्या यह ज्वारीय नदी है ? ध्यान रखिए कि नगर के समीप का तट 10 फुट से 19 फुट की ऊँचाई तक खड़ा है। क्या इस क्षेत्र में कोई अन्य नदी भी है ? क्या यह एक बारहमासी नदी नहीं है ? नगर में कुछ तालाब भी हैं ? उनमें से कुछ नीले रंग के दिखाए गए हैं, लेकिन एक सादा है। इससे क्या अनुमान लगता है ?

इस क्षेत्र में आपको किस प्रकार के वृक्ष मिलते हैं ? इसमें तथा इससे पहले वाले मानचित्र में क्या आपको वनस्पति में कोई परिवर्तन दृष्टिगोचर होता है ?

यदि आप दोनों ही प्लेटों (शीटों) का अध्ययन करें तो आप देखेंगे कि उल्हास नदी पर केवल दो ही सड़क के पुल हैं। एक पश्चिम में थाना के निकट हैं, और दूसरा कल्याण के पास। इन स्थानों पर पुलों का निर्माण करने के सम्बन्ध में कौन-से प्राकृतिक कारक पाए जाते हैं ? क्या आपके विचार से कल्याण नगर अपनी जलापूर्ति के लिए उल्हास नदी पर निर्भर रह सकता है ?

कल्याण में 7 पक्की सड़कें तथा राष्ट्रीय महत्व के मुख्य रेलमार्ग मिलते हैं। इस नगर में पहुँचने वाले विभिन्न रेल-मार्गों तथा सड़कों को ज्ञात कीजिए। इन संचार के मार्गों और स्थानीय भौतिक लक्षणों, जैसे नदी और पहाड़ियों, जो कल्याण के दक्षिण या दक्षिण-पश्चिम की ओर पड़ती हैं, के मध्य पाए जाने वाले संबंध का होशियारी से अध्ययन कीजिए। विद्युत लाइनों, पाईप लाइनों, टेलीफोन लाइनों को मानचित्र पर देखिए।

रेलमार्गों में कटानों, बाँधों तथा सुरंगों को दिखाने के लिए किन प्रतीकों का प्रयोग किया है ? इस भूभाग के स्वरूप के सम्बन्ध में आप क्या अनुमान लगाते हैं ?

इस क्षेत्र में ग्रामीण बस्तियाँ दूर-दूर फैली हैं, परन्तु वे जहाँ कहीं भी हैं काफी बड़ी हैं और संगठित हैं। वे प्रमुख मार्गों से कच्ची सड़कों द्वारा मिली हैं। मानचित्र में कच्ची-पक्की सड़क तथा पगडण्डी के लिए कौन-कौन-से चिह्न प्रयोग किए गए हैं ?

आरणी : एक तटवर्तीय निचला मैदान

समुद्रतटीय मैदान प्रदर्शित करने वाला यह एक मानचित्र है। यह स्थलाकृति मानचित्र सं० 66 सी/3 का एक भाग है। इस मानचित्र पर दिखलाया गया क्षेत्र मद्रास के चिंगलपेट जिले में है। मद्रास नगर इस क्षेत्र के केवल 16 मील दक्षिण में पड़ता है। इस प्रमुख कृषिप्रधान प्रदेश का महत्वपूर्ण लक्षण तालाब द्वारा सिंचाई है।

अपने एटलस में भारत के मानचित्र पर इस क्षेत्र की स्थिति शीट पर दी गई अक्षांश और देशांतर रेखाओं की सहायता से ज्ञात कीजिए।

आप भूभाग के स्वरूप का वर्णन किस प्रकार करेंगे ? पिछली शीट से यह किस प्रकार भिन्न है ?

यह एक मंद उर्मिल निम्न भूमि का उदाहरण है जिसमें दो अलग-अलग टीले हैं। मंजन कारानई के दक्षिण में टेकरी की ऊँचाई देखिए पर यह संपूर्ण प्रदेश पूर्व की ओर धीरे-धीरे ढालुवाँ होता गया है। यह आप कैसे ज्ञात करेंगे ?

इस क्षेत्र से प्रवाहित होने वाली दो नदियों के नाम बतलाइए ? क्या वे बारहमासी नदियाँ हैं ? इस तथ्य से

स्थानीय वर्षा के संबंध में आप क्या निष्कर्ष निकालते हैं ? नदियों के किनारे अधिकांश रूप से खड़े हैं। इससे किस प्रकार के भूभाग का अनुमान लगता है ?

इस प्रदेश का सबसे बड़ा तालाब कौन सा है ? क्या ये बारहमासी तालाब हैं ? क्या ये प्राकृतिक या मनुष्य निर्मित हैं ? प्रदेश में बहुत से तालाब प्रकीर्ण हैं। उन में से कुछ बड़े और कुछ छोटे हैं। इन तालाबों में से अधिकांश प्राकृतिक हैं, जिनसे बारह मास जल की उपलब्धि होती रहती है। यह आप कैसे सोचते हैं कि इस क्षेत्र में तालाबी सिंचाई बहुत महत्त्वपूर्ण है ? क्या इस प्रदेश में कुँएँ भी हैं ? कच्चे तथा पक्के कुँओं के लिए कौन-कौन से प्रतीक प्रयुक्त होते हैं ? किस प्रकार के कुँएँ यहाँ अधिक मिलते हैं ?

इस क्षेत्र में केले के बागान पर ध्यान दीजिए। कौन-कौन से अन्य वृक्ष मिलते हैं ? इस प्रदेश में किस प्रकार की वनस्पति पाई जाती है ?

प्रदेश के आर-पार सीधी रेखा में उत्तर-दक्षिण जाने वाली सड़क को देखिए। यह साधारणतया इस बात को व्यक्त करती है कि वह प्रदेश समतल है और वहाँ कोई विशेष प्राकृतिक रुकावट नहीं है। सड़क के किनारे लिखे हुए निर्देश-चिह्नों की सहायता से यह ज्ञात कीजिए कि यह सड़क कितनी समतल है।

बस्तियों का अध्ययन कीजिए। क्या इस प्रदेश में शहरी बस्तियाँ हैं ? इस मानचित्र में दिखाई गई सबसे बड़ी बस्ती कौन-सी है ? इसकी अवस्थिति में कौन-कौन से कारक सहायक हैं ?

पोन्नेरि : एक तटवर्तीय निचला मैदान

यह मानचित्र पिछले मानचित्र का अग्रभाग है और पूर्व के निकटवर्ती क्षेत्रों को निरूपित करता है। इस मानचित्र में दिखाया गया क्षेत्र बहुत सी बातों में पिछले मानचित्र से मिलता-जुलता है। फिर भी इसे ध्यानपूर्वक अध्ययन करने और इसकी पिछले मानचित्र से तुलना करने पर कुछ अन्तर स्पष्ट हो जाएँगे।

पिछले मानचित्र में प्रदर्शित क्षेत्र के संबंध में इस मानचित्र में निरूपित भाग की अवस्थिति ज्ञात कीजिए। यह टोपोशीट एक ऐसी सपाट निम्न भूमि को प्रदर्शित करती है जिसकी अति मन्द ढाल पूर्व की ओर है। इस प्रदेश का अधिकांश क्षेत्र समुद्रतल की सतह से 50 फुट से कम ऊँचा है। मानचित्र पर सबसे कम ऊँचाई ज्ञात कीजिए। इस शीट पर सबसे नीचा स्थान कहाँ हो सकता है ?

दोनों मानचित्रों में प्रदर्शित नदियों के मार्गों की तुलना कीजिए। नदी-तल कुछ महीनों तक सूखे रहते हैं, यद्यपि उनके प्रणाल काफी चौड़े हैं। नदी-प्रणाल में उपस्थित द्वीपों से यह प्रकट होता है कि नदी की ढाल बहुत कम है। नदी के किनारे खड़े हैं, जिनकी ऊँचाई 10 से 15 फुट के बीच में है।

इस क्षेत्र में जहाँ-तहाँ बारहमासी तालाब मिलते हैं। इनमें से बहुत से तालाब पिछले मानचित्र में दिखाए गए तालाबों की अपेक्षा छोटे हैं।

इस क्षेत्र में वनस्पति विभिन्न प्रकार की मिलती है, इसमें घास, ताड़ तथा ताड़ के अन्य प्रकार और पर्णपाती वृक्ष सम्मिलित हैं। नारियल, केला तथा काजू के वृक्ष आर्थिक दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं। पिछली शीट पर दिखाई गई वनस्पति से इस क्षेत्र की वनस्पति की तुलना कीजिए। क्या यह बहुत घनी अथवा बिखरी है ? इससे क्या अनुमान लगता है ?

इस मानचित्र में दिखाए गए रेलमार्ग की पिछली दो प्लेटों के रेलमार्गों से तुलना कीजिए। उनसे यह रेलवे लाइन किस प्रकार भिन्न है ? चौड़ी पटरी की दोहरी लाइन, चौड़ी पटरी की इकहरी लाइन, मीटर गेज की दोहरी लाइन, तथा मीटर गेज की इकहरी लाइन के लिए प्रयुक्त प्रतीकों का ध्यानपूर्वक अध्ययन कीजिए।

रेलमार्ग सभी जगह ऊँचे बाँधों से होकर जाता है। उन बाँधों पर ध्यान दीजिए। इनसे भूभाग के स्वरूप के विषय में क्या ज्ञात होता है ?

इस क्षेत्र के यातायात के स्वरूप की पिछली प्लेटों के यातायात के स्वरूप से तुलना कीजिए। इन दोनों में क्या विशेष अन्तर है ?

इस शीट में प्रदर्शित बस्तियों का अध्ययन कीजिए तथा पिछली शीटों की बस्तियों से इनकी तुलना कीजिए। जनसंख्या के घनत्व तथा मनुष्यों के उद्यम के विषय में आप क्या अनुमान लगा सकते हैं ? इस क्षेत्र में मुख्य कृषि-उत्पादों के विषय में आप क्या सोचते हैं ?

मिर्जापुर जिले का विन्ध्याचल पठार

यह प्लेट टोपोशीट संख्या 63 k/12 के केवल एक भाग को प्रदर्शित करती है। इसमें उत्तर-प्रदेश के मिर्जापुर जिले का एक भाग दिखाया गया है। इस क्षेत्र का महत्वपूर्ण भौतिक लक्षण पठारी प्रदेश है, जो विन्ध्याचल की कैमूर पहाड़ियों का एक अग्रभाग है। ये पहाड़ियाँ इस प्रदेश से कुछ किलोमीटर दक्षिण में हैं।

भारत के मानचित्र पर आप इस क्षेत्र की स्थिति कैसे ज्ञात करेंगे ? क्या इस सम्बन्ध में मानचित्र पर दी गई

अक्षांश और देशान्तर रेखाएँ आपकी सहायता कर सकती हैं ?

इस मानचित्र में दी गई उच्चतम तथा निकटतम ऊँचाइयाँ ज्ञात कीजिए। एक स्पष्ट 500 फुट की समोच्च रेखा, जो प्रदेश की उत्तरी तथा पूर्वी भाग से होकर जाती है, इस क्षेत्र के उच्चावच के अध्ययन में महत्वपूर्ण स्थान रखती है। अन्य तीन या चार समोच्च रेखाओं को देखिए जो उसके अधिक निकट तथा लगभग समानान्तर हैं। ये रेखाएँ क्या बतलाती हैं ? ये एक खड़े ढाल को निरूपित करती हैं। मानचित्र के उत्तरी-पूर्वी भाग में राजघाट के निकट खड़े ढाल की ऊँचाई तथा निचाई में कितना अन्तर है ? एक ऊँचे तथा काफी अपार भूखण्ड के किनारे पर पाए जाने वाले तीव्र ढाल पठार के खड़े कगार के द्योतक हैं।

500 फुट की समोच्च रेखा द्वारा पूर्ण या आंशिक रूप में घिरे हुए भू-भाग का अध्ययन कीजिए। वह किस प्रकार उच्चावच को निरूपित करती है ? क्या इस पठारी प्रदेश में अवशिष्ट पहाड़ियाँ हैं ? यदि हैं, तो उनका विवरण लिखिए।

पठार के किनारे पर समोच्च रेखाओं की टढ़ी-मेढ़ी आकृतियों को देखिए। यह किस कारण है ? क्या नदियों तथा पठारों की आकृति में कोई सम्बन्ध है ? जब पठार अनेक गहरी नदी-घाटियों द्वारा कटा-फटा होता है तब उसे विच्छेदित पठार कहते हैं। क्या आप इस क्षेत्र का एक विच्छेदित पठार के रूप में अध्ययन करेंगे ? विशेष उदाहरण देकर अपने उत्तर की पुष्टि कीजिए।

दक्षिण-पूर्व में मझवानी गाँव और उत्तर में चितपुर गाँव में स्थित मन्दिर को मिलाती हुई रेखा पर एक अनुपस्थ काट बनाइए। इस रेखा पर आपके द्वारा बनाई गई परिच्छेदिका की सहायता से प्रमुख भू-चिह्नों और इन रूपों की व्याख्या कीजिए।

इस प्रदेश में दो नदियाँ हैं, एक पश्चिम में तथा दूसरी पूर्व में। वे किस दिशा में प्रवाहित होती हैं ? वे किन-किन बातों में एक-दूसरे से भिन्न हैं ? पठार के पश्चिमी भाग में बहने वाली नदी पर एक बड़े जल-प्रपात की ओर ध्यान दीजिए। जलप्रपात का नाम बताइए तथा इसकी ऊँचाई ज्ञात कीजिए। इस प्रदेश में सबसे बड़ा तालाब कौन-सा है ? यह प्राकृतिक है या कृत्रिम ? इस पर बने बाँध की लम्बाई ज्ञात कीजिए।

इस प्रदेश में कौन-सी वनस्पति पाई जाती है ? इस क्षेत्र में वनस्पति के लिए अधिक उपयुक्त भाग कौन-सा है ?

इस क्षेत्र में तीन प्रमुख सड़कें हैं। शीट के उत्तरी भाग में सड़क के संरेखण का ध्यानपूर्वक अध्ययन कीजिए। इस क्षेत्र के उच्चावच का सड़क के संरेखण पर क्या प्रभाव पड़ता है ? सड़क की लम्बाई मीलों तथा किलोमीटरों में ज्ञात कीजिए।

ध्यान रखिए कि उपर्युक्त दो नदी-घाटियों के बीच किसी भी प्रकार की बस्तियाँ नहीं हैं। पर उस नदी तथा उसकी सहायक नदियों के किनारे बस्तियाँ हैं, वे तांडाडरी ताल में गिरती हैं। इसके क्या-क्या कारण हो सकते हैं ? इस क्षेत्र के लोगों के मुख्य उद्यम क्या हैं ?

मिर्जापुर : एक नदी पर स्थित नगर

यह प्लेट पिछली प्लेट का एक बड़ा भाग है और इसमें उत्तर का निकटवर्ती क्षेत्र निरूपित किया गया है। इस मानचित्र में पूर्वी उत्तर प्रदेश में गंगा के मैदान के विशिष्ट लक्षणों को निरूपित किया गया है। इस प्रदेश में नदी पर स्थित प्रमुख नगर मिर्जापुर की स्थिति से इस मानचित्र का महत्व और भी बढ़ जाता है।

इस मानचित्र पर निरूपित क्षेत्र की स्थिति भारत के छोटे पैमाने पर बने मानचित्र पर, इस प्लेट पर दी गई अक्षांश और देशांतर रेखाओं की सहायता से, ज्ञात कीजिए। (पिछली शीट में दिखाए गए क्षेत्र के संबंध में इस क्षेत्र की स्थिति बतलाइए।

इस क्षेत्र के उच्चावच का वर्णन कैसे करेंगे ? शीट के दक्षिणी सिरे पर अंकित समोच्च रेखा के मान पर ध्यान दीजिए। प्रदेश के दक्षिणी-पूर्वी भाग में कुछ समोच्च रेखाओं को छोड़कर अन्य समोच्च रेखाओं का पूर्णतया अभाव है। इससे क्या पता चलता है ? इस संपूर्ण प्रदेश की न्यूनतम, अधिकतम तथा औसत ऊँचाई ज्ञात करिए। सर्वोच्च रेखाओं के न रहते हुए यह आप कैसे ज्ञात करेंगे ? क्षेत्र का सामान्य ढाल किस दिशा में है ? पिछली शीट में प्रदर्शित क्षेत्र का उच्चावच इस क्षेत्र के उच्चावच से किस प्रकार भिन्न है ?

मानचित्र की पूर्वी व पश्चिमी सीमाओं पर प्रवाहित दो नदियों के मार्गों पर ध्यान दीजिए। जिन क्षेत्रों में होकर यह बहती हैं उनके उच्चावच के संबंध में क्या जान-

कारी मिलती है ? ऐसे भागों के स्वरूप के वर्णन के लिए किस पारिभाषिक शब्द का प्रयोग होता है ?

शीट के पश्चिमी भाग में खड्ड भूमि को देखिए। उससे क्या प्रकट होता है ?

मानचित्र के उत्तरी सिरे पर गंगा नदी के प्रणाल का ध्यानपूर्वक अध्ययन कीजिए। इस नदी के दोनों किनारों की तुलना कीजिए। आप क्या अन्तर देखते हैं ? इन दोनों प्रकार के किनारों के लिए आप किन पारिभाषिक शब्दों का प्रयोग करेंगे ? स्मरण रखिए कि इस शीट पर नदी का जो भाग दिखाया गया है वह नदी के एक बड़े मोड़ का भीतरी किनारा है। वास्तव में नदी का उत्तरी किनारा ऊपर बताए मोड़ का भीतरी किनारा है। इस किनारे पर बालू का जमाव देखिए। दक्षिणी किनारे का ढाल कितना तीव्र है। यह नदी के मोड़ का बाहरी किनारा है।

इस क्षेत्र के पर्णपाती वृक्षों पर ध्यान दीजिए, जो खुले जंगल की तरह दिखाई देते हैं।

किन-किन मुख्य संचार रेखाओं से यह क्षेत्र लाभ प्राप्त कर रहा है ? मुख्य रेलमार्ग के संरेखण पर ध्यान दीजिए। इसके सीधे मार्ग से क्या प्रकट होता है ? ध्यान दीजिए कि मिर्जापुर में कितनी पक्की सड़कें आकर मिलती हैं ? किस सीमा तक नदी का उपयोग परिवहन के लिए होता है ? नदी द्वारा यातायात सबसे अधिक कहाँ होता है ? नदी को पार करने के लिए पीपे के पुल का उपयोग किन ऋतुओं में होता है ?

ग्रामीण बस्तियों के आकार पर ध्यान दीजिए। बहुत-सी बस्तियाँ हैं किन्तु कुछ बड़े आकार की संहत बस्तियाँ भी हैं। यहाँ पर कुछ स्थाई फैली हुई झोंपड़ियाँ भी पाई जाती हैं। क्या आपको कुछ अस्थाई झोपड़ियाँ दृष्टिगोचर होती हैं ? क्या आपको बारहमासी तालाबों और बड़े-बड़े गाँवों की अवस्थिति में कोई संबंध दिखाई पड़ता है ? सड़कों और बस्तियों के मध्य क्या कोई संबंध पाया जाता है ?

यहाँ के लोगों के मुख्य धंधे के विषय में आप क्या सोचेंगे ? इस प्रदेश में सिंचाई के क्या साधन हैं ?

आपके विचार से मिर्जापुर नगर की स्थिति एवं विकास के कौन-कौन से कारक सहायक हैं ? इस नगर की स्थापना गंगा नदी के उत्तरी किनारे पर क्यों नहीं हुई ? विन्ध्याचल की स्थिति की तुलना मिर्जापुर की स्थिति से कीजिए। दोनों स्थितियों में कौन-सी स्थिति अधिक अनुकूल है और क्यों ? आप कैसे बताएंगे कि मिर्जापुर एक धार्मिक महत्व का स्थान है ?

गंगा का एक बाढ़-मैदान

यह प्लेट स्थलाकृतिक मानचित्र-संख्या 63K/12 का एक भाग है और पहली दो प्लेटों का अग्रभाग है। यह मानचित्र मिर्जापुर जिले के एक भाग तथा वाराणसी जिले के दक्षिणी सिरे को निरूपित करता है। गंगा नदी का जो विसर्पी मार्ग है, वह इस क्षेत्र में सबसे अधिक भौगोलिक महत्व का लक्षण है।

शीट पर दी गई अक्षांश व देशांतर रेखाओं की सहायता से इस क्षेत्र की स्थिति बताइए। मापनी का पढ़कर नदी के जलमार्ग की लम्बाई तथा अधिकतम और न्यूनतम चौड़ाई ज्ञात करिए। नदी की बिल्कुल ठीक लम्बाई नापने के लिए दोनों प्लेटों को सटाकर रखिए।

समोच्च रेखाओं के इस शीट पर अनुपस्थित होने से ज्ञात होता है कि इस क्षेत्र की स्थलाकृति बिल्कुल समतल है। इस समतल मैदान की एकरूपता गंगा के विसर्पी मार्ग द्वारा खंडित होती है परन्तु दो एक विलगित टेकरियाँ तथा खड्ड भूमि के एक छोटे से भाग, जो प्रदेश के उत्तरी-पूर्वी क्षेत्र में पड़ते हैं, को छोड़कर क्षेत्र की स्थलाकृति बिल्कुल सपाट है। टेकरियों को आकृति-रेखा से दिखाया गया है। आकृति-रेखा, समोच्च रेखा से किस प्रकार भिन्न है ? यह किस विशेष कार्य के लिए प्रयुक्त की जाती है ?

यह कैसे ज्ञात होता है कि नदी की ढलान बहुत कम है ? नदीतल और किनारों पर बालू एकत्र होने के क्या कारण हो सकते हैं ? पर यह ध्यान देने योग्य बात है कि जहाँ पर नदी एक तंग प्रणाल में होकर बहती है वहाँ बालू का निक्षेप नहीं है। दूसरी तरफ जहाँ नदी का पाट बहुत चौड़ा है, वहाँ बालू का जमाव भी सबसे अधिक है। बालू का निक्षेप साधारणतया नदी के मोड़ के भीतरी किनारे पर होता है, जहाँ पर जलधारा की गति अपेक्षाकृत मन्द होती है। नदी के पानी की गति में कमी आने पर उसके भार-वहन-क्षमता में भी कमी आ जाती है और इस कारण नदीतल पर बालू का निक्षेपण अधिक होता है।

नदी के मोड़ के बाहरी किनारे पर खड़ा ढाल होता है, क्योंकि उस किनारे पर नदी का बहाव तेज होता है, जिससे वहाँ पर किनारे का अपरदन अधिक होता है। नदी के मोड़ का भीतरी किनारा पर ढाल मन्द होता है।

इस प्रदेश में वृक्षों की संख्या कम है, इसे ध्यान से देखिए। जो कुछ भी वृक्ष हैं वे पक्की सड़कों के किनारे मिलते हैं। उत्तर की ओर कुछ बगीचे या उपवन हैं, जो सम्भवत: आम के बाग हो सकते हैं।

इस शीट की उत्तरी सीमा के साथ-साथ एक रेलमार्ग जाता है। उसकी उत्तर-दक्षिण एक शाखा गंगा के किनारे तक गई है। मिर्जापुर घाट रेलवे स्टेशन (पिछली प्लेट में देखिए) के नाम से ही, नदी के सामने किनारे पर स्थित मिर्जापुर नगर का महत्व प्रकट होता है। रेलवे लाइन के समानान्तर पक्की सड़क भी जाती है, जो पीपे के पुल द्वारा नदी को पार करती है।

इस शीट तथा पिछली शीट पर नदी के दोनों तरफ की बस्तियों की तुलना कीजिए। शीट के अधिकतर भाग में बस्तियों की विरलता का आप किस प्रकार स्पष्टीकरण करेंगे ? प्रदेश के ऊपरी भाग में कुछ घनी बस्तियाँ हैं। इससे क्या प्रकट होता है ? पिछली शीट में नदी के उत्तरी तट पर बड़े आकार के संहत गाँव होने के क्या कारण हो सकते हैं जबकि उस शीट के अधिकांश क्षेत्र में बस्तियाँ नहीं हैं ?

अजमेर जिले में अरावली की पहाड़ियाँ

यह टोपोशीट संख्या 45 J/8 का एक भाग है। इस पर राजस्थान के अजमेर जिले के एक भाग को निरूपित किया गया है। इस प्रदेश का महत्वपूर्ण लक्षण यह है कि इस क्षेत्र से होकर जाने वाली अरावली श्रेणी इस भाग में पड़ती है। अरावली पर्वत पृथ्वी के सबसे प्राचीन पर्वतों में से है। अब वे उस समय की बहुत ऊँची पर्वतमाला के केवल अवशेष मात्र ही रह गए हैं।

शीट के अक्षांशीय तथा देशान्तरीय विस्तार को ज्ञात कीजिए। अपने एटलस में इस प्रदेश की स्थिति ज्ञात कीजिए।

उच्चावच के आधार पर इस प्रदेश को चार अलग-अलग विभागों में बाँट सकते हैं—उत्तरी-पश्चिमी पहाड़ी प्रदेश, घाटी का चौड़ा प्रदेश, पतला और लम्बा पहाड़ी प्रदेश तथा दक्षिणी-पूर्वी मैदान। ये सभी विभाग एक-दूसरे के समानान्तर हैं।

घाटी का चौड़ा प्रदेश तथा पतला-लम्बा पहाड़ी प्रदेश इस क्षेत्र के सबसे महत्वपूर्ण भौतिक विभाग हैं।

इस शीट में उत्तरी-पश्चिमी तथा दक्षिणी-पूर्वी सिरों को मिलाती हुई रेखा पर एक अनुप्रस्थ काट खींचिए। इस परिच्छेदिक चित्र पर पड़ने वाली सड़कों, नदियों तथा कटकों के शिखर के नाम लिखिए।

उत्तर-पश्चिम और दक्षिण-पूर्व को बहने वाली नदियों के बीच विस्तृत जल-विभाजक तंग तथा लम्बा है। इसके दोनों पार्श्वों पर कगारों में काफी ढलान है। क्या आप पहाड़ियों के आधार से इन कगारों की ऊँचाई माप सकते हैं ? जल-विभाजक की औसत ऊँचाई समुद्रतल से 1850 फुट है। इसकी शिखर-रेखा ज्ञात कीजिए।

उत्तरी-पश्चिमी पहाड़ी प्रदेश अपेक्षाकृत एक कम ऊँचाई की कटक है। एक स्थान पर इसकी स्थानांकित ऊँचाई 1673 फुट है जो इस प्रदेश का सबसे ऊँचा स्थान है। इस मानचित्र पर समोच्च रेखाओं के बीच अंतराल कितना है ?

चौड़ा घाटी-प्रदेश और दक्षिणी-पूर्वी मैदान किस प्रकार की स्थलाकृति को निरूपित करते हैं ? क्या यह बहुत सपाट, एक दिशा में मन्द रूप से ढलवाँ या तरंगित है ? इसकी सामान्य ऊँचाई ज्ञात करिए।

इस प्रदेश की नदियाँ मौसमी हैं। इनमें से एक को छोड़कर, जो मनुष्य द्वारा निर्मित बारहमासी तालाबों से जल प्राप्त करती है, बाकी सभी नदियाँ वर्षा ऋतु के अलावा सूखी रहती हैं।

मैदान के अधिकांश क्षेत्र में खेती होती है। नदियों के मौसमी होने के कारण यह अनुमान लगाया जा सकता है कि इस प्रदेश में वर्षा की कमी है। इस कारण यहाँ पर खेती को सिंचाई के साधनों पर निर्भर रहना पड़ता है। सिंचाई के लिए, क्षेत्र में पाए जाने वाले तालाबों, बाँधों तथा कुँओं से जल मिलता है।

दो वनीय क्षेत्रों को छोड़कर प्रदेश में वृक्ष दूर-दूर पर मिलते हैं। इस प्रदेश में किस प्रकार की वनस्पति मिलती है ?

इस क्षेत्र में मुख्यत: बैलगाड़ी-मार्ग मिलते हैं। इस प्रदेश को कितने प्रमुख मार्ग पार करते हैं ? इन परिवहन के मार्गों को इस क्षेत्र के भौतिक लक्षणों से संबंधित कीजिए।

बस्तियों के आकार पर ध्यान दीजिए। वे बड़ी तथा संहत बस्तियाँ हैं। ये बस्तियाँ काफी दूर-दूर स्थित हैं। इससे इस क्षेत्र में जनसंख्या के विरल होने का आभास मिलता है।

ब्यावर—एक नए नगर की स्थिति

यह प्लेट पिछली शीट का एक अग्रभाग है जिसमें उससे पश्चिम में लगे हुए प्रदेश को प्रदर्शित किया गया है। अजमेर जिले के अतिरिक्त इस मानचित्र में दिखाए गए क्षेत्र के अंतर्गत, राजस्थान के पाली जिले का भी एक भाग सम्मिलित है। इस प्रदेश में अजमेर नगर के उत्तर-पूर्व का भी लघु भाग सम्मिलित है। इस प्रदेश से अजमेर नगर उत्तर-पूर्व में केवल 29 कि० मी० की दूरी पर है। इस मानचित्र पर निरूपित क्षेत्र का सबसे महत्वपूर्ण लक्षण ब्यावर नगर की संगम स्थिति है।

यह प्रदेश 26°5′ उ० से 26°10′ उ० अक्षांशों और 74°15′ पू० से 74°22′ पू० देशान्तरों के बीच फैला है। इसका क्षेत्रफल लगभग 40 वर्गमील या 100 वर्ग किलोमीटर है।

मानचित्र में सबसे ऊँचे तथा सबसे नीचे स्थानों को ज्ञात कीजिए। उनकी ऊँचाई में क्या अन्तर है? शीट में समोच्च रेखाओं तथा स्थान की ऊँचाइयों का अध्ययन करिए। 1500 फुट से ऊपर के स्थलों को हल्के रंग से रँगिए और इस प्रकार मानचित्र पर पहाड़ी भागों को ज्ञात करिए। क्या क्षेत्र को विभिन्न विभागों में बाँटा जा सकता है? आप उनका वर्णन किस प्रकार करेंगे?

केवल कुछ छोटी विलगित पहाड़ियों तथा टेकरियों को छोड़कर शेष विस्तृत घाटी-प्रदेश की स्थलाकृति समतल है। कुछ पहाड़ियाँ आसपास के क्षेत्रों से 200 फुट ऊँची हैं, और उनका ऊपरी भाग गोल है। घाटी-प्रदेश की साधारण ऊँचाई क्या है? इस क्षेत्र में खड्ड भूमि कहाँ मिलती है?

इस क्षेत्र की मुख्य नदियाँ मकरेरा नदी की सहायक नदियाँ हैं। क्या ये नदियाँ मौसमी हैं या बारहमासी? इस पहाड़ी क्षेत्र में नदियों की घाटियाँ देखिए। क्या समोच्च रेखाओं के अंतराल से इन घाटियों की आकृति तथा पहाड़ियों के तीव्र ढलान के विषय में कुछ ज्ञात हो सकता है? यह पहाड़ी प्रदेश नदियों द्वारा कितना विच्छेदित हो चुका है?

इस क्षेत्र के अपवाह-तंत्र में सुधार की दृष्टि से कौन-कौन से मानवकृत लक्षण हैं? इस मानचित्र पर बाँध किस प्रकार दिखाए गए हैं? क्या वे इस क्षेत्र में अक्सर मिलते हैं? दक्षिणी-पश्चिमी भाग में अपवाह प्रतिरूप एक बड़ा रोचक लक्षण उपस्थित करता है। इस क्षेत्र में सभी दिशाओं में बहने वाली नदियाँ अपवाह के एक अरीय रूप को निरूपित करती हैं। इस क्षेत्र में जो अरीय अपवाह पाया जाता है, वह वास्तव में एक बहुत लघु पैमाने पर है, तथा केवल स्थानीय है।

इस क्षेत्र में किस प्रकार की वनस्पति मिलती है? पश्चिमी पहाड़ी प्रदेश में जंगली भाग सीमित क्षेत्र में मिलते हैं, ऐसा क्यों है?

इस प्रदेश में वर्तमान संचार-साधन प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हैं। इस क्षेत्र में सड़कों तथा रेलों पर उच्चावच के प्रभाव बतलाइए। एक मार्ग द्वारा कौन-कौन से लक्षण अपनाए तथा छोड़े जाते हैं जिससे उनका ढलान काफी समतल रहे? सरधना और चंग गाँवों को मिलाती हुई रेखा पर एक अनुप्रस्थ काट खींचिए और परिच्छेदिका पर रेलवे लाइन तथा सड़क की स्थिति अंकित कीजिए।

ब्यावर (नया नगर) इस पूरे क्षेत्र में एक ही नगरीय केन्द्र है। यह आस-पास के क्षेत्रों के कृषि उत्पादों पर आधारित है। यह अपनी पुरानी स्थिति से कितनी दूर है? क्या यह एक प्रमुख मार्ग संगम है? कितने और महत्वपूर्ण मार्ग हैं जो यहाँ मिलते हैं? यह बस्ती कितनी बड़ी है? ब्यावर और ब्यावर नया नगर की स्थितियों की तुलना कीजिए। ब्यावर (नया नगर) की अक्षांश और देशान्तर रेखाओं को ज्ञात कीजिए और भारत के मानचित्र पर उनकी स्थिति बतलाइए।

ब्यावर (नया नगर) को छोड़कर शेष बस्तियों के स्वरूप देहाती हैं। ग्रामीण बस्तियाँ दो प्रकार की हैं—छितरी झोपड़ियाँ और संहत गाँव। जनसंख्या-वितरण की साधारण रूपरेखा का ध्यानपूर्वक अध्ययन कीजिए। क्या ये सघन हैं अथवा विरल?

अम्बाला जिले में शिवालिक की पहाड़ियाँ

यह शीट-संख्या 53B/13 का एक भाग है। इसमें अम्बाला जिले के एक भाग को प्रदर्शित किया गया है। इस मानचित्र पर दिखाई गई पहाड़ियाँ इस क्षेत्र के अधिकतर भाग को घेरती हैं। यह पहाड़ियाँ शिवालिक श्रेणी अर्थात् हिमालय की पाद पहाड़ियों का एक भाग है।

इस प्रदेश के अक्षांशीय तथा देशान्तरीय विस्तार पर ध्यान दीजिए तथा चण्डीगढ़ के संदर्भ में इस प्रदेश की स्थिति ज्ञात कीजिए।

इस शीट पर दिखाई गई उच्चतम तथा निम्नतम स्थानों की ऊँचाई ज्ञात करिए। भूमि का सामान्य ढाल किस दिशा में है ? इस प्रदेश को आप किन प्रमुख भौतिक विभागों में बाँटेंगे ?

पहाड़ी भाग के अत्यधिक विच्छेदित स्वरूप पर ध्यान दीजिए। धरातल से ये पहाड़ियाँ कितनी ऊँचाई पर हैं ? इन पहाड़ियों के ढाल कैसे हैं ? क्या आप इस क्षेत्र में पर्वतीय कगार देखते हैं ? वे कहाँ पर हैं ? कुछ उदाहरण दीजिए।

विसर्पी मार्ग वाली नदियों के तंग लेकिन सपाट घाटी-तलों को देखिए। इस प्रकार की नदियों में पटियाली राव की मुख्य सहायक नदियाँ तथा सुखना चोआ अच्छे उदाहरण हैं।

ध्यान दीजिए कि कटक के आर-पार सभी मुख्य नदियाँ उत्तर-पूर्व से दक्षिण-पश्चिम दिशा में एक-दूसरे के समानान्तर बहती हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि सभी नदियाँ अभिशीर्ष अपरदत करने में व्यस्त हैं, जिसके कारण जल-विभाजक पीछे की ओर हटता जा रहा है। उन नदियों को ध्यानपूर्वक देखिए जो मानचित्र के पूर्वी तथा उत्तर-पूर्वी सीमाओं तक पहुँचती हैं।

सावधानी से इस बात का अध्ययन करिए कि जैसे ही नदियाँ मैदानों में उतरती हैं, उनके स्वभावों में क्या परिवर्तन होते हैं ? एकाएक नदीतलों के चौड़े हो जाने, उनके मार्ग गुंफित होने तथा उनके प्रणालों में द्वीपों के बनने के क्या कारण हो सकते हैं ? मैदान में नदियों के किनारे पर खड्डों तथा अवनालिकाओं की ओर ध्यान दीजिए। इससे ज्ञात होता है कि मैदान उन जलोढ़क निक्षेपों से बना है, जो शिवालिक पहाड़ियों से नदियों द्वारा ढोए और यहाँ लाकर बिछाए गए।

ध्यान दीजिए कि क्षेत्र में पहाड़ियों पर भी बहुत कम वनस्पति है। यह इस बात की दूसरी पुष्टि करता है कि पहाड़ियाँ बुरी तरह से अपरदित हुई हैं।

इस क्षेत्र में आप पक्की सड़कें कहाँ देखते हैं ? बैल-गाड़ी वाले मार्ग भी मुख्यत: प्रदेश के दक्षिणी-पश्चिमी भाग में ही मिलते हैं जो या तो मैदान हैं अथवा विस्तृत घाटी का क्षेत्र है। गिरिपाद के किनारे से जाने वाले ऊँट-मार्ग पर भी ध्यान दीजिए। इसी प्रकार के ऊँट-मार्ग पहाड़ियों पर भी मिल सकते हैं। परन्तु नदीतल के किनारे पहाड़ी पर केवल एक ही पगडंडी है।

प्रमुख ग्रामीण बस्तियाँ गिरिपाद के किनारे तथा मैदान में ही मिलती हैं। ये बस्तियाँ संहत हैं। लेकिन एक-दूसरे से काफी दूर हैं। इससे प्रदेश की निर्धनता का अनुमान लगाया जा सकता है। पहाड़ियों पर जो बस्तियाँ हैं, उनमें छितरी झोंपड़ियाँ पाई जाती हैं और वे भी एक-दूसरे से बहुत दूर हैं। इस सम्पूर्ण प्रदेश में एक भी नगर नहीं है।

पिंजौर—शिवालिक में एक घाटी

यह प्लेट पिछली प्लेट का एक अग्रभाग है, जो पूर्व में एक निकटवर्ती क्षेत्र को प्रदर्शित करती है। इस मानचित्र में उस क्षेत्र को निरूपित किया गया है जो चण्डीगढ़ से उत्तर-पूर्व में पड़ता है। शिवालिक पहाड़ियों में एक घाटी, इस शीट का महत्वपूर्ण लक्षण है।

पिछली शीट के संबंध में भारत के मानचित्र पर इस क्षेत्र की स्थिति जानने के लिए अक्षांश व देशांतर रेखाओं को ज्ञात कीजिए। शीट पर दिखाए गए क्षेत्र का कुल क्षेत्रफल निकालिए। इस प्रदेश को कितने भौतिक भागों में बाँटा जा सकता है ? इन भौतिक भागों के नाम बताइए। शीट के उत्तरी-पूर्वी तथा दक्षिणी-पश्चिमी सिरों को मिलाने वाली रेखा पर एक अनुप्रस्थ काट खींचिए। एक रेल-मार्ग, एक पक्की सड़क, नदी-प्रणाल तथा जंगल की स्थितियों को परिच्छेदिका पर दिखलाएँ।

क्षेत्र के दक्षिणी-पश्चिमी भाग में शिखर-रेखा, उसकी प्रवृत्ति तथा शिखरों की ऊँचाइयों का वर्णन कीजिए। इस रेखा के दोनों तरफ के ढालों की तुलना कीजिए, क्या आप इस रेखा को जलविभाजक कहेंगे ? यदि हाँ तो क्यों ?

पूर्व की ओर की पहाड़ियाँ दक्षिण-पश्चिम की पहाड़ियों से किस प्रकार भिन्न हैं ? मानचित्र पर दिखाए क्षेत्र की अधिकतम लम्बाई मालूम कीजिए। कुछ चोटियों पर बनाए गए त्रिकोणीय सर्वेक्षण-बिन्दु पर ध्यान दीजिए।

झाझरा नदी की घाटी की परिच्छेदिका का अध्ययन कीजिए। यह एक असममित (asymmetrical) घाटी का अच्छा उदाहरण है। अर्थात् घाटी के एक ओर का ढाल दूसरी ओर की अपेक्षा अधिक है। घाटी के किस ओर का ढाल खड़ा है ? दूसरी ओर का ढाल कितना मन्द है ? ध्यान देने योग्य बात है कि नदी की सभी मुख्य सहायक नदियाँ पूर्वी पहाड़ियों से निकलती हैं।

झाझरा समेत इन सभी नदियों के मौसमी होने पर ध्यान दीजिए। वे वर्षा ऋतु में बहुत अधिक जल प्रवाहित करती हैं। इस बात का विचार आप किस आधार पर करते हैं ?

वर्षा ऋतु में जब ये पहाड़ी नदियाँ सक्रिय होती हैं तो उनका क्रिया-क्षेत्र केवल जलप्रवाह तक ही सीमित नहीं रहता। वे एक बड़े पैमाने पर भूमि अपरदन के लिए भी उत्तरदायी हैं। इस शीट पर भूमि तथा मिट्टी के अपरदन के आप क्या लक्षण देखते हैं ?

शीट के दक्षिणी सिरे पर नदियों के किनारे अवनालिकाओं और खड्डों पर ध्यान दीजिए। झाझरा तथा उसकी सहायक नदियों के प्रणालों में द्वीपों की उपस्थिति को ध्यानपूर्वक देखिए। वे किस प्रकार निर्मित हुए हैं ?

इस अपवाह का एक रोचक लक्षण कौशल्या नदी का गुम्फित प्रणाल है। इससे इस बात का पता चलता है कि पहाड़ी नदियाँ अपने साथ बहुत अधिक जलोढ़क लेकर आती हैं, जिसे वे अपनी तलहटी में उस समय जमा करती हैं, जब उनके जल की गति मन्द ढाल के कारण अतिधीमी हो जाती है।

कौशल्या नदी अपने निचले भाग में केवल एक मौसमी नदी है। परन्तु अपने ऊपरी मार्ग में यही एक बारहमासी नदी है। आप इस तथ्य को किस प्रकार समझा सकते हैं ? उस क्षेत्र का ध्यानपूर्वक अध्ययन कीजिए जहाँ पर बारहमासी नदी केवल बरसाती नदी में परिणत हो जाती है। उन नदियों को देखिए जो कौशल्या नदी में गिरने की बजाय नीचे लुप्त हो जाती हैं। इससे ज्ञात होता है कि इस क्षेत्र में तमाम जलोढ़ पंख हैं, जहाँ पानी रेत में समा जाता है। इससे यह भी स्पष्ट होता है कि पहाड़ी क्षेत्र की एक बारहमासी नदी मैदान में आकर बरसाती बन जाती है।

इस क्षेत्र में आप कौन सी वनस्पति देखते हैं ? संरक्षित एवं राजकीय वनों को देखिए।

इस प्रदेश के परिवहन-मार्गों का वर्णन कीजिए। क्या आप सोचते हैं कि वे स्थानीय आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए बनाए गए हैं ? परिवहन के मुख्य मार्गों तथा उच्चावच का संबंध स्थापित कीजिए।

पिंजौर किला तथा महल की स्थिति से उसकी ऐतिहासिक महत्ता और रमणीक स्थान होने का बोध होता है। पिंजौर इस क्षेत्र का एक नगर है। इससे ज्ञात होता है कि यह महल के कारण ही बसा है। क्या आप इसे क्षेत्र का एक संग्रहात्मक एवं वितरण केन्द्र कह सकते हैं ?

कुछ गाँवों को छोड़कर क्षेत्र की अधिकांश बस्तियाँ छितरी झोंपड़ियों के रूप में मिलती हैं। घाटी में कुछ बस्तियाँ हैं, लेकिन वे किसी नदी के बहुत निकट नहीं हैं। वनों से आच्छादित पूर्व की पहाड़ियों के बीच काफी गाँव मिलते हैं। क्या आप सोचते हैं कि यहाँ के लोग नदी की तलहटी की अपेक्षा पहाड़ियों पर रहना अधिक पसंद करते हैं ? यदि ऐसा है तो क्यों ? पहाड़ियों पर बहुत से ऊँट-मार्ग तथा पगडंडी देखिए। क्या इस क्षेत्र में वन से प्राप्त वस्तुओं का अधिक महत्व है ?

अभ्यास

1. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लिखिए :
   1. मानचित्र कितने प्रकार के होते हैं ?
   2. मानचित्र स्थापन का क्या अर्थ है ?
   3. भू-कर मानचित्र स्थलाकृतिक मानचित्र से किस प्रकार भिन्न है ?
   4. मानचित्र की व्याख्या का क्या अर्थ है ?
   5. स्थलाकृतिक मानचित्रों की व्याख्या किन सामान्य शीर्षकों के अंतर्गत की जाती है ?
2. निम्नलिखित पर टिप्पणियाँ लिखिए :
   1. दीवारी मानचित्र

2. उपांत विवरण
3. टोपोशीट या स्थलाकृतिक मानचित्र
4. उच्चावच मानचित्र

3. यदि आप किसी स्थलाकृतिक मानचित्र का अध्ययन कर रहे हैं, जिसमें कुछ बस्तियाँ दिखाई गई हैं, तो उस मानचित्र से आप कौन-कौन-सी बातें ज्ञात करेंगे ? मुख्य जानकारी प्राप्त करने के लिए आप कौन से विशिष्ट प्रश्नों के उत्तर मानचित्र में ढूंढ़ना पसंद करेंगे ?

4. पुस्तक में दी गई टोपोशीटों का ध्यानपूर्वक अध्ययन कीजिए तथा नीचे लिखे प्रश्नों के उत्तर लिखिए :
   1. मानचित्र पर दिए पैमाने की सहायता से अरणी शीट पर दिखाए 5′ की दूरी की दो देशान्तर रेखाओं के बीच की वास्तविक दूरी ज्ञात करिए। पिंजोर शीट पर भी वैसा कीजिए और अपने परिणामों की तुलना कीजिए। इस तुलना से आपने क्या निष्कर्ष निकाला ?
   2. उल्हास-नदी की घाटी की शीट और पोन्नेरि शीट पर दिखाए भूभागों की तुलना कीजिए।
   3. उल्हास, गंगा तथा झाझरा की घाटियाँ, जो तीन विभिन्न शीटों पर दिखाई गई हैं, एक-दूसरे से किस प्रकार भिन्न हैं ?
   4. कल्याण शीट और मिर्जापुर शीट पर दिखाए गए परिवहन के साधनों की तुलना कीजिए और स्पष्ट कीजिए कि उनमें क्या-क्या समानताएँ एवं विभिन्नताएँ हैं ?
   5. अरावली शीट पर दिखाई गई बस्तियाँ मिर्जापुर शीट पर प्रदर्शित की गई बस्तियों से किस प्रकार भिन्न हैं ?

5. निम्नलिखित के लिए रूढ़ चिह्नों को स्वयं बनाइए :
   1. ज्वार-सीमा, 2. नदी के बड़े किनारे, 3. रेलमार्ग की सुरंग, 4. बारहमासी तालाब, 5. बाँस, 6. जलप्रपात, 7. नाव-सेवा, 8. पीपों का पुल, 9. बाग-बगीचे, 10. छितरी झोंपड़ियाँ, 11. पक्का कुआँ तथा 12. खड्ड भूमि।

पुस्तकें

म्योस, ए० ई०, रीडिंग टोपोग्राफिग मैप्स, यूनिवर्सिटी ऑफ लंदन प्रेस लि०, लंदन, 1960, पृ० 6-80

सिंह, आर० एल०, एण्ड दत्त, पी० के०, एलीमेन्ट्स ऑफ प्रैक्टीकल ज्योग्राफी, स्टूडेण्ट्स, फ्रेण्ड्स, इलाहाबाद, 1960 पृ० 4-9, 98-132 और 344-346

बॉयगॉट, जे०, एन इन्ट्रोडक्शन टू मैप वर्क एण्ड प्रैक्टीकल ज्योग्राफी, यूनिवर्सिटी ट्यूटोरियल प्रेस लि०, लंदन, 1962, पृ० 1-7, 77-86, 99-102 और 106-154

लॉकी, बी०, द इन्टरप्रीटेशन ऑफ ऑर्डिनान्स सर्वे मैप्स एण्ड ज्योग्राफीकल पिक्चर्स, जॉर्ज फिलिप्स एण्ड सन्स लि०, लंदन, 1958, पृ० 10-32

मार्टिन, एए० डब्लू०, ऑर्डिनान्स सर्वे मैप्स इन स्कूल्स, एडवार्ड आर्नेल्ड पब्लिशर्स लि०, लंदन, 1960, पृ० 51-71

डिक, पी०, मैप वर्क, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली, 1958, पृ० 1-4, 15-16 और 31-43

फॉक्स, सी० एस०, फिजीकल ज्योग्राफी फॉर इंडियन स्टूडेण्ट्स, मैकमिलन एण्ड कं०, लंदन, 1942, पृ० 46-51

रंजन, एम० एल०, मैप रीडिंग, नैशनल कांउसिल ऑफ एजुकेशन रिसर्च एण्ड ट्रेनिंग, नई दिल्ली, 1963, पृ० 1-2 और 23-30

डेवर्सन, एच० जे० एण्ड लैम्पित, आर०, द मैप दैट केम टू लाईफ, आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, लंदन, 1948

अध्याय 5

मौसम का अध्ययन

मनुष्य चाहे कहीं भी रहता हो, उसके जीवन एवं उसके क्रिया-कलापों पर मौसम का सबसे अधिक प्रभाव पड़ता है। मौसम का अध्ययन सार्वजनिक हित का विषय है। मौसम की अनिश्चितता एवं असमानता अनेक वर्षों से मनुष्य जाति का ध्यान आकर्षित करती आ रही है। कुछ समय पूर्व मौसम की आज के समान सुव्यवस्थित जानकारी प्राप्त करना असंभव था। उस समय मौसम की जानकारी केवल मनुष्य के व्यक्तिगत ज्ञान तक ही सीमित थी अथवा यह अपूर्ण आँकड़ों पर आधारित थी। गत दशाब्दी में मौसम विज्ञान अर्थात् मौसम और जलवायु के सुव्यवस्थित अध्ययन में बहुत अधिक प्रगति हुई है। मौसम की दिन-प्रतिदिन की घटनाओं को मापने के लिए मौसम-उपग्रह दिन-रात पृथ्वी का चक्कर लगाते रहते हैं और उनकी मदद से अब एक दिन, सप्ताह, महीना या ऋतु के मौसम का सही पूर्वानुमान लगाना आसान हो गया है।

वायुमंडल की बहुत-सी दशाओं का अब हम ठीक-ठीक माप कर सकते हैं। इनमें से प्रमुख हैं :

(1) तापमान
(2) वायुमंडलीय दाब
(3) पवन
(4) आर्द्रता
(5) मेघाच्छन्नता और
(6) वर्षण

ये मौसम के प्रधान तत्व हैं। मौसम के किसी एक तत्व के परिवर्तन से अन्य तत्वों में भी परिवर्तन संभव है। कभी-कभी एक तत्व दूसरे की अपेक्षा अधिक स्पष्ट दिखाई पड़ता है। अत: एक मुख्य मौसमी तत्व के आधार पर, मौसम की साधारण दशाओं को मोटे तौर पर सामान्यीकृत किया जा सकता है, जैसे 'वर्षामय', 'उमस वाला', 'बदली वाला' 'तेज पवन वाला' तथा 'धूपमय' मौसम।

मौसम के पूर्वानुमान से हमें, पहले से संभावी बुरे मौसम से सुरक्षा के उपाय करने में सहायता मिलती है जैसे तूफान, झंझा, मूसलाधार वर्षा आदि। उदाहरणार्थ मौसम का कुछ दिन पूर्व अनुमान हो जाने से किसानों तथा जलयान-चालकों को अपना काम ठीक ढंग से करने में बड़ी सहायता मिलती है। इसी प्रकार मौसम का कुछ घंटे पूर्व अनुमान हो जाने से वायुयान की उड़ानों में बड़ी मदद मिलती है। परन्तु मौसम का पूर्वानुमान प्राप्त करना आसान काम नहीं है। इस कार्य को ठीक से करने के लिए मौसम जानने वाले को कई प्रकार के यंत्रों की आवश्यकता पड़ती है, जो उसके लिए विशेष रूप से निर्मित होते हैं। उसे उन यंत्रों के प्रयोग जानने की आवश्यकता होती है। उसे आस-पास के क्षेत्रों के मौसम ज्ञान की भी आवश्यकता पड़ती है।

तापमान का मापन

स्वच्छन्द प्रवाहित वायु के तापमान का ज्ञान ऋतु-ज्ञाता को होना अत्यन्त आवश्यक है क्योंकि इसके कारण विभिन्न प्रकार के मौसम परिवर्तन होते रहते हैं। जो यंत्र तापमान के ठीक मापन के लिए निर्मित किया गया है, उसे *थर्मामीटर* या तापमापी कहते हैं। इसका शाब्दिक अर्थ होता है *तापमापक*।

थर्मामीटर का निर्माण इस बात पर आधारित है, कि

कोई भी वस्तु चाहे वह ठोस, तरल या गैस के रूप में हो, गर्म होने पर एक विशेष रूप में बढ़ती है। गैसें सबसे अधिक बढ़ती हैं, क्योंकि वे ताप की सबसे अधिक ग्राही होती हैं। परन्तु साथ ही इस प्रकार का थर्मामीटर आकार में बहुत बड़ा होगा। अतः तरल पदार्थों का उपयोग थर्मामीटर में किया जाता है, क्योंकि तरल वस्तुवाला थर्मामीटर छोटा होता है तथा उसे आसानी से प्रयोग किया जा सकता है। धरातलीय मौसम प्रेक्षणों के लिए इन थर्मामीटरों का आमतौर से प्रयोग किया जाता है। साधारणतया पारा या अलकोहल का प्रयोग मानक थर्मामीटर में तरल वस्तु के रूप में किया जाता है।

थर्मामीटर में एक बन्द पतली शीशे की नली होती है जिसमें एक समान आकार का सूराख होता है, जो एक ओर बन्द रहता है। इसके दूसरे सिरे पर एक चपटा गोला बना रहता है। यह गोला तथा निचला भाग पारे से भरा रहता है। दूसरे सिरे को बंद करने से पूर्व ट्यूब को गर्म करके उसके भीतर की हवा निकाल दी जाती है। थर्मामीटर का बल्ब हवा के स्पर्श से गर्म या ठंडा होता रहता है, जिसके परिणामस्वरूप बल्ब का पारा उठता और गिरता रहता है। वायुमंडलीय तापमान में जो परिवर्तन होता है वह पारे के ऊपर बढ़ने या नीचे उतरने से ज्ञात होता है।

शीशे की नली में दो स्थाई बिन्दु अंकित रहते हैं। नीचे का बिन्दु जो बल्ब के ठीक ऊपर रहता है, इस स्थिति को व्यक्त करता है, जहाँ पर पारातल उस समय आ जाता है, जबकि थर्मामीटर का बल्ब एक ऐसी नली में रख दिया जाए, जिसमें पिघली हुई हिम रखी हुई है और इस प्रकार से थर्मामीटर पिघली हुई हिम के तापमान को प्रकट करता है। इस स्थाई बिन्दु को *हिमांक* कहते हैं। इसी प्रकार से ऊपर का बिन्दु सामान्य वायुभार की दशा में खौलते हुए पानी का तापमान बताता है। इस स्थाई ऊपर वाले बिन्दु को *क्वथनांक* कहते हैं। हिमांक और क्वथनांक बिन्दुओं के बीच की नली की दूरी को कई विभागों में बाँट दिया जाता है, जिन्हें डिग्री या अंश कहते हैं। इन निशानों की संख्या प्रयुक्त होने वाली मापनी के अनुसार होती है। सेन्टीग्रेड और फार्नहाइट दो प्रमुख तापमान मापनी हैं।

सेन्टीग्रेड थर्मामीटर में बर्फ का तापमान 0° सें० होता है और खौलते हुए जल का 100° सें० होता है। दोनों बिन्दुओं के बीच की दूरी 100 समान भागों में विभाजित होती है। फार्नहाइट थर्मामीटर में पानी के हिमांक तथा क्वथनांक को क्रमशः 32° फा० और 212° फा० निशानों द्वारा प्रकट किया जाता है। उनके बीच की दूरी को 180 समान भागों में बाँट दिया जाता है।

इस प्रकार सेंटीग्रेड में दो निश्चित बिन्दुओं के बीच की दूरी 100 अंश तथा फार्नहाइट में 180 अंश में विभक्त होती है। इस तरह सेंटीग्रेड का एक अंश फार्नहाइट के 1.8 अंश के बराबर होता है।

सेंटीग्रेड के पाठ्यांक को फार्नहाइट के पाठ्यांक में बदलने के लिए सेंटीग्रेड के अंशों को 1.8 (या 9/5) से गुणा कर उसमें 32 जोड़ दिया जाता है क्योंकि फार्नहाइट मापनी में हिमांक 32 अंश पर अंकित होता है। दूसरी ओर फार्नहाइट के पाठ्यांक को सेंटीग्रेड के पाठ्यांक में बदलने के लिए उल्टी क्रिया की जाती है अर्थात् पहले 32 घटा कर शेष को 1.8 से भाग कर दिया जाता है या 5/9 से गुणा करते हैं। एक मापनी को दूसरी में बदलने का सूत्र नीचे दिया गया है।

1) सेंटीग्रेड से फार्नहाइट में बदलने के लिए :
   फा० = (सें० × 9/5) + 32
2) फार्नहाइट से सेंटीग्रेड में बदलने के लिए :
   सें० = 5/9 (फा० — 32)

उदाहरण :

मनुष्य के शरीर का साधारण तापमान 36.9 सें० है। इसे फार्नहाइट में बदलिए।

फा० = (सें० × 9/5) + 32
= (36.9 × 9/5) + 32
= 66.4 + 32
= 98.4° फा०

सिक्स का अधिकतम तथा न्यूनतम थर्मामीटर

कुछ विशेष प्रकार के भी थर्मामीटर होते हैं जिनसे अधिकतम तथा न्यूनतम तापमान नापने के अतिरिक्त नम तथा शुष्क तापमान भी नापे जाते हैं।

अधिकतम तथा न्यूनतम थर्मामीटर का उद्देश्य है एक निश्चित काल में होने वाले अधिकतम तथा न्यूनतम तापमान का आलेखन करना। एक निश्चित अवधि में न्यूनतम तथा अधिकतम तापमान का आलेखन यंत्र में स्वयं हो जाता है। (चित्र 49)

सिक्स के अधिकतम तथा न्यूनतम थर्मामीटर में बेलनाकार शीशे का एक बल्ब 'ए' होता है, जो U आकार
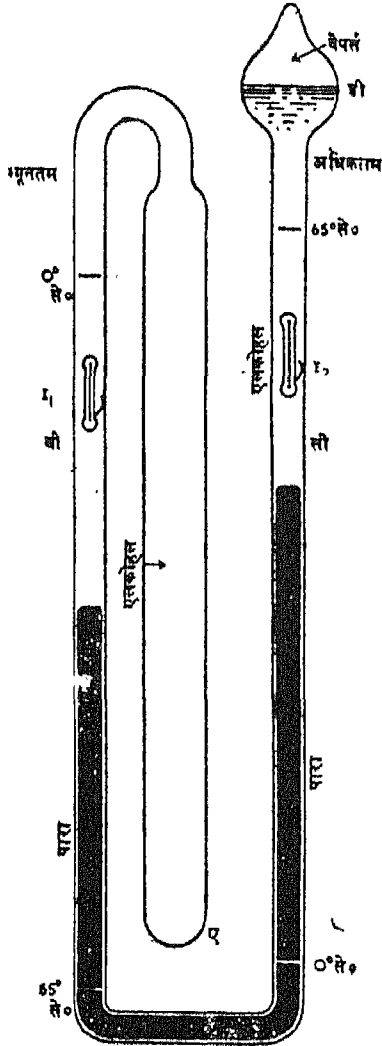
चित्र—49

की नली 'बी सी' से जुड़ा रहता है। इसके अंतिम सिरे पर एक बल्ब 'डी' होता है (जैसे चित्र में दिखाया गया है)। ट्यूब बी सी के निचले भाग में पारा भरा रहता है। बी और सी नलियों मे पारातल के ऊपर तथा बल्ब ए और डी में अलकोहल भरा रहता है।

पारा के ऊपर दोनों भुजाओं में दो लोहे की कीली (सूचक) लगी रहती है, जो एक चिह्न पर एक स्प्रिंग द्वारा ट्यूब की दीवारों से लगी होती है। थर्मामीटर के प्रयोग करने के पहले प्रत्येक कीली को अर्धचंद्राकार चुम्बक की सहायता से ऊपर या नीचे कर लिया जाता है। इस प्रकार I_1 और I_2 कीलियाँ पारे से सट जाती हैं। इसे थर्मामीटर की सैटिंग कहते हैं और तब थर्मामीटर प्रयोग के लिए तैयार हो जाता है।

ट्यूब की दोनों भुजाओं पर निशान बने होते हैं। बी-भुजा में सूचक कीली न्यूनतम तापमान का लेखन करती हैं, क्योंकि उसमें मापक निशानों का पैमाना ऊपर से नीचे की ओर घटता जाता है। सी-भुजा से लगी सूचक कीली अधिकतम तापमान का लेखन करती है। इसमें निशानों का पैमाना नीचे से ऊपर की ओर बढ़ता जाता है।

तापमान के बढ़ने से बल्ब ए में अलकोहल फैलकर पारे की सतह को बी-भुजा में नीचे की ओर दबाता है और पारा सी-भुजा में ऊपर उठता है, जिसके कारण सूचक कीली ऊपर की ओर खिसकती है। जब तापमान घटता है तो सी-भुजा में पारे की सतह गिरती है, और सूचक कीली I_2 उसी स्थान पर रह जाती है। परन्तु इसका परिणाम यह होता है कि बी-भुजा में पारे की सतह उठ जाती है और सूचक कीली I_1 ऊपर उठ जाती है और यह उस समय तक ऊपर खिसकती रहती है जब तक कि तापमान का घटना बंद नहीं हो जाता। अत: सूचक कीली के अंतिम सिरे I_1 और I_2 एक निश्चित अवधि में अधिकतम तथा न्यूनतम तापमानों को सूचित करते हैं।

किसी निश्चित अवधि, जो प्राय: एक दिन होती है, के अधिकतम तथा न्यूनतम तापमानों के अंकों को नोट करने के बाद थर्मामीटर को पुनः अगले दिन के लिए सूचक कीलियों I_1 और I_2 को बी और सी भुजाओं के पारातल तक लाकर सैट कर दिया जाता है।

मौसम-वेधशालाओं में तापमान का आलेखन प्रत्येक दिन एक निश्चित समय पर किया जाता है। आजकल अधिकतम तथा न्यूनतम तापमानों को जानने के लिए अलग-अलग थर्मामीटरों का प्रयोग किया जाता रहा है। इसमें अधिकतम तापमान मापने वाले थर्मामीटर में पारा और न्यूनतम तापमान मापने वाले थर्मामीटर में अलकोहल होता है।

एक दिन के अधिकतम और न्यूनतम तापमानों का अंतर *दैनिक ताप परिसर* कहलाता है। माध्य या *औसत दैनिक तापमान* प्रत्येक घंटे के अंतराल पर लिए 24 पाठ्यांकों का माध्य या औसत होता है। यह लगभग उतना ही बैठता है, जितना 6 बजे सुबह, 1 बजे दिन तथा 6 बजे शाम

के प्राप्त तीनों पाठ्यांकों का औसत होता है या उन तीन पाठ्यांकों का औसत होता है जो सुबह 7 बजे, अपराह्न 2 बजे तथा 9 बजे रात्रि को लिए जाते हैं। एक दिन के अधिकतम तथा न्यूनतम तापमानों के औसत से माध्य दैनिक तापमान नहीं मिलता क्योंकि वह प्रत्येक घंटे के औसत पर लिए 24 पाठ्यांकों के औसत से बड़ा होता है।

शुष्कार्द्र बल्ब थर्मामीटर

इसमें एक ही प्रकार के दो थर्मामीटर एक लकड़ी के चौखटे पर जड़े होते हैं। थर्मामीटर टी$_1$ का बल्ब खुला रहता है और उस पर हवा लगती रहती है। परन्तु थर्मामीटर टी$_2$ एक आर्द्र मलमल या रुई से ढका रहता है,
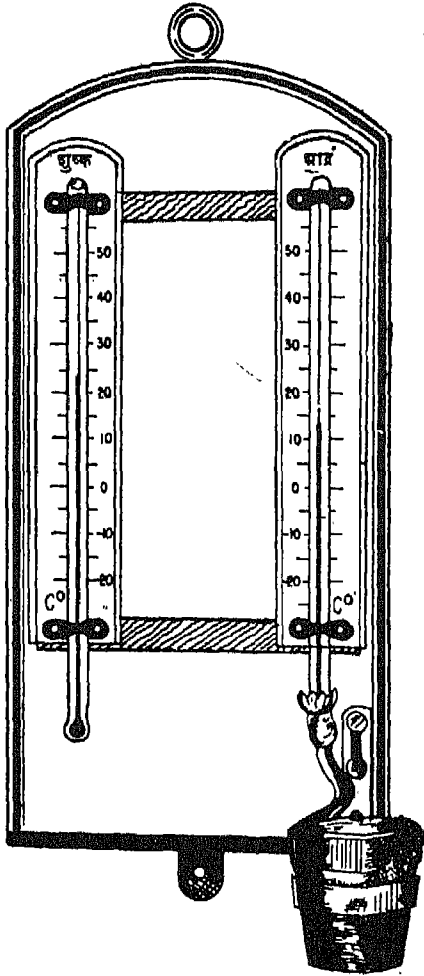
चित्र—50

जो सदैव भीगा रखा जाता है। इसके लिए मलमल के एक सिरे को लकड़ी के चौखटे में लगे हुए एक छोटे से बर्तन में भरे पानी में निरन्तर डुबोए रखते हैं, जैसा कि चित्र 50 में दिखाया गया है। आर्द्र बल्ब के ऊपर वाष्पीकरण होने से उसका तापमान गिर जाता है। अत: टी$_2$ थर्मामीटर में तापमान कम और टी$_1$ थर्मामीटर में तापमान अधिक रहता है।

शुष्क बल्ब के पाठ्यांक वायु में उपस्थित जलवाष्प की मात्रा से प्रभावित नहीं होते, अत: उनमें जलवाष्प के कारण कोई परिवर्तन नहीं होता। इसके प्रतिकूल आर्द्र बल्ब के पाठ्यांकों में परिवर्तन होता रहता है। क्योंकि पानी का वाष्पित होना वायु की आर्द्रता पर निर्भर करता है। जितनी अधिक आर्द्रता हवा में होती है वाष्पीकरण की गति उतनी ही धीमी होती है और टी$_1$ व टी$_2$ थर्मामीटरों के पाठ्यांकों का अन्तर भी उसी अनुपात में कम होता है। दूसरी ओर जब वायु शुष्क होती है तब आर्द्र बल्ब की सतह पर वाष्पीकरण तेजी से होता है। इस कारण इसका तापमान कम होता है और दोनों पाठ्यांकों का अन्तर अधिक हो जाता है। इस प्रकार टी$_1$ व टी$_2$ के पाठ्यांकों के अन्तर द्वारा वायुमंडल की आर्द्रता निर्धारित होती है। दोनों थर्मामीटरों के पाठ्यांकों का अंतर जितना अधिक होगा उतनी ही अधिक वहाँ की वायु शुष्क होगी। ठीक-ठीक आर्द्रता जानने के लिए एक विशेष प्रकार से तैयार की गई टेबुल (तालिका) की सहायता ली जाती है।

शुष्कार्द्र बल्ब थर्मामीटर के पाठ्यांकों को ठीक-ठीक जानने के लिए बर्तन को आसुत जल से भरना चाहिए। महीने में कम से कम एक बार कपड़े को बदल देना चाहिए। जब मौसम आर्द्र हो तो शुष्क बल्ब के थर्मामीटर को प्रेक्षण के समय कपड़े से पोंछकर उसे सुखा लेना चाहिए।

थर्मामीटरों को न तो सूर्य की सीधी धूप में रखें और न ही परिवर्तित विकिरित उष्मा में रहने देना चाहिए। थर्मामीटर सामान्यत: एक सुरक्षित स्थान में रखे जाते हैं। यह स्थान लकड़ी के दोहरी दीवार वाले संदूक के रूप में होता है जो सफेद पेंट से पुता होता है। इसकी बगलें खुली होती हैं अर्थात् उनमें खुली खिड़कियाँ होती हैं, जिसमें ढलुवा लक्कड़ के बोर्ड इस प्रकार लगे रहते हैं कि हवा उसमें जा सके परन्तु सूरज की किरणें उसमें न प्रवेश

कर सकें। यह लकड़ी का डिब्बा एक मीटर की ऊँचाई पर रखा जाता है। इसे इमारतों से दूर लगाते हैं जहाँ कोई चारदीवारी या वृक्ष आदि न हो। इस प्रकार का सुरक्षित स्थान साधारणतया संसार के अधिकांश मौसम विज्ञान केन्द्रों पर मिलता है। भूमध्य रेखीय प्रदेशों में जहाँ गर्मी अधिक पड़ती है, सुरक्षित स्थान के रूप में झोंपड़ियाँ और खुले बंगले अच्छे माने जाते हैं।

वायुमंडलीय दाब का मापन

यह सर्वविदित है कि हवा में भार होता है और पृथ्वी के पृष्ठ पर उसका बहुत अधिक दाब पड़ता है। यह ज्ञात किया गया है कि समुद्रतल पर साधारण दशा में हवा का दाब 14·7 पौंड प्रति वर्गइंच या 1·03 किलोग्राम प्रति वर्ग सेंटीमीटर पड़ता है। वायु के सदैव प्रवाहित रहने के कारण तथा तापमान और हवा में वाष्प की मात्रा में परिवर्तन के परिणामस्वरूप किसी निश्चित स्थान पर वायु का दाब लगातार बदलता रहता है। इसलिए तापमान की भाँति वायुमण्डलीय दाब भी समय तथा स्थान के अनुसार परिवर्तित होता रहता है। यद्यपि इस प्रकार का परिवर्तन साधारणतया हमें अनुभव नहीं होता, परन्तु मौसम के अध्ययन में और उसके पूर्वानुमान में एक महत्वपूर्ण लक्षण होता है। इसका मौसम के अन्य तत्वों से गहरा संबंध है।

वायु-मण्डलीय दाब को मापने के लिए जो यंत्र बनाया गया है उसे *वायुदाबमापी* या बैरोमीटर कहते हैं। पारे वाले बैरोमीटर के सिद्धांत को एक साधारण प्रयोग द्वारा समझाया जा सकता है। समान मोटाई की एक परखनली लीजिए जो एक मीटर लम्बी हो और जिसमें पारा भरा हो। इस नली का मुंह एक उँगली से बन्द कर लीजिए और फिर उसे एक पारे से भरे प्याले में इस प्रकार खड़ा कीजिए कि उसका उँगली से ढका मुंह प्याले में पारे की सतह से नीचे हो। फिर उँगली हटा लीजिए। कुछ पारा नली से निकलकर प्याली में आएगा और शेष पारा नली में प्याले के पारे की सतह से ऊपर एक निश्चित ऊँचाई पर ठहर जाएगा। ऐसा इसलिए होता है कि नली में पारे का स्तंभ, जो प्याले में उपस्थित पारे की सतह से ऊपर रहता है, का भार एक अनिश्चित ऊँचाई की वायु के स्तंभ के भार से संतुलित हो जाता है। यह अनिश्चित ऊँचाई का वायु-स्तंभ तरल सतह की एक समान अनुप्रस्थ काट पर दाब डालता है अतः नली में पारे की ऊँचाई द्वारा वायु दाब का बोध होता है। पारा-स्तंभ की ऊँचाई मिलीमीटर या इंचों में नाप ली जाती है। (चित्र 51)

फोर्टीन का बैरोमीटर

साधारण बैरोमीटर की भाँति फोर्टीन के बैरोमीटर में एक खड़ी शीशे की नली होती है जिसमें पारा भरा रहता है। इसका निचला भाग खुला रहता है और ऊपरी भाग बन्द रहता है। इस नली का खुला भाग पारे की कुंडिका में डूबा रहता है। कुंडिका का पेंदा ऊपर-नीचे हो सकता है। इसमें एक पेंच 'एस' लगा रहता है जिसकी सहायता से कुंडिका का तल पाठ्यांकों को लेने के पूर्व एक निश्चित बिन्दु पर लाया जाता है। जब वायुदाब गिरता है, तो कुंडिका का पारा नली में चढ़ जाता है। इसलिए एक निश्चित बिन्दु को निर्धारित करने के लिए, जिसके ऊपर पारे का स्तंभ नापा जा सके, एक हाथीदाँत का सूचक कुंडिका के सिरे पर लगा रहता है। पैमाने का शून्य बिन्दु हाथीदाँत के सूचक के उस सिरे से मिला दिया जाता जाता है जो सीधा नीचे की ओर संकेत करता है। (चित्र 52)
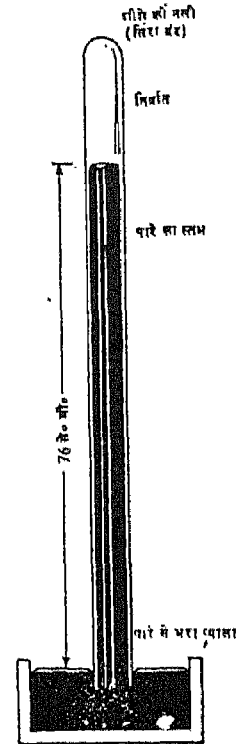
चित्र—51
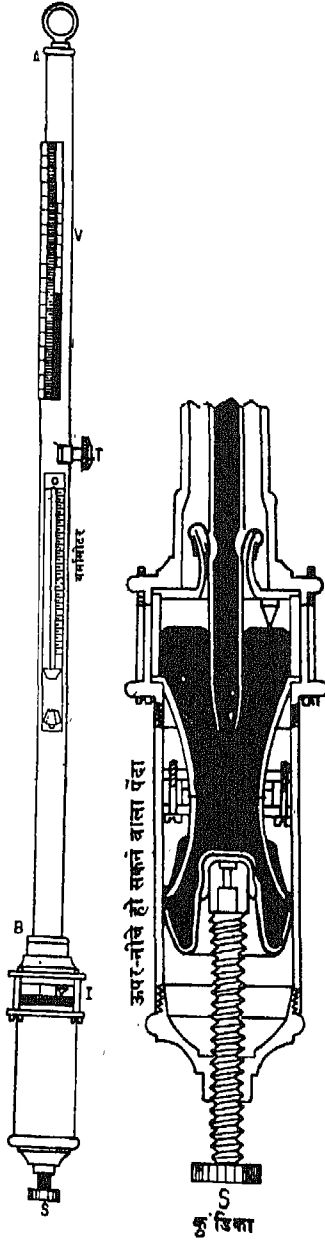
चित्र 52

बैरोमीटर की सुरक्षा के विचार से उसे पीतल की नली ए-बी में रखा जाता है और उसमें वायुदाब नापने के लिए मापनी सेंटीमीटर, इंच या मिलीबार में अंकित रहती है। उसमें एक स्लिट लगी रहती है जिससे नली के पारे का तल आसानी से देखा जा सकता है। इस यंत्र में एक वर्नियर 'वी' भी लगा रहता है जो स्लिट के साथ खिसकता है। इसका स्थान स्क्रू 'टी' की सहायता से निर्धारित किया जाता है। वर्नियर में एक पीतल की प्लेट बैरोमीटर की नली के पीछे लगी होती है। इस पीतल की प्लेट का तथा वर्नियर का निचला किनारा क्षैतिज रेखा में रहता है जो साथ ही स्क्रू 'टी' के द्वारा ऊपर-नीचे होता रहता है। इसमें एक थर्मामीटर भी लगा रहता है। इस थर्मामीटर से प्रत्येक दाब के पाठ्यांक के लिए तापमान को ठीक करने में सहायता मिलती है।

फोर्टीन बैरोमीटर के उपयोग के लिए पाठ्यांक लेने के पूर्व दो समायोजनों की आवश्यकता पड़ती है। पहला स्क्रू 'एस' को घुमा-फिराकर कुंडिका में उपस्थित पारे के तल को हाथीदाँत के सूचक (इनडैक्स) से स्पर्श करना, और उसका पारे के तल पर पड़ने वाला प्रतिबिम्ब एक सीधी रेखा में पड़ना चाहिए।

दूसरी, वर्नियर वी का शून्यांक नली में उपस्थित पारा-तल में मिला देना चाहिए। इसलिए आँख को क्षैतिज रेखा के तल में रखा जाता है जो वर्नियर वी के निचले किनारे और पीछे उपस्थित पीतल की प्लेट की सीध में है। स्क्रू टी को तब तक घुमाते रहते हैं जब तक नली में उपस्थित पारे का ऊपरी सिरा उस रेखा में आ जाए जिस रेखा में पीतल की प्लेट का निचला किनारा तथा वर्नियर है। इसके पश्चात बैरोमीटर अवलोकन के लिए तैयार हो जाता है।

निर्द्रव वायुदाबमापी (एनोराइड बैरोमीटर)

वायुमंडल के दाब को नापने का सामान्य प्रयोग में आने वाला दूसरा यंत्र निर्द्रव वायुदाबमापी है। इसे एनोराइड बैरोमीटर कहते हैं। इसका नाम ग्रीक भाषा का शब्द 'अनरास' (शुष्क) से निकला है जिसका अर्थ होता है 'बिना द्रव के'।

इसमें एक नालीदार धातु का बक्स होता है, जो चाँदी का या इसी प्रकार की पतली अलाय का बना होता है। यह हर प्रकार से बन्द रहता है और उसमें से कुल हवा निकालकर ढक्कन लगा रहता है जो दाब के परिवर्तन के प्रति बड़ा सुग्राही होता है। बक्स में एक स्प्रिंग होती है जो ढक्कन को वायुमंडलीय दाब के अंतर्गत फटने से बचाती है और यह स्प्रिंग जब दाब कम हो जाता है तब उसकी आकृति ठीक रखती है।

जब दाब बढ़ता है तब ढक्कन भीतर की ओर दबता

है जिसके कारण वह संबंधित लिवर्स को घुमाता है, फलस्वरूप एक प्वांइटर एक अंशांकित गोले पर घड़ी की सुइयों के अनुसार घुमता है। और इस कारण ऊँचे पाठ्यांक ज्ञात होते हैं। दाब घटने के साथ ढक्कन बाहर की ओर निकल आता है, और प्वांइटर घड़ी की सुइयों के विपरीत घूमता है जिससे बैरोमीटर पाठ्यांक के घटाव का बोध होता है।

आमतौर पर एनोराइड बैरोमीटर तापमान के अनुसार संशोधित नहीं किया जाता और किसी स्थान के दाब का पाठ्यांक डायल से सीधे ही पढ़ लिया जाता है। परन्तु यह बैरोमीटर पारे वाले बैरोमीटर के समान यथार्थ पाठ्यांक नहीं देता। यह हल्का होता है। और आसानी से इधर-उधर ले जाया जा सकता है। इसलिए यह खोजकर्ताओं, पर्वतारोहियों तथा यात्रियों द्वारा और महासागरों पर जलयानों में प्रायः प्रयोग किया जाता है।

इसकी सहायता से किसी स्थान के वायुमंडलीय दाब तथा उस स्थान की समुद्रतल से ऊँचाई का संबंध सुगमता से समझा जा सकता है। समुद्र पर वायुमंडल का दाब अधिकतम होता है, क्योंकि वहाँ वायु का स्तंभ सबसे ऊँचा पाया जाता है। जब हम समुद्रतल से ऊपर उठते हैं तो वायु के स्तंभ की ऊँचाई क्रमशः घटती जाती है, और फलस्वरूप वायुमंडलीय दाब भी घटता है। इससे बैरोमीटर में निम्न पाठ्यांक मिलते हैं।

फिर, चूँकि वायु एक संपीडित की जा सकने वाली वस्तु है, अतः नीचे की वायु की परतें अधिक दबी रहती हैं, इसलिए ऊपर की परतों की अपेक्षा वे अधिक घनी भी होती हैं। इस प्रकार अधिक ऊँचाई पर लिए गए दाब पाठ्यांक में नीचे की सबसे घनी वायु की परतें सम्मिलित नहीं हो पाती हैं। इसके परिणामस्वरूप पाठ्यांक नीचे की परतों की अपेक्षा आमतौर पर कम होंगे। यह तथ्य ऊँचाई नापने में काम आता है। इसलिए विमानचालकों और पर्वतारोहियों के लिए इस तथ्य का बहुत अधिक महत्व है।

तुंगतामापी (अल्टीमीटर) एक विशेष प्रकार का एनोराइड बैरोमीटर होता है, जो विमानचालकों और पर्वतारोहियों के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण होता है। इससे किसी स्थान पर समुद्रतल से ऊँचाई का पाठ्यांक सीधे पढ़ा जा सकता है।

यह ज्ञात हो चुका है कि समुद्रतल पर मानक वायुमंडलीय दाब का भार 76 सें० मी० लम्बे पारे के स्तंभ के बराबर होता है। यह दाब ऊँचाई के अनुसार समांतर श्रेणी (अरिथमैटिक प्रोग्रेशन) में घटता जाता है। औसतन बैरोमीटरतल में एक सें० मी० दाब कम होने का अर्थ होता है समुद्रतल से 110 मीटर की ऊँचाई, इसी प्रकार से दूसरे एक सें० मी० के घटाव का अर्थ है 115 मीटर की ऊँचाई तथा तीसरे एक सें० मी० दाब घटने का अर्थ है 120 मीटर की ऊँचाई, आदि। ऊँचाई के अनुसार वायुमंडलीय दाब के घटने का यह क्रम प्रायः समुद्रतल के प्रथम हजार मीटर की ऊँचाई के वायुमंडल में पाया जाता है।
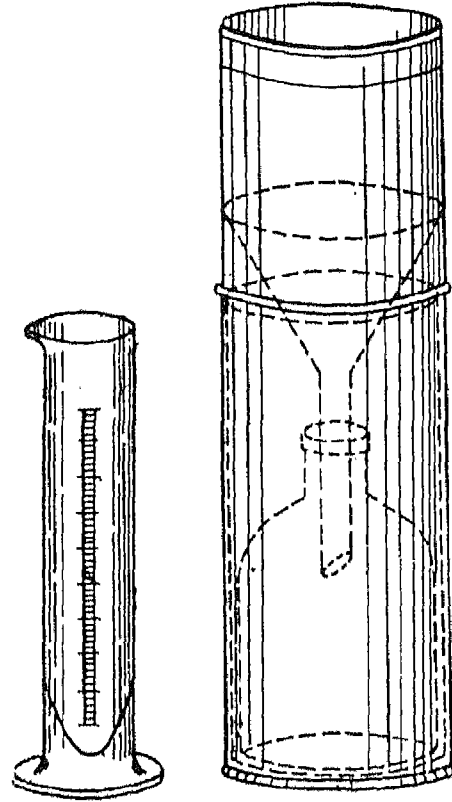
चित्र—53

वर्षा की माप

किसी स्थान पर किसी समय में होने वाली वर्षा की मात्रा में माप के लिए एक साधारण यंत्र का प्रयोग किया जाता है, जिसे वर्षामापी कहते हैं। वर्षामापी कई प्रकार के होते हैं। परन्तु सबका एक ही ध्येय होता है, जिसके

अंतर्गत एक स्थान पर होने वाली वर्षा की मात्रा को इस प्रकार एकत्रित करते हैं कि उनका कुछ भी भाग भाप बनकर, बहकर या जमीन में सोखकर गायब न हो सके। (चित्र 53)

वर्षामापी धातु का एक खोखला बेलनाकार (सिलिंडर) बर्तन होता है जिसमें एक कीप अच्छी प्रकार से बैठाई गई होती है और उसमें से होकर वर्षा का जल नीचे बर्तन में पहुँचता है। कीप के मुँह की परिधि, ग्राह्य बर्तन के आधार की परिधि के बराबर होती है। सिलिंडर का मुँह कीप के मुँह से 12·5 सेंटीमीटर ऊपर रहता है, जिससे गिरती हुई वर्षा के जल का कोई भाग निकलकर बाहर न चला जाय। इस प्रकार से अपने आप ही सारा वर्षा का जल जो कीप के मुँह की सतह पर गिरता है, ग्राह्य बर्तन में चला जाता है।

इस प्रकार से एकत्रित जल एक मापक जार द्वारा मापा जाता है जिस पर मिलीमीटर या इंचों के निशान लगे होते हैं। मापक जार के आधार का क्षेत्रफल तथा कीप के क्षेत्रफल में एक विशेष संबंध होता है। भारत में हम लोग वर्षा को मिलीमीटर या सेंटीमीटर की इकाई में नापते हैं। दिन में किसी निश्चित समय पर 24 घंटे में एक बार पाठ्यांक लिया जाता है। सामान्यतः यह समय 8 बजे प्रातःकाल होता है और यह पिछले 24 घंटे या पूरे दिन की सारी वर्षा की मात्रा को प्रकट करता है।

यथार्थ पाठ्यांकों के लिए यंत्र को खुले और समतल क्षेत्र में भूमि से 30 सेंटीमीटर की ऊँचाई पर रखना चाहिए, जिससे उसमें पानी छिटककर या बहकर न जा सके। वर्षामापी में वर्षा के जल को निर्विघ्न गिरने के लिए उसे किसी वृक्ष, मकान या किसी ऊँची वस्तु से दूर रखना चाहिए। साथ ही उसे जानवरों से भी सुरक्षित रखना चाहिए, क्योंकि उनसे वर्षामापी के उलट जाने का भय हो सकता है।

पवन-दिशा एवं गति

मौसम का एक अन्य आधारभूत अवयव पवन है। पवन के विषय में दो मुख्य बातें, पवन-दिशा और पवन की गति जाननी आवश्यक होती है।

वातदिक् सूचक (विंडवेन)

पवन की दिशा सामान्यतः वातदिक् सूचक द्वारा प्राप्त की जाती है। इसमें एक पिच्छफलक अर्थात् एक घूमने वाली प्लेट होती है, जो एक छड़ पर ठीक से संतुलित होती है। उसमें बाल बियेरिंग लगी होती है, जिससे वह थोड़ी-सी भी हवा चलने पर बिना घर्षण के अच्छी प्रकार घूमता रहता है। साधारण रूप में फलक एक हल्के व पतली धातु या लकड़ी का बना होता है, जिसमें एक सिरा नुकीला होता है जिसे तीर (भारी धातु का बना हुआ) कहते हैं, और दूसरा हिस्सा चौड़ा होता है जिसे पूँछ कहते हैं।

तीर का मुँह सर्वदा हवा की दिशा की ओर रहता है और पूँछ फलक को संतुलित रखती है। अधिक तेज गति से पवन के चलने पर भी तीर उसी दिशा की ओर संकेत करता है, जिधर से पवन आता है। पिच्छफलक के नीचे एक लम्बवत् छड़ होती है जिसपर एक क्रास (आड़ी छड़ें) लगा रहता है। इससे उत्तर, पूर्व, दक्षिण और पश्चिम का बोध होता है।

पवनवेगमापी (एनेमामीटर)

एनेमामीटर एक प्रकार का यंत्र होता है, जो पवन की गति को मापने के लिए प्रयुक्त होता है। इस पवन-वेग-मापी में तीन या कभी-कभी चार अर्धगोलाकार प्यालियाँ लगी रहती हैं जो क्षैतिज भुजाओं द्वारा एक ऊर्ध्वाधर तर्कु से संबंधित होती हैं।

जब पवन चलता है तो प्याले घूमते हैं और इससे क्षैतिज भुजाएँ भी घूमने लगती हैं। इन भुजाओं के घूमने से ऊर्ध्वाधर तर्कु भी घूमने लगता है। पवन जितने ही अधिक वेग से चलता है उतने ही अधिक वेग से तर्कु घूमता है। तर्कु के आधार पर एक यंत्र लगा होता है जो निश्चित अवधि में तर्कु के चक्करों अर्थात् पवन की गति को अंकित करता रहता है। कभी-कभी एनेमामीटर बिजली के तारों द्वारा मौसम केन्द्र के अन्दर एक डायल से लगा दिया जाता है। यह डायल हवा की चाल को प्रति घंटा किलो-मीटर या मील या 'नाट' में प्रदर्शित करता है।

वात यंत्रों को ऐसे खुले स्थान पर रखना चाहिए जहाँ स्थानीय बाधाएँ न हों। इन्हें बहुत दूर तथा आस-पास की ऊँची वस्तुओं से अधिक ऊँचाई पर रखना चाहिए। सामान्यतया वात यंत्रों को ऊँचे टावर पर खुली जगह पर लगाया जाता है।

मौसम मानचित्र

मौसम मानचित्र एक दृष्टि में उन मौसम संबंधी दिशाओं का एक सामान्य चित्र प्रस्तुत करता है, जो समय के एक निश्चित क्षण पर एक बड़े क्षेत्र में पाई जाती है।

इस प्रकार के मानचित्र को तैयार करना आसान नहीं है। जलवायु संबंधी आँकड़े एकत्रित करने में सैकड़ों प्रेक्षक लगातार काम करते रहते हैं। वे अत्यंत सुग्राही और स्वत: अभिलेखी यंत्रों से सहायता लेते रहते हैं। उनके द्वारा एकत्रित किए गए मौसम संबंधी आँकड़े तार या दूर संचार यंत्रों द्वारा क्षेत्रीय तथा केन्द्रीय वेधशालाओं को प्रतिदिन भेजे जाते हैं। केन्द्रीय वेधशालाओं में ये आँकड़े संसाधित किए जाते हैं और वे एक मानचित्र पर प्रदर्शित किए जाते हैं। मौसम आँकड़ों से युक्त इस मानचित्र को मौसम मानचित्र कहते हैं।

मौसम सेवा विभाग या मौसम विज्ञान की वेधशालाएँ सारे देश में फैली हुई हैं और दिन-रात मौसम आँकड़ों को इकट्ठा करने और उनसे मौसम मानचित्र बनाने तथा उनकी व्याख्या करने का कार्य निरन्तर करती रहती हैं। भारत में मौसम विज्ञान सेवा विभाग की स्थापना सन् 1875 ई० में हुई थी और उस समय इसका मुख्य कार्यालय शिमला में था। प्रथम विश्व युद्ध के पश्चात् मौसम विज्ञान सेवा विभाग का विस्तार हुआ और इसका केन्द्रीय कार्यालय शिमला से हटाकर पूना में स्थापित किया गया। भारतीय दैनिक मौसम रिपोर्ट प्रतिदिन इसी स्थान से प्रकाशित होती है। (चित्र-54)

एक भारतीय दैनिक मौसम रिपोर्ट में भारत का एक मानचित्र होता है। इसमें वायुदाब वितरण, पवन की दिशा और गति, वर्षा, आकाश की दशा और मौसम की वे दशाएँ जिनसे दृश्यता प्रभावित होती है, आदि मौसम के तत्व प्रदर्शित किए जाते हैं। इसमें दैनिक मौसम रिपोर्ट (विवरण) भी संलग्न रहती है। इस रिपोर्ट अर्थात् विवरण में गत दिवस की मौसम संबंधी सभी दशाओं और अगले चौबीस घंटे के मौसम का पूर्वानुमान दिया रहता है। इसमें भारत के विभिन्न प्रमुख स्थानों के मौसम-आँकड़े, बंगाल की खाड़ी तथा अरब सागर में चलने वाले जलयानों से बेतार के तार द्वारा प्राप्त समाचार और ऊपर वायु की पर्तों के आँकड़े, तापमान, कुछ स्थानों के ओसांक आदि अवयवों की भी चर्चा दी रहती है। इन संक्षिप्त विवरण-पत्रों (चार्टों) के आधार पर अगले चौबीस से अड़तालीस घंटों के भीतर घटित होने वाली मौसम की संभावित दशाओं का पूर्वानुमान लगाया जाता है। आजकल वायुमंडल की ऊपरी सतहों के मौसम संबंधी आँकड़े एकत्रित करने और बादलों तथा चक्रवातों के चित्र खींचने आदि विभिन्न कार्यों के लिए मौसम उपग्रहों का प्रयोग किया जा रहा है।

चित्रसंख्या 54 में दिए गए मौसम मानचित्र में 15 अगस्त 1964 के दिन सुबह साढ़े आठ बजे की मौसम संबंधी दशाएँ प्रदर्शित की गई हैं। मानचित्र में प्रयुक्त विभिन्न मौसम संबंधी प्रतीकों का अध्ययन करिए और बताइए कि पवन की दिशा और गति, मेघाच्छन्नता और वर्षा आदि के लिए कौन-कौन से प्रतीक प्रयोग किए गए हैं। वायुदाब की दशाओं को समदाब रेखाओं से दिखाया गया है। अगस्त एक ऐसा महीना है जिसमें दक्षिण-पश्चिम मानसून भारत के लगभग सारे क्षेत्र पर छाया रहता है। अत: आप देखेंगे कि बंगाल की खाड़ी में एक चक्रवात विकसित हो रहा है। यह उत्तर-पश्चिम की ओर बढ़ रहा है और इसके प्रभाव से भारत के मध्य और उत्तरी भागों में बादल छाए हुए हैं। और वहाँ विस्तृत क्षेत्र पर वर्षा हो रही है। चक्रवात की दशाओं के अनुसार भारत के मध्य भाग में समदाब रेखाएँ एक-दूसरे के बहुत निकट हैं और कलकत्ता के दक्षिण में निम्न दाब क्षेत्र में समदाब रेखाएँ सबसे ज्यादा निकट हैं और वायुदाब की प्रवणता भी अत्यंत तीव्र है।

मौसम विज्ञान की वेधशालाएँ

भारत में 350 से अधिक प्रेक्षण केन्द्र हैं, जिन्हें पाँच श्रेणियों में बाँटा गया है। इनमें एक ओर तो प्रथम श्रेणी की वेधशालाएँ हैं, जिनमें स्वत:अभिलेखी यंत्र होते हैं, जैसे थर्मोग्राफ (तापमान के लिए), बैरोग्राफ (वायुदाब के लिए) और हाइग्रोग्राफ (आर्द्रता के लिए)। ये वेधशालाएँ पूना की वेधशाला को दिन में दो बार आँकड़े भेजती हैं। दूसरी ओर पाँचवीं श्रेणी के प्रेक्षण केन्द्र वे हैं, जहाँ 24 घंटे में एक बार वर्षा की मात्रा मापी जाती है। इन प्रेक्षण केन्द्रों के अतिरिक्त भारतीय समुद्रों में चलने वाले जलयानों से भी आँकड़े प्राप्त किए जाते हैं।

मौसम का पूर्वानुमान वायुयान चालकों, जलयान-चालकों, मछुओं, सैनिकों, किसानों, फल-उत्पादकों, बाढ़-नियंत्रकों तथा साधारण जनता के लिए बहुत ही लाभदायक सिद्ध होते हैं। इन्हीं लोगों के लाभ के लिए प्रतिदिन रेडियो तथा समाचारपत्रों में मौसम-टिप्पणियाँ प्रसारित की जाती हैं।

मनुष्य की मौसम संबंधी ज्ञान प्राप्त करने की इच्छा उतनी ही पुरानी है, जितना मनुष्य स्वयं। मौसम विज्ञान का जन्म नियमित विज्ञान के रूप में थोड़े ही दिन पूर्व भौतिकी, गणित शास्त्र, रसायन शास्त्र, भूगोल, खगोल शास्त्र तथा यंत्र विज्ञान के तीव्र विकास के साथ-साथ हुआ है। मौसम विज्ञान के प्रारंभिक विकास में टोरीसैली द्वारा
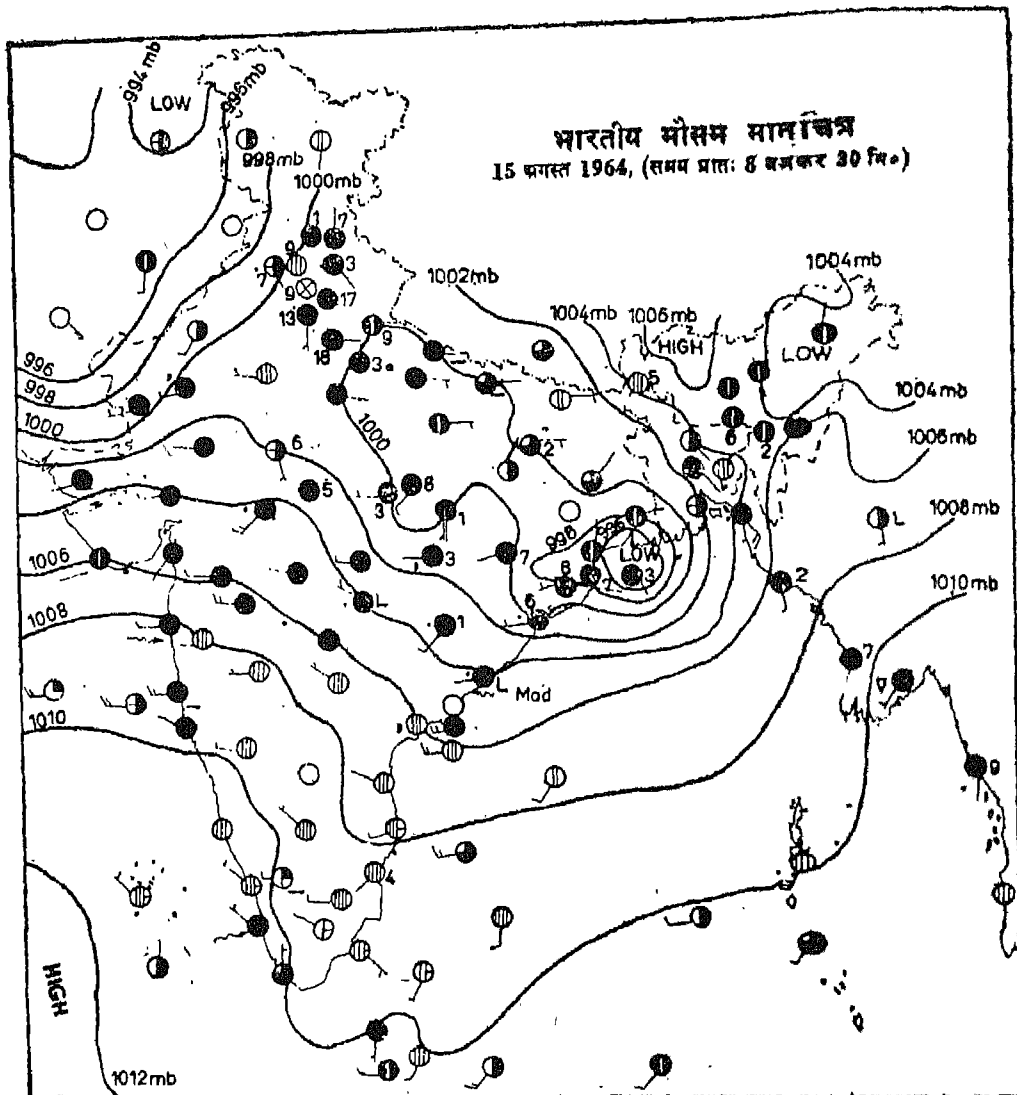
Wind ⟶ = 5 knots ⟶ = 10 knots ⟶ = 50 knots			SEA
Rainfall in cms	— = 0·25 to 0·49 L = 0·50 to 0·75		W = Direction of waves Cm = Calm Sm = Smooth Sl = slight Mod = moderate Ro = rough V.Ro = Very rough Hi = high V.Hi = very high Ph = phenomenal
CLOUD AMOUNTS	WEATHER		
1/8 sky ⦶ 3/4 sky 1/4 sky ◔ 7/8 sky 3/8 sky over cast 1/2 sky ◑ obscured 5/8 sky . High cloud Low or medium cloud	Haze ∞ Squall Dust whirl Dust or sandstorm Mist = Drifting snow Shallow fog ⊗ Drizzle Fog ≡ Rain Lightning ↯ Snow Shower	Thunder storm Hail △	

चित्र—54 भारतीय मौसम मानचित्र

सन् 1643 ई० में निर्मित बैरोमीटर तथा सन् 1710 ई० में फार्नहाइट द्वारा निर्मित थर्मामीटर का महत्वपूर्ण स्थान है।

अनेक वैज्ञानिकों द्वारा अपने-अपने क्षेत्रों में विभिन्न खोजों के परिणामस्वरूप इस विज्ञान का विकास हुआ है। आज भी यह सुस्पष्ट विज्ञान नहीं हो पाया है। फिर भी नयी-नयी बातों की जानकारी प्राप्त करने के लिए अनेकानेक खोजें हो रही हैं। अंटार्कटिका में वेधशालाओं की स्थापना, अंतर्राष्ट्रीय हिन्द महासागरीय अभियान, ऊपरी वायु तथा बाहरी अंतरिक्ष के मौसम संबंधी आँकड़े प्राप्त करने के लिए राकेटों तथा मौसम उपग्रहों का छोड़ा जाना, आदि इस दिशा में कुछ नवीन सफलताएँ हैं।

हवाई चित्र तथा उपग्रही चित्र

हवाई और उपग्रही चित्रों के प्रयोग से विशेष प्रकार के मानचित्र बनाने और उनकी व्याख्या करने में अब बड़ी आसानी हो गई है। स्थलाकृतिक मानचित्रों पर प्रदर्शित भूमि-उपयोग तथा अन्य सांस्कृतिक सूचनाएँ थोड़े समय के बाद पुरानी हो जाती हैं। अतः उन्हें संशोधित करने के लिए समय-समय पर मानचित्रों को दुबारा बनाने की आवश्यकता पड़ती है। इस कार्य के लिए अब विभिन्न मापनी पर हवाई चित्र खींचे जाते हैं और उन पर आए विविध वितरण-लक्षणों को उसी पैमाने के मानचित्र पर स्थानान्तरित किया जाता है। हवाई-चित्रों के पढ़ने और उनकी व्याख्या करने के लिए विशेष प्रकार के प्रशिक्षण की आवश्यकता पड़ती है।

अब बहुत से देशों में वायुचित्रों का प्रयोग अनेक कार्यों, जैसे स्थलरूपों और भूमि-उपयोग की जाँच, नगर विकास की योजनाओं के निर्माण, बहुद्देशीय परियोजनाओं के विकास आदि में किया जाता है।

उपग्रही चित्रों का प्रयोग अब सम्पूर्ण विश्व या सारे देश के स्तर की जलवायु-दशाओं के अध्ययन में किया जाता है। उपग्रहों द्वारा उपलब्ध मौसम संबंधी आँकड़ों की मदद से मौसम पूर्वानुमान करना अब अपेक्षाकृत अधिक आसान और शुद्ध हो गया है। खनिजों का पूर्वेक्षण करने और उनका अनुमान लगाने, भूमि-उपयोग की विवरण-सूची तैयार करने तथा कृषि उत्पादों का पूर्वानुमान लगाने आदि के कार्यों में उपग्रही चित्रों का उपयोग किया जाता है। भारत विश्वस्तर पर इस कार्य में अन्य देशों को सहयोग दे रहा है।

अभ्यास

1. नीचे दिए गए प्रश्नों के उत्तर लिखिए :
   (1) मौसम के आधारभूत तत्व क्या हैं ?
   (2) एनीराइड बैरोमीटर पारे के बैरोमीटर से किस प्रकार भिन्न है ?
   (3) सेंटीग्रेड और फार्नहाइट पैमाने की तुलना करिए।
   (4) आपेक्षिक आर्द्रता कैसे निकाली जाती है ?
2. निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणियाँ लिखिए :
   (1) मौसम विज्ञान संबंधी वेधशाला।
   (2) थर्मामीटर का सुरक्षित स्थान।
   (3) भारतीय दैनिक मौसम रिपोर्ट।
3. भारतीय दैनिक मौसम मानचित्र की कहानी संक्षिप्त में लिखिए जिसमें आँकड़ों के अवलोकन से लेकर उनके केन्द्रीय कार्यालय तक एकत्र करने, संसाधन तथा मानचित्र पर उन्हें प्रदर्शित करने का विवरण हो।
4. मौसम का पूर्वानुमान किस प्रकार विभिन्न वर्गों के लोगों के लिए लाभप्रद है ?

5. नीचे प्रथम कालम में कुछ यंत्रों के कार्य दिए गए हैं और दूसरे कालम में कुछ यंत्रों के नाम बिना क्रम से दिए हैं। जो यंत्र प्रथम कालम से मतलब नहीं रखते, उन्हें छोड़कर ठीक-ठीक जोड़े बनाइए।

(1) वायु की दिशा ज्ञात करना	(1) थर्मोग्राफ
(2) वायुदाब का स्वलेखन	(2) सिक्स थर्मामीटर
(3) वायु की गति मालूम करना	(3) हाइग्रोमीटर
(4) आर्द्रता का स्वलेखन	(4) हाइग्रोग्राफ
(5) वायुमंडलीय दाब ज्ञात करना	(5) अल्टीमीटर
(6) तुंगता के प्रत्यक्ष पाठ्यांक लेना	(6) विंडवेन
(7) तापमान का स्वलेखन	(7) एनोराइड बैरोमीटर
(8) आर्द्रता ज्ञात करना	(8) बैरोग्राफ
(9) एक निश्चित अवधि के लिए न्यूनतम तथा अधिकतम तापमान ज्ञात करना	(9) एनेमामीटर
	(10) शुष्कार्द्र बल्ब तापमापी
	(11) फोर्टीन बैरोमीटर

6. इस अध्याय में दिए मौसम मानचित्र का अध्ययन ठीक से कीजिए और नीचे लिखे प्रश्नों का उत्तर दीजिए :

(1) उन क्षेत्रों के नाम बताइए जहाँ अधिकतम तथा न्यूनतम दाब पाए जाते हैं।

(2) देश के किस भाग में आकाश मेघाछन्न है ?

(3) मानचित्र पर प्रदर्शित वायुदाब के अधिकतम और न्यूनतम मानों को बताइए।

(4) बम्बई तट से कुछ दूर समुद्र के ऊपर पवनों की दिशा और गति बताइए।

(5) निम्नलिखित को निरूपित करने के लिए कौन-से प्रतीक प्रयोग किए गए हैं ?

(क) तड़ित बिजली, (ख) तड़ित झंझा, (ग) हिम, (घ) आँधी तथा (च) शांत समुद्र।

क्षेत्र-अध्ययन

क्षेत्र-अध्ययन भूगोल का एक महत्वपूर्ण अंग है। यह हमें मनुष्य के समीपवर्ती वातावरण के उन प्राकृतिक एवं सांस्कृतिक तत्वों का अध्ययन करने में मदद देता है जो उसे और उसके क्रियाकलापों को निरन्तर प्रभावित करते रहते हैं। प्राय: यह देखा गया है कि एक क्षेत्र के विभिन्न भागों में सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक दृष्टि से बहुत अन्तर मिलता है। परन्तु यह अन्तर उस क्षेत्र में रहने वाले लोगों के विभिन्न वर्गों में भी पाया जाता है। इन विषमताओं को प्राय: कई कारक प्रभावित करते रहते हैं, जैसे भूमि की उर्वरता, लोगों के व्यवसाय, लोगों को मिलने वाली सेवाएँ और सुविधाएँ तथा उन सुविधाओं को प्राप्त करने की लोगों में क्षमता। आमदनी के स्तरों तथा दैनिक जीवन की आवश्यकताओं पर किए जाने वाले खर्चों में भी बड़ी विविधता मिलती है। इसके साथ ही विभिन्न जीवन स्तर के लोगों के परिवहन के साधन और यात्रा करने के उनके उद्देश्य अलग-अलग हैं। मानव जीवन के इन विभिन्न पहलुओं की प्रत्यक्ष जानकारी उनसे संबंधित विधियों द्वारा विश्लेषण क्षेत्र-अध्ययन द्वारा ही सम्भव होता है। छपे-छपाये या सरकार द्वारा छापे गए आँकड़े अथवा विभिन्न स्रोतों से एकत्र किए आँकड़े इतने काफी नहीं होते कि उनकी मदद से भौगोलिक अध्ययन किया जा सके। अत: क्षेत्र-अध्ययन सर्वेक्षण के लिए एक सुअवसर प्रदान करता है जिससे भूगोलवेत्ता स्वयं अपने आँकड़े तैयार करता है। इसके अतिरिक्त क्षेत्र-अध्ययन हमें प्रेक्षण करने, आँकड़ों को भरकर मानचित्र बनाने, लोगों के साथ साक्षात्कार करने, विभिन्न घटकों का वितरण देखने और उनके बीच कार्य-कारण संबंध मालूम करने के अनेक अवसर प्रदान करता है।

क्षेत्र-अध्ययन कैसा हो? यह इस बात पर निर्भर करेगा कि हम क्या अध्ययन करना चाहते हैं और क्यों चाहते हैं? इसका अर्थ यह हुआ कि क्षेत्र-अध्ययन का प्रसार और उसकी विधि क्षेत्र-अध्ययन के उद्देश्य और विषय पर निर्भर करते हैं। अत: क्षेत्र-अध्ययन वह क्रिया है जिसमें क्षेत्र में घूम-फिरकर प्रेक्षण किया जाता है, मानचित्र, आरेख और रेखाचित्रों में एकत्र किए आँकड़ों को व्यक्त किया जाता है और विशेष रूप से बनाई प्रश्न-माला द्वारा लोगों से पूछ-ताछ की जाती है।

क्षेत्र-अध्ययन की योजना

किसी क्षेत्र का वास्तविक अध्ययन प्रारंभ करने से पूर्व उसका विषय तय कर लेना चाहिए। इसके बाद ही क्षेत्र से संबंधित उपलब्ध मानचित्रों एवं विभिन्न सूचनाओं को एकत्र करने का कार्य उपयोगी हो सकेगा। विविध आँकड़ों और सूचनाओं को भरने के लिए क्षेत्र का एक आधार मानचित्र, पिछले अध्याय में बताई गई उपयुक्त मानचित्रण-विधियों के अनुसार तैयार कर लेना लाभप्रद होगा। आपको सम्भवत: इस मानचित्र की कई प्रतियों की आवश्यकता पड़ेगी। क्षत्र के विविध उच्चावच लक्षणों, वृहत भूमि-उपयोगों, बस्तियों के प्रतिरूपों, यातायात और संचार सुविधाओं की सुव्यवस्थित जानकारी प्राप्त करने के लिए क्षेत्र के स्थलाकृतिक मानचित्रों का पहले से अध्ययन कर लेना अधिक उपयोगी होगा। इससे क्षेत्र-अध्ययन का वास्तविक कार्य आसान हो जाएगा। क्षेत्र का पूरा सर्वेक्षण करने में बहुत समय लगता है। अत: क्षेत्र अध्ययन में प्राय: कुछ उपयुक्त संख्या में प्रतिदर्श चुन लिए जाते हैं। उदाहरणार्थ यदि एक गाँव में 1000 खेत हैं तो उनमें से आप विस्तृत अध्ययन के लिए 100 खेत चुन सकते हैं और इस

स्थिति में कहा जाएगा कि इस गाँव के भूमि-उपयोग के प्रतिदर्शी सर्वेक्षण में हमने 10 प्रतिशत प्रतिचयन किया है।

यहाँ आगे के पृष्ठों में क्षेत्र-अध्ययन के कुछ नमूने दिए जा रहे हैं। ये आपको क्षेत्र-अध्ययन की योजना बनाने एवं उनमें कार्य करने की विधियों से अवगत कराने में बहुत मदद देंगे। आपसे यह आशा की जाती है कि विद्यालय के आसपास के वातावरण में से अपनी रुचि के अनुसार कोई विषय चुनकर शिक्षक के मार्गदर्शन में क्षेत्र-अध्ययन का अनुभव अवश्य प्राप्त करेंगे। क्षेत्र-अध्ययन के लिए कोई भी रुचिपूर्ण विषय हो सकता है। उदाहरणार्थ यदि आपका विद्यालय किसी ऐसे कस्बे या बड़े गाँव में स्थित है, जो कृषि की दृष्टि से बहुत ही सम्पन्न है तो आप क्षेत्र-अध्ययन की योजना के लिए विद्यालय के पास-पड़ोस में भूमि-उपयोग का विषय ले सकते हैं। यदि विद्यालय वनीय, पहाड़ी अथवा तटीय क्षेत्र में स्थित है तो क्षेत्र-अध्ययन का कार्य स्थलरूपों की जानकारी अथवा स्थानीय उच्चावच लक्षणों के अध्ययन पर हो सकता है। यदि विद्यालय किसी महानगर में है और यदि उस नगर का आर्थिक आधार औद्योगिक क्रियाकलाप है तो क्षेत्रीय कार्य की योजना किसी उद्योग के अध्ययन पर हो सकती है। इसी प्रकार नगर में बाजार का भी अध्ययन किया जा सकता है। विद्यालय का स्रवण-क्षेत्र जानना स्थानीय-अध्ययन का बहुत ही रुचिपूर्ण विषय हो सकता है यदि आपका विद्यालय किसी ऐसे महानगर में स्थित है, जहाँ नगर के विभिन्न भागों और विविध सामाजिक एवं आर्थिक वर्गों से छात्र तथा छात्राएँ पढ़ने आते हैं। अपने सहपाठियों और दूसरी कक्षाओं के छात्र-छात्राओं से पूछकर योजनानुसार जानकारी प्राप्त करना स्वयं में बड़ी रुचिपूर्ण क्रिया है और इससे नगर के विविध कार्यों के बीच आप अपने विद्यालय को और भी सजीव रूप से जान सकेंगे।

1. भूमि-उपयोग सर्वेक्षण :

भूमि-उपयोग के अध्ययन में क्षेत्रीय कार्य सारे गाँव का हो सकता है अथवा इसके किसी भाग का। यह मुख्यतः इस बात पर निर्भर करता है कि भूमि-उपयोग सर्वेक्षण कितने बड़े भाग का करना है। किसी गाँव के भूमि-उपयोग सर्वेक्षण में मूलतया उस ग्राम के मानचित्र में सभी प्रकार के भूमि-उपयोगों को दिखाना होता है। ग्राम का मानचित्र सामान्यतः भू-कर मानचित्र होता है जिसमें गाँव की सारी भूमि का लेखा-जोखा दिया रहता है अर्थात् उस पर सभी भूखंडों या खेतों की सीमाएँ बनी होती हैं और साथ ही प्रत्येक की संख्या या खसरा नम्बर लिखा रहता है
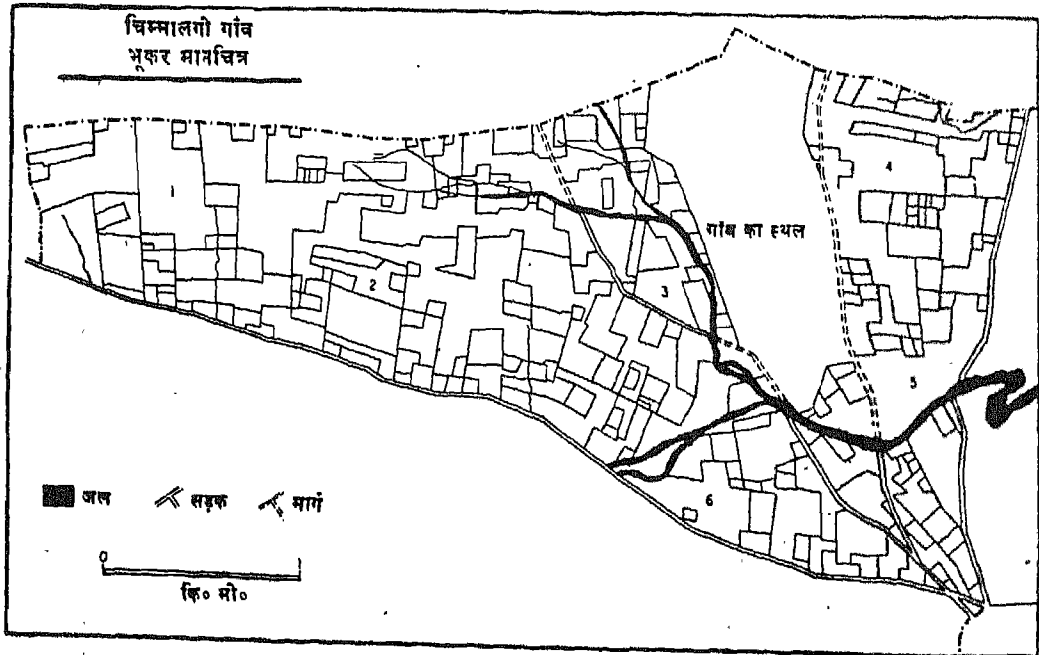
चित्र—55 भूकर मानचित्र खेतों की सीमाओं के साथ
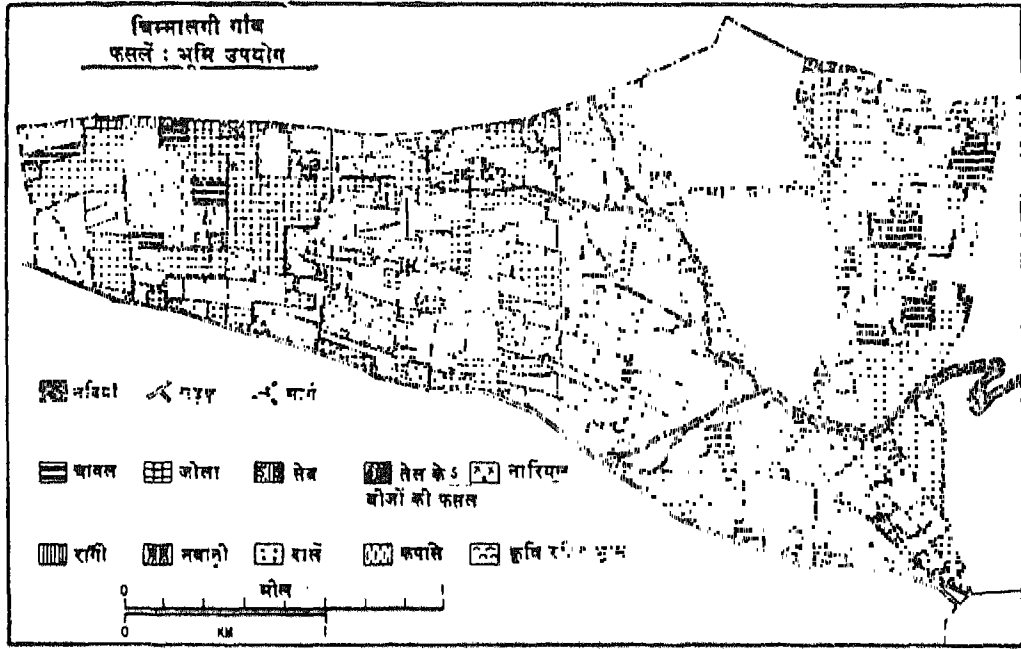
चित्र—56 भूकर मानचित्र भूमि-उपयोग दिखाते हुए

(चित्र 55 और 56)। सर्वेक्षण करने से पूर्व क्षेत्र में कोई स्थाई वस्तु संदर्भ-बिन्दु के रूप में चुन ली जाती है। इस संदर्भ बिन्दु को मानचित्र पर भी उपयुक्त स्थान पर चिन्हित कर लिया जाता है। फिर इस संदर्भ-बिन्दु से विभिन्न भूखंडों या खेतों का क्रमवार निरीक्षण किया जाता है और साथ ही उनके विविध उपयोगों को। मानचित्र पर विभिन्न भूमि-उपयोगों को दिखाने के लिए आप कुछ चिन्ह अथवा सूक्ष्म नाम चुन सकते हैं। उदाहरणार्थ आप धान के खेतों को 'ध' और गेहूँ के खेतों को 'ग' आदि चिन्हों से निरूपित कर सकते हैं। एक मानचित्र पर मिट्टियों के प्रकार, उनके रंग और बनावट के अनुसार दिखा सकते हैं। और साथ ही ढलान, अपवाह तथा फसलें जो सिंचाई सहित पैदा की जा रही हैं अथवा बिना सिंचाई के, आदि विशेषताओं पर टिप्पणियाँ भी लिख लेनी चाहिएँ। इसके बाद खेतों को जोतने वाले किसानों से पूर्वनिर्मित प्रश्नावली के अनुसार पूछताछ करनी चाहिए। प्रश्नों के उत्तर लिखने के लिए आपके पास एक सारणी भी होनी चाहिए। इसमें आप किसान से विनम्रतापूर्वक पूछ-पूछकर सारी सूचना क्रमवार भर सकते हैं। किसान एक ऐसा व्यक्ति है जो अपने खेत पर फसल पैदा करने के संबंध में कई प्रकार के निर्णय लेता है, जैसे कब और कहाँ कौन-सी फसल बोई जाय, किस खेत में किस क्रम से शस्यावर्तन किया जाय? किस फसल की सिंचाई की जाय और किसकी नहीं? किस खेत में कौन सी और कितनी मात्रा में खाद या उर्वरक डाले जायें, आदि ऐसे प्रश्न हैं जिनके बारे में किसानों का अपना-अपना निर्णय होता है। अतः इस बारे में सारी सूचनाएँ निम्न-लिखित तालिका में भरिए।

भूमि-उपयोग के सर्वेक्षण कार्य को आप अपने सह-पाठियों की एक, दो या तीन टोलियाँ बनाकर बाँट सकते हैं। प्रत्येक टोली को क्षेत्र के एक विशिष्ट भाग का सर्वेक्षण करने को कहा जा सकता है। इस प्रकार काम बाँटने से पूरे क्षेत्र का अध्ययन कम समय में हो सकता है।

इसके बाद का काम है सभी टोलियों से आँकड़े एकत्र करके उन्हें सारणीबद्ध करना और मानचित्र पर विभिन्न भूमि-उपयोगों को रंगों या आभाओं द्वारा दिखाना। हर फसल को दिखाने के लिए अलग रंग या आभा चुनी जाए। सिंचित और असिंचित खेतों को विभिन्न रंगों और आभाओं के मिश्रण से अलग-अलग दिखाया जाए। दूसरे मानचित्र पर विभिन्न प्रकार की मिट्टियों के वितरण को दिखाया जा सकता है। मानचित्र बनाने के बाद उस पर

सारणी-1

किसान से पूछी गई जानकारी को संकलित करने की एक सारणी

क्रम संख्या	खेत या खसरा नम्बर	खेत जोतने वाले का नाम	खेत का क्षेत्रफल (हेक्टेयर में)	मिट्टी की किस्में	पैदा की जाने वाली फसलें						सिंचाई		
					खरीफ			रबी	सभी ऋतुओं में		खरीफ	रबी	सभी ऋतुओं में
				लाल, काली, दुमट, बलुई आदि	धान	ज्वार	बाजरा	गेहूं	कपास	मिर्च			
1													
2													
3													
4													
5													
6													
7													
8													

फुटनोट : 1. उन्हीं फसलों को लिखिए जो वास्तव में पैदा की जाती हैं।

2. किसान से पूछिए कि वह अपने खेत में कितनी बार सिंचाई करता है अर्थात् सप्ताह में एक बार या दो दिन में एक बार आदि और साथ ही सिंचाई का स्रोत मालूम करिए अर्थात् कुआँ, तालाब या नहर।

उभरे भूमि-उपयोग के प्रतिरूप, उसमें समानता और असमानता, उनका ढलान, मिट्टी की किस्म और सिंचाई आदि से सम्बन्धित पहलुओं को ध्यान में रखकर मानचित्र की व्याख्या लिखिए। भूमि-उपयोग और मिट्टी के प्रकार के मानचित्रों को अध्यारोपित करके एक मिला-जुला मानचित्र बनाइए। यह आपको इन दोनों के संबंधों का विश्लेषण करने में मदद देगा। पूरे क्षेत्र के आँकड़ों को प्रत्येक फसल और सिंचित तथा असिंचित के अंतर्गत जोड़ लीजिए। फिर इन आँकड़ों और मानचित्रों का विश्लेषण करके अपनी रिपोर्ट तैयार करिए। इस रिपोर्ट या प्रतिवेदन में उपयुक्त स्थानों पर मानचित्रों और सारणियों को भी लगाइए।

2. विद्यालय का स्रवण-क्षेत्र जानना

इस अध्ययन का उद्देश्य छात्र और छात्राओं द्वारा अपने घर और विद्यालय के बीच आने-जाने के प्रतिरूपों का विश्लेषण करना और गमनागमन की तीव्रता के आधार पर विद्यालय का स्रवण-क्षेत्र पहचानना है।

भूगोल का छात्र प्रायः इस जानकारी से अपरिचित होता है कि एक नगर या ग्राम में उसके विद्यालय की क्षेत्रीय स्थिति उसे अत्यंत महत्वपूर्ण भौगोलिक खोज करने के अवसर प्रदान करती है। किसी नगर या ग्राम या संस्थान में स्थित स्कूल का अपना एक स्रवण-क्षेत्र होता है जहाँ से छात्र और छात्राएँ विद्यालय में रोज पढ़ने आते हैं। स्रवण-क्षेत्र को दूसरे शब्दों में विद्यालय का प्रभाव-क्षेत्र भी कह सकते हैं। विद्यार्थी अपने घरों से विद्यालय पहुँचने के लिए परिवहन के विभिन्न वाहनों का प्रयोग करते हैं और इन वाहनों की उपयोगिता इस बात पर निर्भर करती है कि छात्र के घर से विद्यालय की दूरी कितनी है? घर से रेलवे स्टेशन या बस स्टाप पहुँचना कितना सुगम है? स्कूल पहुँचने के लिए वे स्कूल-बस और साइकिल का भी प्रयोग कर सकते हैं। आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न परिवारों के छात्र अपने वाहन जैसे कार और स्कूटर का प्रयोग कर सकते हैं। विद्यालय के आस-पास रहने वाले बहुत से विद्यार्थी या गरीब परिवारों के के छात्र स्कूल में प्रतिदिन पैदल आते हैं। विद्यालय के स्रवण-क्षेत्र की सीमाएँ मालूम करने के लिए क्षेत्र-अध्ययन निम्नलिखित पहलुओं पर होना चाहिए :

1. विद्यालय की स्थिति

सारणी 2

विद्यार्थियों के घर से स्कूल आने-जाने का प्रतिरूप एवं गहनता

उपनगर, इलाका, बस्ती, वार्ड आदि का नाम	इस इलाके में रहने वाले विद्यार्थियों की कुल संख्या	परिवहन-साधन के अनुसार विद्यार्थियों की संख्या					
		पैदल	साइकिल	बस	रेल	व्यक्तिगत वाहन	स्कूल-बस
1							
2							
3							

सारणी 3

व्यावसायिक पृष्ठ भूमि

उपनगर, इलाका, बस्ती, वार्ड, आदि का नाम	विभिन्न व्यावसायिक पृष्ठभूमि के परिवारों से विद्यालय में पढ़ने वाले विद्यार्थियों की संख्या			
	कृषि	व्यापार	उद्योग	अन्य व्यवसाय (वास्तविक व्यवसायों के नाम)
1				
2				
3				
4				

सारणी 4

विभिन्न आय-वर्गों से आए छात्रों की संख्या

उपनगर, इलाका, बस्ती, वार्ड आदि का नाम	विभिन्न आय-स्तरों पर परिवारों से विद्यालय में आने वाले छात्रों की संख्या रुपये प्रति मास				टिप्पणी
	100 से कम	100-500	500-1000	1000 से ऊपर	

नोट : विद्यालय के अभिलेखों से यह सारणी भरते समय शिक्षक को यह ध्यान रखना चाहिए कि जिन छात्रों की यह जानकारी गोपनीय है उन्हें इस सूचना के उलझन में न डाला जाए।

2. छात्रों के निवासस्थानों की स्थितियाँ
3. परिवहन का प्रतिरूप
4. छात्रों के परिवारों की व्यावसायिक एवं आर्थिक पृष्ठभूमि

क्षेत्र-अध्ययन की प्रक्रिया

(क) जिस नगर या गाँव में विद्यालय स्थित है उसका मानचित्र प्राप्त किया जाए और छात्रों की विभिन्न टोलियों द्वारा सर्वेक्षण-कार्य करने के लिए उस मानचित्र की कई प्रतियाँ बना ली जाएँ। नगरों और शहरों में प्रायः योजना विभाग, नगरपालिका या नगर निगम तथा अन्य सरकारी कार्यालयों में नगर या शहर के बड़े-बड़े मानचित्र होते हैं। आप उनकी प्रतिलिपि प्राप्त कर सकते हैं या उन्हें ट्रेसिंग कागज पर उतार सकते हैं। यदि आपका स्कूल किसी कस्बे या गाँव में स्थित है तो उसका मानचित्र तहसील-कार्यालय और थाने से प्राप्त हो सकता है। इन मानचित्रों में गाँव और बस्तियों की स्थिति दी होती है और साथ ही यातायात-मार्ग भी दिखाए होते हैं। ऐसा मानचित्र अध्ययन के लिए अधिक उपयुक्त होता है, क्योंकि ग्रामीण क्षेत्रों में विद्यालय की सुविधाएँ प्रायः उस बड़े गाँव में होती है जो आसपास के कई छोटे गाँवों और बस्तियों के मध्य स्थित होता है।

(ख) विद्यालय के अभिलेखों से सारिणी 2-4 में दिए गए सारणियों के रूप में सूचनाएँ एकत्र करिए :

(ग) सारिणी 2-4 में दी गई सारणियों के अनुसार आँकड़े एकत्र करने के बाद अगला कार्य है इन आँकड़ों की मदद से प्रवाह मानचित्र तैयार करना। इस मानचित्र में प्रवाह-पट्टिकाओं या तीरों की मोटाई क्षेत्रों के अनुपात में होती है। इस प्रकार के मानचित्र बनाने की विधियाँ अध्याय तीन में स्पष्ट की गई हैं। इस मानचित्र से विद्यालय के स्रवण-क्षेत्र की जानकारी होगी।

(घ) दूसरे मानचित्र पर चक्रारेख बनाइए जिसमें विभिन्न वृत्तों की त्रिज्याएँ विभिन्न क्षेत्रों से आने वाले छात्रों की कुल संख्या के अनुपात में हों। वृत्तों के विभिन्न भागों द्वारा प्रत्येक क्षेत्र का व्यावसायिक एवं आय का स्तर दिखाया जा सकता है।

(च) विद्यालय के स्रवण-क्षेत्र के विभिन्न भागों का भ्रमण करके यह जानकारी एकत्र की जाए कि प्रत्येक क्षेत्र में भूमि-उपयोग कैसा है अर्थात् आवासीय (भीड़-भाड़ वाला अथवा खुला हुआ), व्यापारिक, औद्योगिक, मिला-जुला आदि।

अंत में एक विस्तृत प्रतिवेदन तैयार किया जाए जिसमें पूर्ण व्याख्या के साथ उपयुक्त स्थानों पर सारणियाँ, मानचित्र तथा आरेख लगे हों। प्रतिवेदन में विशेषरूप से आवागमन के प्रतिरूपों का विश्लेषण हो और विद्यालय के स्रवण-क्षेत्र की विशेषताओं का समावेश हो।

3. बाजार का सर्वेक्षण

बाजार, चाहे वे ग्रामीण क्षेत्र में हों अथवा नगरीय क्षेत्र में, उनका भारतीय जीवन से गहरा संबंध है। वे हमारी आवश्यकता की अनेक वस्तुओं के खरीदे और बेचे जाने के प्रमुख स्थल हैं अतः उनमें हमारे लिए बहुत सी सुविधाएँ और सेवाएँ स्वतः ही विकसित हो जाती है। कई वर्षों की अवधि में इन बाजार-स्थलों में जनसंख्या और सुविधाएँ एवं आर्थिक क्रियाएँ द्रुतगति से बढ़ने लगती हैं। कृषि में अपेक्षाकृत अधिक विकसित क्षेत्रों, जैसे पंजाब, हरियाणा और दक्षिण में कोयम्बतूर पठार के बाजार केन्द्रों में निकटवर्ती क्षेत्रों की कृषि-क्रियाओं की लय के अनुरूप विभिन्न ऋतुओं में व्यापार, व्यवसाय एवं अन्य आर्थिक क्रियाओं में घट-बढ़ होती रहती है। अतः बाजार के अध्ययन में प्रश्नावली की मदद से स्थानीय पूछ-ताछ और क्षेत्र में प्रेक्षण करना अति आवश्यक है।

सर्वेक्षण के उद्देश्य

अध्ययन की दृष्टि से बाजार के सर्वेक्षण के कई उद्देश्य हो सकते हैं। बाजार में बिकने के लिए किस किस्म की वस्तुएँ कहाँ-कहाँ से आती हैं, इस संदर्भ में पूछताछ करके बाजार के प्रभाव-क्षेत्र को पहचाना जा सकता है। बाजार में विभिन्न प्रकार की दुकानों की संख्या और उनका प्रति-रूप अथवा वितरण अध्ययन करना इस सर्वेक्षण का दूसरा उद्देश्य हो सकता है। किसी स्थान के जनसंख्या का आकार निकटवर्ती क्षेत्रों के संदर्भ में उसकी स्थिति एवं विशिष्ट बाजारों के आकार तथा प्रकार के बीच गहरा संबंध होता है। बड़े-बड़े नगरों के विभिन्न भागों में आपने विशिष्ट प्रकार के बाजार अवश्य देखे होंगे जिनमें प्रायः एक ही प्रकार की वस्तुओं के खरीदने और बेचने का बाहुल्य होता है, जैसे कपड़ा बाजार या बजाजा, बर्तन बाजार, सब्जी मंडी, अनाज मंडी, बिसातखाना बाजार,

रेडियो तथा बिजली की अन्य वस्तुओं का बाजार, चमड़ा तथा जूता बाजार एवं फर्नीचर बाजार। आपने यह भी देखा होगा कि दैनिक आवश्यकताओं की वस्तुओं से संबंधित बाजार जैसे सब्जी और हलवाई बाजार नगर प्राय: हर भाग में मिलते हैं। परन्तु इसके विपरीत कपड़े, फर्नीचर, बर्तन आदि की अधिकतर दुकानें विशेष स्थलों पर ही पाई जाती हैं। आपने यह भी देखा होगा कि दुकानों का प्रतिरूप और उनकी साज-सज्जा उनमें बेची जाने वाली वस्तुओं के अनुसार अलग-अलग होती है।

सर्वेक्षण की प्रक्रिया

अब हम आगे के पृष्ठों में चर्चा करेंगे कि बाजार में स्थित दुकानों के वितरण, उनके प्रतिरूप एवं उनका अन्य दुकानों से संबंध, आदि के संदर्भ में उनका विश्लेषण एवं सर्वेक्षण किस प्रकार किया जाए। बाजार के सर्वेक्षण में प्राय: निम्नलिखित कार्य करने होते हैं।

बाजार का चयन तथा आधार मानचित्र का निर्माण

सर्वेक्षण-कार्य के लिए बाजार को चुनने में उसके महत्व, विद्यालय से उसकी निकटता और वहाँ पहुँचने की सुविधा आदि को ध्यान में रखकर बाजार का पूर्व अध्ययन किया जाता है। सर्वेक्षण के लिए बाजार चुनने के बाद उसके संबंध में जो कुछ भी आँकड़े, सूचनाएँ, मानचित्र आदि उपलब्ध हों उनका अध्ययन किया जाता है। जिले की जनगणना पुस्तिकाओं में जनसंख्या, लोगों के व्यवसाय, उपलब्ध सुविधाएँ, क्षेत्रफल आदि के बारे में विविध प्रकार की सूचनाएँ दी होती हैं और सर्वेक्षण में इन सूचनाओं का समुचित उपयोग किया जा सकता है। अगला कार्य है उस स्थान का मानचित्र प्राप्त करना। यदि यह नगर या कस्बा है तो उसका मानचित्र नगर नियोजन विभाग अथवा नगर पालिका से प्राप्त हो सकता है। यदि इन स्रोतों से मानचित्र उपलब्ध न हो तो सम्भवत: मूल मानचित्र अथवा स्थलाकृतिक मानचित्र अथवा बस्तियों के मानचित्रों से आपको अपने सर्वेक्षण किए जाने वाले स्थल का भाग ट्रेसिंग कागज पर उतारना पड़ेगा। अन्यथा आप स्वयं भ्रमण द्वारा प्रेक्षण करके बाजार का अपना रेखामानचित्र तैयार कर सकते हैं।

विद्यार्थियों का विभिन्न टोलियों में विभाजन

बाजार के अलग-अलग भागों में सर्वेक्षण कार्य करने के लिए छात्रों को कई समूहों में बाँटा जाए और बाद में उन सबके द्वारा किए गए प्रेक्षणों और प्राप्त सूचनाओं को एक जगह एकत्रित किया जाए। यदि बाजार बहुत बड़ा है तो विद्यार्थियों की कई टोलियाँ बनाना नितांत आवश्यक है।

संकेतों एवं चिह्नों की नियमावली का निर्माण

विभिन्न प्रकार की दुकानों एवं प्रतिष्ठानों को संकेतों या संक्षिप्त नामों से मानचित्र पर दिखाने के लिए एक सुव्यवस्थित कोड या नियमावली तैयार की जानी चाहिए। इसमें अक्षर अथवा संख्याएँ चिह्न के रूप में चुनी जा सकती हैं जैसे 'स' सब्जी के लिए, 'अ' अनाज के लिए, 'द' दवाओं की दुकान के लिए आदि।

बाजार में पूछ-ताछ एवं प्रेक्षण

सड़क पर चलकर इसके दोनों किनारों की दुकानों को बाजार के मानचित्र में दिखाइए। दुकान के प्रकार और उसमें बेची जाने वाली प्रमुख वस्तुओं के नाम भी लिख लीजिए। यदि दुकान में बहुत सी वस्तुएँ बेची जाती हैं तो दुकानदार से मालूम करिए कि इनकी दुकान पर कौन-कौन सी वस्तुएँ सबसे ज्यादा बेची जाती हैं।

इमारतों का वर्गीकरण

मानचित्र में प्रत्येक प्रकार की दुकान लिखने के साथ दुकान की इमारत के बारे में भी कुछ ब्यौरे लिखिए, जैसे कच्ची या पक्की, एक मंजिल या दो मंजिल अथवा कई मंजिल, लकड़ी का खोखा, खुली जगह जहाँ बेचने के लिए वस्तुएँ रखी हैं। इन सभी प्रकार की इमारतों का पहले से ही घूम-फिरकर और देखकर वर्गीकरण तैयार कर लेना चाहिए।

बाजार के दो अलग-अलग मानचित्र बनाना

दो अलग-अलग मानचित्र बनाइए, एक में बेची जाने वाली वस्तुओं और स्थिति के आधार पर दुकानों के प्रकार दिखाइए और दूसरे में दुकानों की इमारतों के प्रकार दिखाइए।

आँकड़ों को सारणीबद्ध करना :

दुकानों की संख्या को निम्नलिखित सारणी में भरिए :

सारणी 5 : दुकानों के प्रकार के अनुसार बाजार की संरचना

क्र० सं०	दुकान के प्रकार	दुकानों की संख्या	दुकानपर बेची जाने वाली प्रमुख वस्तुएँ	दुकान की स्थिति	दुकान की इमारत की किस्म
1.	प्रोविजन स्टोर				
2.	साइकिल का विक्रय और उसकी मरम्मत				
3.	बर्तनों की दुकान				
4.	फर्नीचर				
5.	बिसातखाना				
	कुल योग				

टिप्पणी : दूकानों की स्थिति के संबंध में आप लिख सकते हैं कि वे मुख्य बाजार के कोने पर हैं, अथवा मध्य में बाहरी सीमा पर इसमें मानचित्र से बहुत बड़ी सहायता मिल सकती है। जब आप सड़क पर चल फिर कर सर्वेक्षण कर रहे हों तो स्थिति को अच्छी तरह देखें। इसी प्रकार दूकानों की इमारतों का भी प्रेक्षण करें।

प्रतिशत निकालना

सर्वेक्षण के अंतर्गत आई दुकानों की कुल संख्या के आधार पर प्रत्येक प्रकार की दुकानों का प्रतिशत बेची जाने वाली वस्तुओं तथा इमारतों के अनुसार अलग-अलग निकालिए। उदाहरणार्थ 100 दुकानों का सर्वेक्षण किया गया है और यदि उनमें से 25 दुकानों में सब्जियाँ बेची जाती हैं, तो हम कह सकते हैं कि अमुक बाजार में 25 प्रतिशत दुकानों का संबंध सब्जियों के क्रय-विक्रय से है। सभी प्रकार की दुकानों के प्रतिशत निकालने से आपको ज्ञात हो जाएगा कि बाजार में किस प्रकार की दुकानों की प्रधानता है। अलग-अलग बाजारों में किस प्रकार की दुकानों का बाहुल्य है, इसे जानने के लिए निम्नलिखित सारणी द्वारा तुलना की जा सकती है।

सारिणी 6 : दुकानों के प्रकार

क्र० सं०	बाजार का नाम	दुकानों की कुल संख्या	विभिन्न प्रकार की दुकानों का प्रतिशत									
			1	2	3	4	5	6	7	8	9	10

एक ही प्रकार की दुकानों का समूह

आप देखेंगे कि बाजारों में कहीं-कहीं लगातार एक प्रकार की बहुत-सी दुकानें होती हैं। ऐसी दुकानों के प्रत्येक समूह में दुकानों की संख्या लिख लें। यह संख्या सारे बाजार में उस तरह की कुल दुकानों की संख्या का कितना प्रतिशत है, इसे भी निकाल लें। उदाहरणार्थ एक बाजार में साइकिल की कुल 20 दुकानें हैं और उनमें से 15 दुकानें एक ही स्थान पर एक-दूसरे से सटी हुई हैं। अतः हम कहेंगे कि बाजार के इस स्थान पर साइकिल की दुकानों का समूह 75 प्रतिशत है। इसी प्रकार अन्य किस्म की दुकानों के प्रतिशत समूह निकालिए। इसी तरह आप दुकानों को उनकी स्थिति और उनके समूह के अनुसार वर्गीकृत कर सकते हैं।

इस अध्ययन अथवा सर्वेक्षण के अंतिम प्रतिवेदन में दोनों मानचित्रों और सारणी सहित उनकी पूरी व्याख्या होनी चाहिए।

4. किसी उद्योग का सर्वेक्षण

इसके अंतर्गत किसी ऐसे उद्योग अथवा फैक्ट्री या कार्यशाला का अध्ययन किया जाता है जहाँ गौण उत्पादों का निर्माण होता है।

(1) उद्देश्य

1.1. निम्नलिखित प्रश्नों के पूरी छान-बीन के साथ कुछ हल ढूंढ़ना।

1.2. आज जिस स्थान पर उद्योग है वहाँ वह क्यों स्थापित किया गया ? (यह एक बहुत ही तुच्छ उद्देश्य है क्योंकि क्षेत्र में पूछ-ताछ करने पर प्रायः इस प्रश्न का मौलिक उत्तर नहीं मिलता । सामान्यतः उद्योग-पति फैक्ट्री के उस स्थान पर स्थापित करने के कारण न बताकर कुछ ऐसे कारण बताते हैं जिन पर उद्योग का अस्तित्व निर्भर है।)

1.3. निम्नलिखित का क्या उपयोग है ?
- (क) कारखाने द्वारा घेरी गई भूमि ।
- (ख) स्थानीय साधन तथा अन्य उद्योगों के उत्पाद अथवा दूसरे क्षेत्र के ये सभी साधन ।
- (ग) विभिन्न स्तरों के स्थानीय कामगार अथवा अन्य क्षेत्रों से आए श्रमिक या आयातित श्रम ।
- (घ) स्थानीय पूँजी अथवा बाहर की या आयातित पूँजी ।
- (च) अन्य उद्योगों सहित स्थानीय बाजार अथवा बाहर का बाजार ।

1.4. क्या उद्योग मुख्यतः आमदनी के लिए हैं ? श्रमिकों को बहुत कम संख्या में लगाना अथवा श्रमप्रधान है जिससे आस-पास के लोगों को खूब काम मिलता है।

टिप्पणी : किसी एक कारखाने या उद्योग का एक छात्र या पूरी कक्षा द्वारा सर्वेक्षण करने पर इन उद्देश्यों में आंशिक सफलता मिलेगी । अधिक उपयोगी परिणाम उस समय मिलेंगे जब पूरी कक्षा ऐसे कई कारखानों का अध्ययन करेगी ।

(2) सर्वेक्षण के लिए उद्योग का चयन

सर्वेक्षण के लिए निजी अथवा सार्वजनिक क्षेत्रों में से कोई एक छोटा स्वतंत्र कारखाना चुनिए जिसमें अध्ययन का कार्य आसानी से हो सके । छोटे पैमाने के उद्योगों के एक निजी कारखाने में किसी राष्ट्रीय अथवा अंतर्राष्ट्रीय औद्योगिक प्रतिष्ठान की तुलना में एक छात्र अथवा छात्रों के एक छोटे समूह द्वारा कुछ घंटों की पूछ-ताछ से ही अपेक्षाकृत अधिक काम एवं कम समय में आसानी से सर्वेक्षण कार्य हो जाता है। बहुत अधिक छोटे कारखाने जैसे एक छोटी मशीन का कमरा, एक छोटी मशीन वाली चावल की मिल या तेल की मिल आदि में भी सर्वेक्षण-कार्य के परिणाम यथोचित नहीं मिलते ।

(3) प्रश्नमाला और उत्तरों का संकलन :

नीचे कुछ प्रश्न दिए हैं जिन्हें आप उद्योग-अध्ययन के दौरान कारखाने के मालिक, मैनेजर, जनसंपर्क अधिकारी अथवा अन्य किसी जिम्मेदार व्यक्ति से पूछेंगे । कुछ प्रश्नों के उत्तरों के लिए आपको रेखाचित्र अथवा नक्शा भी बनाना होगा । प्रत्येक प्रश्न के साथ कोष्टक में कुछ टिप्पणियाँ दी गई हैं जिनकी मदद से आपको प्रश्नों के उत्तर निकालने में आसानी रहेगी । कुछ पेचीदा सवालों के जवाब निकालने के लिए अतिरिक्त विवरण दिया गया है।

3.1. आप यहाँ किस वस्तु का निर्माण करते हैं ?

टिप्पणी : यदि कारखाने में कई किस्मों की बहुत-सी वस्तुएँ बनाई जाती हैं तो उनमें में मुख्य श्रेणियों के नाम विशिष्ट उदाहरणों सहित लिखें । उदाहरणार्थ एक औद्योगिक इकाई में सिलाई की मशीनों के छोटे-छोटे मोटर, जमीन में छेद करने की ड्रिलें और पम्प, सिंचाई के छोटे पम्प, अन्य उद्योगों के लिए मोटर, मशीन के पुर्जे और रेडियो बनाने के लिए बिजली के सर्किट आदि निर्मित किए जाते हैं, तो यह सारा विवरण रिपोर्ट में आना चाहिए ।

3.2. आपकी राय में यह औद्योगिक इकाई यहीं पर क्यों स्थापित की गई है ?

टिप्पणी : जो कुछ उत्तर मिले उसे एक या दो वाक्यों में संक्षिप्त रूप से लिख लें । ऊपर दी गई मद संख्या 1.2 भी देखें ।
- (क) भूमि की सुलभता ।
- (ख) श्रम की सुलभता ।
- (ग) पूंजी की सुलभता ।
- (घ) बाजार की सुलभता ।
- (च) मालिक एवं अन्य उद्यमकर्ताओं की अपने व्यक्तिगत आवासों के लिए पसन्द ।
- (छ) अन्य कारण ।

(इन प्रश्नों के संपूर्ण उत्तर रिपोर्ट में सम्मिलित करिए ।)

3.3 कच्चा माल अथवा उद्योग के घटक
- (क) उद्योग के क्या-क्या प्रमुख कच्चा माल अथवा घटक हैं ?

टिप्पणी : यदि ये बहुत सारे हैं तो उनके प्रमुख वर्गों के नाम और वस्तुओं के विशिष्ट उदाहरण सहित लिखिए । (इस प्रश्न का उत्तर रिपोर्ट में सम्मिलित करिए ।)

(ख) कच्चा माल कहाँ से आता है ?

(रिपोर्ट में इस विषय पर एक मानचित्र बनाकर सम्मिलित करिए और साथ ही कुछ महत्वपूर्ण टिप्पणियाँ भी दीजिए।)

(ग) कच्चे माल का संसाधन किस प्रकार होता है ? टिप्पणी इस प्रश्न के द्वारा उद्योग की तकनीकी जानने का प्रयास करिए। कच्चे माल के प्रयोग में भूमि तथा खुली जगह का भी प्रयोग होता है। इसके उत्तर को प्रवाह-आरेख के साथ रिपोर्ट में सम्मिलित करिए।)

3.4 पूंजी-पदार्थ, मशीन तथा इसी तरह का अन्य सामान

(क) पूंजी-पदार्थ, मशीन तथा इसी प्रकार का अन्य सामान क्या-क्या हैं ? (इसके उत्तर को रिपोर्ट में शामिल करिए।)

(ख) औद्योगिक इकाई की कुल प्रदत्त पूंजी अर्थात् लगाई गई कुल पूंजी कितनी है ? (इसके उत्तर को रिपोर्ट में शामिल करिए।)

3.5 निवेश और निकासी

(क) उद्योग में प्रतिवर्ष निवेश कैसा है ? (मुख्य-मुख्य मदें लिखिए।)

(ख) उद्योग से प्रतिवर्ष निकासी क्या है ? (उत्तर रिपोर्ट में शामिल करिए और साथ ही प्रवाह-आरेख बनाइए। इस आरेख को ऊपर लिखे 3.3 (ग) के आरेख के साथ मिला सकते हैं।)

3.6 श्रम

नीचे दी गई प्रत्येक श्रेणी के कर्मचारियों की संख्या और सभी के घर के पते अथवा प्रत्येक श्रेणी में कुछ (वर्णित प्रतिचयन) अर्थात् प्रत्येक पाँचवें, दसवें, पन्द्रहवें, बीसवें आदि के पते लिखे जाए।

श्रमिक श्रेणी	संख्या	घर का पता
(क) हाथ से काम करने वाले श्रमिक		
(ख) अर्ध-कुशल श्रमिक		
(ग) कुशल श्रमिक		
(घ) कार्यालय कर्मचारी अथवा लिपिक वर्ग		
(च) मैनेजर अथवा प्रशासकीय वर्ग		

(रिपोर्ट में आरेख—संख्याओं पर आधारित—और मानचित्र घरों के पतों पर आधारित बनाकर सम्मिलित करिए।)

3 7 बाजार

आपके यहाँ निर्मित वस्तुएँ मुख्यतः कहाँ बिकती हैं ? टिप्पणी : आपको तीन या चार प्रमुख बाजार चुनने होंगे अथवा निर्मित वस्तुओं के वर्ग बना सकते हैं और प्रत्येक वर्ग का विशिष्ट बाजार बताइए। (रिपोर्ट में मानचित्र और उस पर कुछ टिप्पणियाँ लिखकर सम्मिलित करिए।)

3.8 स्थानीय तथा बाह्य सहबन्धता

(क) क्या यह औद्योगिक इकाई अन्य उद्योगों (स्थानीय या बाहर) से अर्धनिर्मित वस्तुएँ मँगाकर कच्चे माल के रूप में प्रयोग करती हैं ?
(प्रमुख वस्तुओं के नाम और स्थान जहाँ से आती हैं, लिखे जाएँ।)

(ख) क्या यह औद्योगिक इकाई अर्धनिर्मित वस्तुओं को अन्य उद्योगों (स्थानीय या बाहर) के लिए बनाकर भेजती है ? प्रमुख वस्तुओं के नाम और स्थान जहाँ भेजी जाती हैं लिखिए—रिपोर्ट में टिप्पणी सहित एक मानचित्र सम्मिलित किया जा सकता है।

3.9 पूंजी के स्रोत (दीर्घकालिक पूंजी अथवा कार्यवाहक पूंजी)

निम्नलिखित पूंजी के प्रमुख स्रोत क्या हैं ?

पूंजी	हिस्सेदारों तथा शेयरधारियों द्वारा		बैंक तथा सहकारी समितियों द्वारा	
	स्थानीय	अन्यत्र	स्थानीय	अन्यत्र
दीर्घकालिक पूंजी				
कार्यवाहक पूंजी				

3.10 भूमि-उपयोग

(क) आप अपनी इकाई की सारी भूमि का किन-किन कार्यों में उपयोग करते हैं ?

टिप्पणी : औद्योगिक इकाई की सड़कों, कार-विश्राम-स्थलों, सामान को बाहर रखने के स्थानों, पार्कों और फुलवाड़ी तथा खेलने और मनोरंजन के स्थलों आदि पर जानकारी एकत्र करिए।

(ख) संपूर्ण फर्म का क्या-क्या उपयोग है ?

(रिपोर्ट में रेखाचित्र या मानचित्र या प्रवाह-चित्र सम्मिलित करिए ।)

3.11 शक्ति

आपको आपकी औद्योगिक इकाई में प्रयोग होने वाली शक्ति के क्या-क्या स्रोत हैं ?

(क) बिजली
(ख) डीजल
(ग) कोयला-भाप
(घ) अन्य

टिप्पणी : शक्ति को मापने की इकाई अश्वशक्ति प्रतिदिन, किलोवाट घंटे प्रतिदिन या अन्य कोई उपयुक्त इकाई का प्रयोग करिए ।

(उत्तर की रिपोर्ट की विषय-वस्तु में शामिल करिए ।)

3 12 जल

औद्योगिक इकाई में प्रयुक्त जल के क्या-क्या स्रोत हैं ? कितना घन मीटर जल प्रयोग होता है ? जल किस-किस काम आता है ? औद्योगिक स्रोत से जल-प्रदूषण की क्या-क्या संभावनाएँ हैं ? (उत्तर को रिपोर्ट की विषय-वस्तु में सम्मिलित करिए और साथ में मानचित्र या प्रवाह-चित्र लगाइए ।)

3.13 यातायात

निम्नलिखित के लिए यातायात के कौन-कौन से साधन प्रयोग किए जाते हैं ?

क्र० सं०	वस्तुएँ	रेल	ट्रक	टेम्पो	बैलगाड़ी	आदमी द्वारा खींचा ठेला	अन्य
(क)	कच्चा माल						
(ख)	तैयार माल						

(इसे रिपोर्ट में सम्मिलित करिए या आरेख टिप्पणियों सहित शामिल करिए ।)

3.14 इकाई की स्थिरता या अस्थिरता

(क) क्या औद्योगिक इकाई स्थाई है / प्रगति कर रही है / गिर रही है ?

(ख) क्या कच्चा माल संसोधित करने या तैयार माल बनाने की विधियाँ स्थाई हैं अथवा परिवर्तनशील ? (यदि विधियाँ बदल रही हों तो उसकी प्रकृति बताइए—उत्तर को रिपोर्ट में शामिल करिए ।)

4. निष्कर्ष

अपनी रिपोर्ट या प्रतिवेदन के अंतिम चरण में खंड 1 में दिए उद्देश्यों के प्रश्नों के उत्तर लिखिए। साथ ही अपने विचार लिखिए कि औद्योगिक इकाई स्थानीय, क्षेत्रीय और राष्ट्रीय आर्थिक विकास में क्या योगदान दे रही है ?

5. उच्चावच लक्षणों का सर्वेक्षण

उच्चावच लक्षणों को पहचानना, उनके मानचित्र बनाना और उनके विभिन्न रूपों का विश्लेषण करना क्षेत्रीय कार्य का महत्वपूर्ण अंग है। उच्चावच लक्षणों के अध्ययन में भूगोल का एक छात्र भौतिक दृश्यभूमि के विविध लक्षणों का स्वयं प्रेक्षण करता है और उनके विभिन्न प्रतिरूपों को देखकर उन प्राकृतिक प्रक्रमों को जानने का प्रयास करता है जिनके कारण वे बने हैं। स्थानीय स्तर पर स्थलरूपों की विविधता का अध्ययन बहुत ही महत्वपूर्ण है क्योंकि वे भूमि के विभिन्न उपयोगों और कृषि के लिए भूमि की उर्वरता को प्रभावित करते हैं।

उच्चावच लक्षणों के सर्वेक्षण का मुख्य उद्देश्य इस अध्ययन के लिए चुने गए विशिष्ट क्षेत्र के स्थलरूपों को पहचानना, उनका मानचित्रण करना और भू-आकारों, चट्टानों, मिट्टियों एवं भूमि-उपयोगों की व्याख्या करना है। इसी उद्देश्य को ध्यान में रखकर भूगोल की कक्षा में प्रत्येक छात्र को बड़े अनुमाप पर बने उपलब्ध स्थलाकृतिक मानचित्रों की मदद से किसी क्षेत्र के विभिन्न स्थलरूपों, अपवाह तंत्र के प्रतिरूपों और विविध भूमि-उपयोगों की योगों की व्याख्या करने का कार्य मिलता है।

अगला कार्य है वास्तविक क्षेत्र में जाकर अध्ययन करना और आसानी से पहचाने जा सकने वाले लक्षणों को खोजना। ये लक्षण कुछ भी हो सकते हैं जैसे पहाड़ी या टीला, गिरपद क्षेत्र, नदी, नाला, झील या तालाब आदि। अध्ययन करने वाले छात्रों का समूह जैसे-जैसे आगे बढ़ता है वह आसपास के स्थल की विशेषताओं को क्षेत्रीय पुस्तिकाओं में लिखता जाता है और साथ ही रेखाचित्र बनाकर उसमें प्रमुख भू-लक्षणों को भी अंकित करता है। चट्टानों, मिट्टियों और वनस्पतियों के कुछ नमूनों का सूक्ष्मरूप से अध्ययन करके अपने परिणामों को पुस्तिका में लिख लिया जाता है। यदि बाद में भी कुछ जाँचना या प्रयोग करना हो तो इन वस्तुओं के नमूने एकत्र कर लिए जाते हैं। इन नमूनों को पहचानने के लिए उन पर उपयुक्त संख्या, नाम आदि की पर्ची चिपका दी जाती है। जिस स्थान पर जो चट्टान या

मिट्टी या वनस्पति मिलती है मानचित्र पर उसके संगत स्थानों पर भी उपयुक्त संख्या या संकेतों द्वारा उनका नाम लिख दिया जाता है। आगे के पृष्ठों में इस प्रकार के क्षेत्रीय कार्य के कुछ उदाहरण दिए जा रहे हैं।

(क) तटीय क्षेत्र : तटरेखा पर प्राय: कई रोधिका-भित्त तथा तट के समांतर लैगून या पश्चजल के क्षेत्र देखने को मिलते हैं। विस्तृत पुलिन पर छोटे-बड़े बालू के टिब्बे होते हैं। पुराने और नए बालू के टिब्बों के भूमि उपयोग में काफी अन्तर है। पुराने टिब्बों पर नारियल के वृक्ष और मकान आदि पाए जाते हैं तथा पुराने टिब्बों के बीच गड्ढों में धान की खेती होती है। कहीं-कहीं तट रेखा की ओर दृष्टिक्षेप करती हुई एकल पहाड़ी या खड़े किनारों का तटीय भृगु हो सकता है। कहीं-कहीं लहरों के अपरदन द्वारा निर्मित वेदिकाएँ हो सकती हैं। उच्च ज्वार में लहरों की अपरदन क्रिया से ये तटीय आकृतियाँ कैसे बनीं आप इस पर चर्चा कर सकते हैं। नदी के मुहाने पर आप जलाक्रांत कछारी भूमि देखेंगे। इस क्षेत्र में नदी कई शाखाओं में बँटकर बहती है। लवण-बेसिन का मिलना तटीय भागों की विशेषता है। तटीय भागों के क्षेत्रीय अध्ययन की ये कुछ विशेषताएँ हैं जो द्विविध स्थलाकृतिक मानचित्रों में प्राय: ठीक प्रकार से समझ में नहीं आतीं।

(ख) संकुचित घाटियों और पहाड़ियों का क्षेत्र : ऐसे क्षेत्र का अध्ययन करने में विविध भू-आकृतियों और भूमि उपयोगों का विहंगम चित्र सामने आ जाता है। यदि आप पहाड़ी के शिखर से घाटीतल की ओर चलें तो ढलान पर भूमि-उपयोग की आपको अलग-अलग पेटियाँ देखने को मिलेंगी। कई स्थानों पर अवनालिका अपरदन के कारण ढलान पर की भूमि ऊबड़-खाबड़ होगी। कुछ उपयुक्त स्थानों पर जहाँ पीने का जल उपलब्ध है अथवा जो नदी की बाढ़-सीमा से ऊपर हैं या जहाँ सूर्य का प्रकाश लम्बी अवधि तक मिलता रहता है छिटके हुए कुछ मकान या झोंपड़ियाँ मिलेंगी। नदी के निकट अपेक्षाकृत विस्तृत मैदान क्षेत्र में जहाँ विभिन्न दिशाओं से आकर यातायात मार्ग मिलते हैं आपको बस्तियों के समूहों के रूप में प्रमुख गाँव मिलेंगे। अवनालिकाओं का सूक्ष्म निरीक्षण करने पर मृदा की विभिन्न परतों या मृदा के पार्श्व चित्र की जानकारी हो जाती है। मृदा की प्रत्येक परत का रंग और उसकी कण-संरचना को ध्यान से देखिए और उनकी विशेषताओं को लिखिए। मिट्टी के कुछ नमूनों को प्रयोगशाला में जाँचकर उनका रंग, गठन तथा रासायनिक संघटन मालूम किया जा सकता है।

(ग) जलोढ़ मैदान : छोटी मापनी के मानचित्र पर नदी का जलोढ़ मैदान एक ऐसी नीरस दृश्यभूमि प्रदर्शित करता है जिसमें दूर-दूर तक एक-सा भौतिक लक्षण मिलता है। परन्तु नदी अपनी वृद्धावस्था में, विशेषतया उस स्थान पर जहाँ यह समुद्र में मिलने से पूर्व जलोढ़ मैदान में समतलन की क्रिया करती है, वहाँ कई रुचिपूर्ण लक्षण निर्मित करती है। भारत के सर्वेक्षण विभाग द्वारा एक इंच बराबर एक मील या 1 : 50,000 मापनी पर बने स्थलाकृतिक मानचित्रों में भू-आकारों और अपवाह प्रतिरूपों के अनेक ब्यौरे देखने को मिलते हैं। जलोढ़ दृश्यभूमि का एक भाग चुनिए और उसमें घूम-फिरकर अपवाह तंत्र और जलीय लक्षणों के विभिन्न प्रतिरूपों का अध्ययन करिए। नदियों के छोड़े गए मार्ग, नदी के किनारों पर अवनालिका अपरदन के विस्तृत क्षेत्र और मुख्य नदी के बाढ़ मैदान में आपको विशेष रुचि होगी। नदी के निचले भाग में विसर्पों और धनुषाकार झीलों का अध्ययन करिए और उनकी निर्माण क्रिया पर चर्चा करिए। कछारी और दलदली भूमि पर कृषि क्षेत्र में भूमि उपयोग का विश्लेषण करिए और वितरण की व्याख्या करिए। नदी पर समुद्र के ज्वारीय प्रभाव का अध्ययन करिए। यहाँ आप देखेंगे कि इन क्षेत्रों में लवण के कछारी भाग बन जाने से भूमि कृषि के लिए अनुपयुक्त हो जाती है। और खारा पानी भी सिंचाई के काम नहीं आ सकता। भू-लक्षणों, अपवाह तंत्रों, मिट्टियों और भूमि-उपयोगों के अध्ययन और मानचित्रण के आधार पर एक रिपोर्ट तयार करिए।

अभ्यास

1. पास में स्थित किसी गाँव का भूमि-उपयोग मानचित्र बनाइए। इसके लिए आँकड़े एकत्रित करने हेतु पाठ में दी गई सारणियों का उपयोग करिए। स्थानीय आवश्यकता अनुसार उनमें संशोधन कर

सकते हैं। भूमि-उपयोग के प्रतिरूपों की व्याख्या करिए। क्या भूमि की गुणवत्ता भूमि-उपयोग और फसलों के प्रतिरूपों को प्रभावित करती है ? यदि नहीं तो अन्य कौन से कारक अपना प्रभाव डालते हैं ? अपनी खोज को लगभग 300 शब्दों में लिखिए।

2. छात्रों की संख्या और उनके घर से स्कूल आने-जाने के प्रतिरूपों का अध्ययन करके विद्यालय के स्रवण-क्षेत्र की सीमाएँ निर्धारित करिए। छात्रों के आने-जाने के प्रतिरूपों और उनकी सामाजिक आर्थिक पृष्ठभूमि के संदर्भ में स्कूल के स्रवण-क्षेत्र के विस्तार की व्याख्या करिए।

3. अध्याय में बताई विधि द्वारा किसी उद्योग का सर्वेक्षण करिए। उद्योग के स्थानीकरण में जो-जो कारक उत्तरदायी हों उन पर संक्षिप्त रिपोर्ट लिखिए।

4. बाजार का एक सर्वेक्षण करिए और उसमें वितरण के प्रतिरूपों और बाजार में दुकानों के समूहों पर एक विस्तृत रिपोर्ट लिखिए। दुकानों के वितरण प्रतिरूपों में क्या अन्तर है ? बाजार के अध्ययन पर 300 शब्दों में एक रिपोर्ट लिखिए।

5. किसी क्षेत्र के भू-लक्षणों और भूमि-उपयोग के विविध रूपों का अध्ययन करिए और उनके मानचित्र बनाइए और दोनों के बीच क्या संबंध है, उस पर 300 शब्दों में रिपोर्ट लिखिए।

अध्याय 7

मात्रात्मक विधियाँ

1. परिचय

अन्य सामाजिक विषयों की तरह भूगोल की विषय-वस्तु में भी गत दशक से अनेक परिवर्तन हो रहे हैं। परम्परागत प्रचलित विचार कि भूगोल पृथ्वी का वर्णन मात्र है, समकालीन भूगोलवेत्ताओं के सामने एक चुनौती रहा है। तकनीकी विकास और वैज्ञानिक सर्वेक्षणों ने भौगोलिक दृश्यभूमि के विभिन्न लक्षणों के बारे में अपेक्षाकृत अधिक सही आँकड़े और जानकारियाँ प्रदान की हैं। और इसके परिणामस्वरूप भूगोलवेत्ताओं को भौतिक, आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक अवयवों के वितरण प्रतिरूपों की व्याख्या ढूंढ़ने तथा उनके बीच यदि कोई परस्पर संबंध है तो उसे भी मालूम करने का अवसर मिला है। इस प्रकार भूगोल के अध्ययन में गुणात्मक विवरण से लेकर सांख्यिकीय आँकड़ों का वर्णन, उनका विश्लेषण एवं क्षेत्रीय प्रतिरूपों की व्याख्या व भौगोलिक तत्वों की विविधता तक की जानकारी आती है। भौगोलिक दृश्यभूमि के विभिन्न तत्वों के आपसी संबंधों के मापन और क्षेत्रीय प्रतिरूपों के बीच विभिन्नता की जानकारी प्राप्त करने के लिए उपयुक्त विधियों की आवश्यकता पड़ती है। भूगोलवेत्ता मानचित्र बनाने की विधियों और आँकड़ों के सारणीबद्ध विश्लेषण से भली-भाँति परिचित होते हैं। फिर भी वितरण प्रतिरूपों की व्याख्या मानचित्र पर देखे गए लक्षणों के वर्णनमात्र तक ही सीमित रहती है। और जहाँ कहीं व्याख्या दी गई होती है वह संभवतः व्यक्तिगत निर्णय पर आधारित होती है। उदाहरण के लिए दो मानचित्र दिए गए हैं जिनमें से एक में वर्षा का वितरण और दूसरे में बोई गई कुल भूमि के अनुपात में चावल का क्षेत्र दिखाया गया है। आप इन दोनों मानचित्रों की तुलना करके कह सकते है कि चावल की खेती मुख्यतः उन भारी वर्षा के क्षेत्रों में होती है जो वर्ष में 200 सें० मी० या उससे अधिक वर्षा प्राप्त करते हैं। ऐसी स्थिति में आप सह-संबंध मान के परिपालन द्वारा चावल की खेती और वर्षा के बीच संबंध की सीमा मापने के लिए उत्सुक हो सकते हैं।

सरकार के विभिन्न विभागों द्वारा बहुत बड़ी संख्या में सांख्यिकीय आँकड़ों का संकलन किया जाता है। इन आँकड़ों से क्षेत्रफल, उत्पादन और विभिन्न फसलों की प्रति हेक्टेयर उपज, सिंचाई, ऊर्जा के साधन तथा जनसंख्या आदि के बारे में जानकारी मिलती है। ये आँकड़े पहले शासन इकाइयों जैसे गाँव के स्तर पर संकलित किए जाते हैं, फिर उन्हें परगना, थाना या तहसील, जिला, राज्य और देश के स्तर पर मिलाया जाता है। भूगोलवेत्ता इनमें से उपयुक्त आँकड़ों की मदद से मानचित्र बनाते हैं। प्रतिरूपों के विश्लेषण और उनकी विविधताओं का अध्ययन करने में भी सांख्यिकीय सारणियों से सहायता मिलती है। आपको यह ध्यान रखना चाहिए कि सांख्यिकीय आँकड़े संकलित करते समय निरपेक्ष संख्याओं के रूप में होते हैं और इसलिए इन यथाप्राप्त आँकड़ों को अनुपात प्रतिशत या घनत्व आदि के रूप में संशोधित किया या बदला जाता है। आँकड़ों को छोटे-छोटे वर्गों में मिलाकर उन्हें सारणाबद्ध भी किया जाता है। सारणी में मानों को प्रायः घटते हुए क्रम से लगाते हैं। जब किसी घटक के बंटन की तुलना सारणी या मानचित्र में करनी हो तो इन सारणीबद्ध आँकड़ों के माध्य या औसत, माध्यिका और बहुलक मान निकाले जाते हैं। भूतल पर विभिन्न तत्वों के वितरण से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि उनके बीच कोई

न कोई संबंध अवश्य है। बहुधा बहुत से तत्वों के बीच परस्पर क्रिया की जाँच की आवश्यकता होती है जो कि विभिन्न कारकों अथवा चरांकों का मिला-जुला प्रभाव होता है। इस प्रकार की समस्याएँ मात्रात्मक विधि के प्रयोग द्वारा प्रभावशाली ढंग से हल की जा सकती है। ये विधियाँ इस अध्याय में चित्रों की मदद से समझाई गई हैं।

आँकड़े और सारणीयन

कोई सांख्यिकीय विश्लेषण विशेष रूप से इस बात पर निर्भर करता है कि उसके विचाराधीन प्रघटक के लिए मात्रात्मक जानकारी किस प्रकार की है। उदाहरणस्वरूप किसी क्षेत्र की फसलों के प्रतिरूप अध्ययन के लिए वहाँ के भौगोलिक क्षेत्रफल, कृषियोग्य भूमि, सिंचित क्षेत्र और विभिन्न फसलों के लिए प्रयोग किए गए क्षेत्रफल के आँकड़ों की आवश्यकता होती है। उसी प्रकार नगरीकरण के अध्ययन के लिए वहाँ की कुल जनसंख्या, शहरी जनसंख्या, प्रवासी और उनके व्यवसायानुसार विभाजन के आँकड़े चाहिए। इसके अतिरिक्त जनसंख्या के घनत्व, श्रमिकों का वेतन, यातायात की सुविधाओं, औद्योगिक इकाइयों की संख्या तथा अन्य संबंधित सूचनाओं की भी आवश्यकता होती है।

किसी लक्षण के बारे में प्राप्त मात्रात्मक सूचनाओं को ही आँकड़ों के नाम से जाना जाता है। प्राय: सभी सरकारी संस्थाओं में एक ऐसा विभाग होता है जो किसी क्षेत्र-विशेष जैसे राज्य, जिला, तहसील और गाँव आदि के आँकड़े किसी सुनिश्चित विषय पर एकत्रित करता है। यह विभाग इन आँकड़ों को संकलित करके सामान्य प्रयोग के लिए पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित करता है। सांख्यिकीय विवरण, आँकड़े प्राप्त करने के लिए सबसे सरल साधन हैं और इन्हें आँकड़े प्राप्त करने के गौण साधन कहते हैं। भारतीय अर्थव्यवस्था के आँकड़े प्राप्त करने के लिए ऐसे प्रमुख स्रोत जनगणना विवरण, प्रत्येक राज्य के प्रकाशित सांख्यिकीय सारांश, नेशनल सैम्पल सर्वे रिपोर्ट और कृषि सम्बन्धी आँकड़े हैं। गौण स्रोतों से प्राप्त आँकड़े प्राय: पर्याप्त नहीं होते। ऐसी परिस्थिति में एक अन्वेषक को प्राथमिक स्रोतों से स्वयं आँकड़े एकत्रित करने होते हैं। उदाहरणार्थ संबंधित स्थानों का सर्वेक्षण करके तथा तथ्यों का अध्ययन करके स्वयं आँकड़े इकट्ठा करना।

अनेक बार प्रेक्षणों द्वारा, प्राथमिक अथवा गौण स्रोतों से इकट्ठे किए गए इन आँकड़ों को एक क्रमबद्ध एवं व्यवस्थित रूप से प्रस्तुत करने की आवश्यकता होती है। यह इसलिए आवश्यक है, क्योंकि यथाप्राप्त आँकड़े संपूर्ण सामग्री का स्पष्ट एवं सही दृश्य उपस्थित करने में असमर्थ होते हैं। जब इन्हीं आँकड़ों को व्यवस्थित ढंग से रखा जाता है तो उनमें छिपे बहुत से तथ्य अथवा विशेषताएँ प्रकाश में आ जाती हैं।

आँकड़ों को क्रमबद्ध रूप में प्रस्तुत करने की एक प्रमुख विधि उनका सारणीबद्ध निरूपण है। इसमें आँकड़ों को स्तम्भ और पंक्तियों में रखा जाता है। छात्र यह जानते हैं कि पंक्तियाँ क्षैतिजीय अक्ष पर और स्तम्भ ऊर्ध्वाधर अक्ष पर होते हैं। सारणीयन का प्रयोजन संग्रहीत आँकड़ों को सरल रूप से प्रस्तुत करना और उनकी तुलना को आसान बनाना है। साधारणत: सरलीकरण एक स्पष्ट और क्रमबद्ध व्यवस्था से प्राप्त होता है, जिससे पढ़नेवाला व्यक्ति अपनी इच्छानुसार सूचनाओं का यथाशीघ्र पता लगा सकता है। सूचनाओं से सम्बन्धित मदों को एक-दूसरे के निकट लाने से इनकी तुलना करना और भी आसान हो जाता है।

एक सारणी को अपने शीर्षक सहित स्वयं में स्पष्ट होना चाहिए यद्यपि महत्वपूर्ण आँकड़ों पर ध्यान केन्द्रित करने के लिए कभी-कभी एक या दो अनुच्छेदों में इसकी व्याख्या साथ लिखी होती है। प्रतिपर्ण (बाईं ओर का स्तम्भ और उसका शीर्षक) तथा बाक्स हेड (अन्य स्तम्भों में दिए गए शीर्षक) में मदों को उचित क्रम से रखने में सारणी का स्वरूप स्पष्ट हो जाता है और पढ़ने में आसानी हो जाती है।

सारणियों के प्रकार

मौलिक रूप से सारणियाँ दो प्रकार की होती है :

(1) संदर्भ सारणी, सामान्य, कोष या स्रोत सारणी,

(2) सारांश पाठ्य अथवा विश्लेषणात्मक सारणी।

जैसा नाम से विदित है, संदर्भ सारणी सूचनाओं का एक ऐसा कोष है जिससे विस्तृत सांख्यिकीय सूचनाएँ प्राप्त होती हैं। जनगणना की अधिकतर सारणियाँ संदर्भ सारणियाँ होती हैं। ये सारणियाँ सामान्य रूप से सारांश और विश्लेषणात्मक सारणियों से काफी बड़ी होती है, इसलिए इन्हें बहुधा परिशिष्ट में अथवा सूचनाओं के अलग संस्करण के रूप में देखा जाता है। संदर्भों को सरल बनाना ही संदर्भ सारणियों का सर्वप्रथम उद्देश्य है। इसके अतिरिक्त

इन पाठ्य अथवा सारांश सारणियों से किसी विषय पर विशेष जानकारी प्राप्त करने के साथ-साथ उनमें दिए गए विभिन्न तथ्यों के आपसी सम्बन्धों को बताने में भी सहायता मिलती है।

सांख्यिकीय सारणियों की रचना

संदर्भ और सारांश सारणियों में भिन्नता उनकी रचना में नहीं अपितु उनके प्रयोग में है। दोनों सारणियों के मूल संरचनात्मक लक्षण एक जैसे होते हैं। सांख्यिकीय सारणियों के प्रमुख क्रियात्मक भाग निम्नलिखित सारणी-रूप (फोरमेट) में इस प्रकार प्रदर्शित किए गए हैं :

सारणीरूप फोरमेट

सारणी-संख्या

——— —शीर्षक———

——शीर्षक टिप्पणी — —

	प्रतिपर्ण शीर्ष	स्तम्भ शीर्ष	स्तम्भ शीर्ष	स्तम्भ शीर्ष	
प्रतिपर्ण	प्रतिपर्ण की	कोशिका	कोशिका	कोशिका	
(स्टब)	प्रविष्टियाँ	कोशिका	कोशिका	कोशिका	कक्षशीर्ष
		कोशिका	कोशिका	कोशिका	मारयभाग

पाद टिप्पणी (यदि कोई है)

स्रोत टिप्पणी

(1) सारणी संख्या, (2) शीर्षक, (3) शीर्ष टिप्पणी, (4) प्रतिपर्ण (स्टब), (5) कक्षशीर्ष (बाक्स-हेड), (6) मुख्यभाग या क्षेत्र, (7) स्रोत टिप्पणी, (8) पाद टिप्पणी।

(1) सारणी की संख्या : सारणी-संख्या से हमें तुरन्त किसी सारणी का बोध होता है। संदर्भों की सुविधा के लिए सारणियों को किसी अध्ययन अथवा अध्याय में उनके दिखाए जाने के क्रमानुसार संख्याबद्ध कर देते हैं।

(2) शीर्षक : सामान्यत: एक शीर्षक जो सारणी के शीर्ष पर होता है, यह स्पष्ट करता है कि आँकड़ों का विभाजन किसी विशेष रूप में कब, कहाँ, किस प्रकार और किस लिए किया गया है। इसका उपयोग पूरी तरह से वर्णन करने, विषय-सामग्री को सीमांकित करने और पाठक को उसकी इष्ट जानकारी प्राप्त करने के लिए आवश्यक है। एक अच्छा शीर्षक संक्षिप्त किन्तु पूर्ण होता है। यदि पूर्णशीर्षक बड़ा बनता हो तो इससे पूर्व एक छोटा व आकर्षक शीर्षक और दे देना चाहिए।

(3) शीर्ष टिप्पणी (हेड नोट) : प्रत्येक शीर्षक के साथ एक शीर्ष टिप्पणी होती है। यह शीर्षक की छूटी हुई कमियों को पूरा करने के साथ-साथ इसके बारे में और अधिक जानकारी प्रदान करती है। (सारणी नं० 1 में देखिए) शीर्ष टिप्पणियों का प्रयोग सारणी में आँकड़े व्यक्त करने वाली इकाई को बताने के लिए भी किया जाता है। शीर्ष टिप्पणियों का प्रयोग आवश्यकतानुसार ही करना चाहिए और प्रयोग के साथ इन्हें शीर्षक के पश्चात् कोष्ठक में लिखना चाहिए। जब यह शीर्षक के नीचे लिखा जाता है उस समय कोष्ठक लगाना आवश्यक नहीं होता। उदाहरणार्थ सारणी संख्या 1 में आँकड़ों के वर्गीकरण के बारे में पूरक जानकारी दे रखी है और इसके लिए 'जिले एवं लिंग भेद' शीर्ष टिप्पणी के रूप में प्रयोग किया गया है।

(4) प्रतिपर्ण (स्टब) : सारणी के प्रतिपर्ण में (1) प्रतिपर्ण शीर्ष और (2) प्रतिपर्ण की प्रविष्टियाँ होती हैं। प्रतिपर्ण शीर्ष प्रतिपर्ण प्रविष्टियों का वर्णन करता है जब कि प्रत्येक प्रतिपर्ण प्रविष्ट सारणी की पंक्ति से प्राप्त आँकड़ों को स्पष्ट करती है। सारणी संख्या 1 में प्रतिपर्ण शीर्ष 'राज्य व जिला' तथा प्रविष्टियाँ 'जिलों के नाम' हैं।

सारणी संख्या 1

शीर्षक : तमिलनाडु में वर्ष 1971 में प्रमुख व्यवसायों के अनुसार अर्जक व अनर्जकों (नानवर्कर्स) की संख्या

शीर्ष टिप्पणी : (जिलों के अनुसार)

प्रतिपर्ण शीष | कक्ष शीर्ष | प्रतिपर्ण (स्टब) | मुख्य भाग

राज्य एवं जिले	कुल जनसंख्या	अर्जक जनसंख्या* प्राथमिक व्यवसाय	गौण व्यवसाय	तृतीय व्यवसाय	अनर्जक जनसंख्या
तमिलनाडु	41199168	9551801	2206572	2983594	26457201
1 मद्रास	2469449	10856	224154	46·369	1173070
2 चिंगलपेट	2907599	590616	179444	210695	1926844
3 उत्तर अरकाड	3755797	947687	161748	223734	2422628
4 दक्षिण अरकाड	3617723	1020560	77945	156658	2362560
5 धरमपुरी	1677775	519014	25467	66397	1066897
6 सेलम	1912616	765423	232887	176969	1810337
7 कोयबंतुर	4373178	1045917	376232	364311	2586718
8 नीलगिरि	494016	144729	20117	44997	284202
9 मदुरै	3938197	986692	172260	294986	2484259
10 तिरुच्चिरापल्ली	4848816	1019972	171104	234793	2422947
11 तन्जावुर	3840732	941837	99069	242003	2557823
12 रामनाथपुरम	2860207	674433	161141	184771	1839862
13 तिरुनेलवेलि	3200515	689517	238802	243197	2028999
14 कन्याकुमारी	1222549	212548	59202	78744	872055

पाद टिप्पणी * प्राथमिक कार्यों में व्यावसायिक वर्ग प्रथम, द्वितीय तृतीय व चतुर्थ शामिल है।
गौण ,, ,, ,, पाँचवा व छठा शामिल है।
तृतीयक ,, ,, ,, सातवाँ, आठवाँ व नवाँ शामिल है।

स्रोत : भारत की जनगणना 1971, संस्करण प्रथम, भाग 2/A, (द्वितीय) केन्द्रीय प्राथमिक जनगणना सारांश, रजिस्ट्रार जनरल आफ इंडिया, नई दिल्ली, पृ० सं० 206-234

(5) **कक्ष शीर्ष (बाक्सहेड)** : कक्ष शीर्ष सारणी के स्तम्भों में लिखे जाने वाले आँकड़ों को स्पष्ट करता है। विवरण में एक या अधिक स्तम्भ शीर्ष होते हैं। सारणी संख्या 1 में दो विवरणों का प्रयोग किया गया है जिसमें से पहले के तीन स्तम्भ शीर्ष हैं। (देखें सारणी 1)

(6) **मुख्य भाग अथवा क्षेत्र** : मुख्य भाग अथवा क्षेत्र सारणी में आँकड़े प्रदर्शित करता है। प्रत्येक प्रविष्टि एक कोशिका में प्रस्तुत की जाती है जो सारणी के प्रस्तुतीकरण में एक मूल इकाई होती है। एक कोशिका-विशेष का सारणी में वह स्थान है जहाँ दिए गए स्तम्भ और पंक्ति आपस में एक-दूसरे को काटते हैं। अत: आँकड़ों का संबंध स्तम्भ और पंक्ति दोनों से दर्शाया जाता है।

(7) **पाद टिप्पणी** : पाद टिप्पणी एक वाक्यांश या कथन है जो सारणी के एक अंग-विशेष या प्रविष्टि-विशेष का विवरण देती या स्पष्ट करती है और इसे सारणी के नीचे दिया जाता है। उदाहरण के लिए प्राथमिक, गौण तथा तृतीयक क्षेत्रों में लगे अर्जक या श्रमिकों के लिए और अधिक स्पष्टीकरण की आवश्यकता है। इसलिए अर्जक जनसंख्या के आगे एक * तारे का चिह्न अंकित कर दिया गया है और पाद टिप्पणी में तीनों प्रकार के क्षेत्रों का अलग-अलग विभाजन कर दिया गया है।

(8) **स्रोत-टिप्पणी** : स्रोत-टिप्पणी में इस बात का स्पष्ट रूप से संकेत होता है कि यदि प्रस्तुतकर्ता ने आँकड़े स्वयं एकत्रित नहीं किए तो आँकड़े कहाँ से प्राप्त किए गए हैं। आँकड़ों के स्रोत का बताना बहुत आवश्यक है क्योंकि इससे पढ़ने वाले को आँकड़ों की जाँच करने तथा संभवतः अन्य अतिरिक्त सूचनाएँ प्राप्त करने का अवसर मिलता है। यह इसलिए भी आवश्यक है कि व्यवसाय-नीति के अनुसार वास्तव में मूल संग्रहकर्ता को अपेक्षित श्रेय दिया जा सके। इसलिए स्रोत-टिप्पणी स्वयं में स्पष्ट एवं पूर्ण होनी चाहिए और इसमें उसका शीर्षक, संस्करण, प्रकाशन वर्ष, पृष्ठसंख्या और प्रकाशन के स्थान आदि बातों का समावेश होना चाहिए।

जनगणना 1971 सारणी संख्या 1 के व्यवसायों को तीन प्रमुख वर्गों जैसे प्राथमिक, गौण व तृतीय प्रकार के अर्जकों (श्रमिकों) में बाँट कर और भी छोटा किया जा सकता है। इसी प्रकार का छोटा रूप सारणी-संख्या 1 में दिया गया है।

बारम्बारता बंटन सारणी

बारंबारता बंटन सारणी एक ऐसी सारणी होती है जिसमें सूचनाओं को संक्षिप्त करके व्यवस्थित रूप में रखा जाता है। ये सारणियाँ तुलना करने की अनेक कठिनाइयों को बहुत सीमा तक आसान कर देती हैं। इसलिए इनका सांख्यिकीय विश्लेषण में महत्वपूर्ण स्थान है। किसी भी बारंबारता बंटन सारणी में चरांक के मानों के परिसर को छोटे-छोटे समूहों में बाँट दिया जाता है। प्रत्येक वर्ग में आने वाली प्रेक्षण की संख्याओं को बारंबारता कहते हैं। इनको सारणी में अलग-अलग वर्गों के साथ लिखा जाता है।

किसी वर्ग की उपरिसीमा तथा निम्नसीमा के मध्य अन्तर को वर्ग अंतराल कहते हैं। इसकी रचना के उदाहरण के रूप में 1971 की जनगणना पर आधारित उत्तर प्रदेश के 51 जिलों में अर्जकों की कुल जनसंख्या का प्रतिशत अनुपात निम्न सारणी से उद्धृत है :

जिले	कुल जनसंख्या में अर्जन जनसंख्या का प्रतिशत
1. उत्तर काशी	32·16
2. पिथौरागढ़	45·15
3. अल्मोड़ा	41·67
4. नैनीताल	39·63
5. बिजनौर	34·37
6. मुरादाबाद	28·91
7. बदायूँ	30·12
8. रामपुर	30·83
9. बरेली	30·68
10. पीलीभीत	32·86
11. शाहजहाँपुर	35 06
12. देहरादून	35·25
13. सहारनपुर	30·35
14. मुजफ्फरनगर	30·14
15. मेरठ	27·79
16. बुलन्दशहर	27·37
17. अलीगढ़	28·18
18. मथुरा	28·52
19. आगरा	27·60
20. एटा	29·08
21. मैनपुरी	27·82
22. फरुखाबाद	29·20
23. इटावा	27·24
24. कानपुर	30 38
25. फतेहपुर	34 62
26. इलाहाबाद	34·49
27. झाँसी	30·39
28. जलौन	28·99
29 हमीरपुर	33·23
30. बाँदा	36·37
31. खैरी	35·42
32. सीतापुर	33·75
33. हरदोई	32 11
34. उन्नाव	31·47
35. लखनऊ	30·69
36. रायबरेली	32 62
37. बहरायच	36·83
38. गोंडा	37·18
39. बाराबंकी	36·04
40. फैजाबाद	34·07
41. सुल्तानपुर	33·46
42. प्रतापगढ़	34·99
43. बस्ती	35·65
44. गोरखपुर	34·53

45. देवरिया	30·96
46. आजमगढ़	30·06
47. जौनपुर	28·13
48. बलिया	30·00
49. गाजीपुर	30·55
50. वाराणसी	32·06
51. मिर्जापुर	37·60

इन आंकड़ों के अधिकतम मान 45.15 और न्यूनतम मान 27·24 हैं अतः इनका परिसर अर्थात् अधिकतम तथा न्यूनतम का अन्तर 45·15-27·24=17.91 होगा। अगर हम समान अंतराल के 10 वर्ग लें तो उनका वर्ग अंतराल 17·91/10 = 1·791 होगा जिसे हम पूर्ण संख्या में 2 मान सकते हैं। इस प्रकार 27 से प्रारंभ करके वर्गों की संख्या और प्रत्येक वर्ग में प्रेक्षणों की संख्या निम्न सारणी में दी गई है। यदि सारणीबद्ध मूल्यों को ऊर्ध्वाधर रूप में पढ़ा जाए और जो मान जिस वर्ग के सामने आता है, उसके सामने एक चिह्न लगाते जाएँ तो सारणीयन की प्रक्रिया और भी आसान हो जाती है। इन चिह्नों को मिलान चिह्न कहते हैं। गणना की सुविधा के लिए इनको पाँच-पाँच के समूहों में रखा जाता है। प्रत्येक समूह में चार खड़े चिह्नों को पाँचवाँ चिह्न तिर्यक काटता है।

कुल जनसंख्या में अर्जक जनसंख्या का प्रतिशत	मिलान चिह्न	बारंबारता
37-39	~~||||~~ ~~||||~~	10
29-31	~~||||~~ ~~||||~~ ||||	14
31-33	~~||||~~ |	6
33-35	~~||||~~ ||||	9
35-37	~~||||~~ ||	7
37-39	||	2
31-41	|	1
41-43	|	1
43-45		0
45-47	|	1
कुल योग		51

बारंबारता बंटन तैयार करने से पूर्व निम्नलिखित आवश्यक बातों का ध्यान रखना चाहिए :

1. वर्ग 27-29, 29-31 तथा 31-33 आदि का अर्थ यह होगा कि इनमें संख्याएँ 27 और उससे अधिक किन्तु 29 से कम, 29 और उससे अधिक किन्तु 31, से कम 31 और उससे अधिक किन्तु 33 से कम है। अत: 29, 31 आदि मानों की लगातार दो वर्गों में पुनरावृत्ति से किसी को भ्रम नहीं होना चाहिए क्योंकि इनमें से प्रत्येक वर्ग में निम्न वर्ग सीमा सम्मिलित है किन्तु उपरिवर्ग सीमा सम्मिलित नहीं है।

2. वर्गों की संख्या न तो बहुत अधिक और न बहुत कम होनी चाहिए। ऐसे बंटन से जिसमें वर्गों की संख्या अपेक्षाकृत काफी कम है (दो या तीन) वहाँ बहुत-सी आवश्यक जानकारियाँ छूट जाती हैं। इसके दूसरी ओर यदि बंटन में वर्गों की संख्या बहुत अधिक है (50 से 60 तक) तो आँकड़ों को संसाधित करना बहुत कठिन हो जाता है। यद्यपि वर्गों की कोई निश्चित सीमा नहीं है, सामान्यतः वे 8 या 9 से कम तथा 20 या 25 से अधिक नहीं होनी चाहिए।

3. जहाँ तक संभव हो सभी वर्गों में अंतराल एक समान होना चाहिए। एक अवर्गीकृत अथवा असंगत बारंबारता बंटन वह है जिसमें वर्गों के स्थान पर चरांक के निश्चित मान दिए जाते हैं। एक अवर्गीकृत बारंबारता बंटन का स्वरूप नीचे दी गई सारणी 2 में प्रदर्शित बंटन के समान होगा।

सारणी 2

किसी क्षेत्र के 100 परिवारों के आकार का बंटन

परिवार का आकार (X)	परिवारों की संख्या (F)
1	4
2	12
3	26
4	20
5	17
6	15
7	6
कुल योग	100

संचयी बारंबारता

एक वर्ग की उपरिसीमा से नीचे के प्रेक्षणों की कुल संख्या को निम्न संचयी बारंबारता कहते हैं। इसी प्रकार किसी वर्ग की निम्न सीमा से अधिक प्रेक्षणों की कुल संख्या को उच्च संचयी बारंबारता कहते हैं।

उत्तर प्रदेश के 51 जिलों में श्रमिकों के प्रतिशत बारंबारता बंटन जानने के लिए एक सारणी पुन: नीचे दी जा रही है। इसमें दोनों प्रकार की संचयी बारंबारता दी गई है।

कुल जनसंख्या में श्रमिकों का प्रतिशत	बारंबारता	संचयी बारंबारता	
		निम्न	उच्च
(1)	(2)	(3)	(4)
27-29	10	10	51
29-31	14	24	41
31-33	6	30	27
33-35	9	39	21
35-37	7	46	12
37-39	2	48	5
39-41	1	49	3
41-43	1	50	2
43-45	0	50	1
45-47	1	51	1
कुल योग	51		

स्तम्भ (3) में दी गई संचयी बारंबारता यह प्रदर्शित करती है कि ऐसे दस जिले हैं जहाँ श्रमिकों की प्रतिशत जनसंख्या 29 से कम है। दूसरे वर्ग में 14 अन्य जिले हैं जहाँ श्रमिकों की प्रतिशत संख्या 29 या इससे अधिक है किन्तु 31 से कम है। इस प्रकार जिलों की कुल संख्या जहाँ श्रमिकों की प्रतिशत जनसंख्या 31 से कम है, 10+14=24 हुई। इसी प्रकार से ऐसे जिले जहाँ श्रमिकों का प्रतिशत 33 से कम है, 30 है। इसी क्रमानुसार हम अन्य वर्गों के बारे में भी जिलों की निम्न संचयी बारंबारता निकाल सकते हैं। अब चौथे स्तम्भ के मानों को नीचे से अध्ययन करिए। अंतिम वर्ग की बारंबारता यह प्रदर्शित करती है कि केवल एक जिला ही ऐसा है जिसमें श्रमिकों का प्रतिशत 45 या उससे अधिक है और ऐसा कोई जिला नहीं है जहाँ पर यह प्रतिशत संख्या 43 व 45 के बीच हो। अतः 43 से अधिक प्रतिशत वाला भी केवल एक ही जिला है। ऐसे जिलों की संख्या जहाँ श्रमिकों का प्रतिशत 41 या इससे अधिक है, केवल एक है और एक ही जिला ऐसा है जहाँ यह प्रतिशत 43 से अधिक है। अतः ऐसे जिलों की संख्या 2 हुई जिनमें श्रमिकों का प्रतिशत 41 से अधिक हो। उसी प्रकार तीन जिले ऐसे हैं जिनमें प्रतिशत 39 से अधिक है, पाँच जिलों में श्रमिकों का प्रतिशत 37 से अधिक है।

महत्त्वपूर्ण अंकन पद्धति

चरांक : अभिलक्षण जिनके मान एक प्रेक्षण से दूसरे प्रेक्षणों में परिवर्तित होते रहते हैं, चरांक कहलाते हैं। उदाहरण के लिए वर्षा 'चर' है क्योंकि यह एक स्थान से दूसरे स्थान पर तथा समय के अनुसार भी बदलती रहती है। ऐसे ही चरों के और भी उदाहरण हैं जैसे जिलों के अनुसार जनसंख्या का वितरण, बोया गया क्षेत्र, शहरी जनसंख्या, उर्वरकों का प्रति एकड़ उपभोग, कुल शस्य क्षेत्र व सिंचित क्षेत्र का आनुपातिक प्रतिशत, शहरों की संख्या, नलकूपों की संख्या तथा प्राथमिक विद्यालयों की संख्या आदि।

गणित में सुसंहृति की दृष्टि से विभिन्न चरांकों को कुछ चिह्नों द्वारा प्रकट किया जाता है। बहुधा इन चरांकों को दर्शाने वाले चिह्न U, V, X, Y तथा Z अक्षरों से व्यक्त करते हैं।

चरांक की पादलिपि

विभिन्न चरांकों को X, Y या Z आदि अक्षरों से बताने के बाद हम दो चरांकों को एक-दूसरे से अलग कर सकते हैं, परन्तु इन्हीं चरांकों के विभिन्न मानों के बीच हम अन्तर नहीं बता सकते। चरांक के आगे एक छोटी-सी संख्या लगाकर इस कठिनाई को आसानी से सुलझा दिया जाता है और यह संख्या मानों की क्रमसंख्या के अनुरूप होती है। उदाहरण के लिए यदि n संख्या के जिलों की प्रति व्यक्ति आय X से प्रदर्शित की जाती है तो $X_1, X_2, X_3 \cdots\cdots X_n$ का अर्थ जिलों की सूची के पहले, दूसरे, तीसरे और क्रमशः आगे nवें जिले की प्रति व्यक्ति आय से होगा।

संकलन चिह्न

यदि हम 100 लोगों की वार्षिक आय का कुल योग प्रस्तुत करना चाहते हैं जो X द्वारा प्रदर्शित की गई है, हम को X_1 से X_{100} तक सभी X लिखनी होंगी और प्रत्येक के बीच में धन का एक चिह्न लगाना होगा। ऐसे बड़े व्यंजकों को संकलन चिह्न सिग्मा (Σ) लगाकर सुविधानुसार लिखा जा सकता है। उपरोक्त कथन अथवा व्यंजक को सिग्मा चिह्न लगाकर इस प्रकार लिखा जा सकता है :

$$\sum_{i=1}^{100} X_i$$

इसका अर्थ यह है कि X_1 से X_{100} तक सारे मान जोड़ दिए गए हैं। इस प्रकार

$$\sum_{i=1}^{100} X_i = X_1 + X_2 + X_3 \cdots\cdots\cdots\cdots + X_{100}$$

इन संकलन चिह्नों को बीजगणित के व्यंजकों में भी भी प्रयोग किया जा सकता है, जैसे

$$\sum_{i=1}^{3}(X_i+Y_i)=(X_1+Y_1)+(X_2+Y_2)+(X_3+Y_3)$$

$$\sum_{i=1}^{50}Y_iX_i=Y_1X_1+Y_2X_2+Y_3X_3+\cdots Y_{50}X_{50}$$

$$\sum_{i=1}^{4}CX_i=CX_1+CX_2+CX_3+CX_4=CX_1+X_2+X_3+X_4$$

$$=C\sum_{i=1}^{4}X_i$$

$$\sum_{i=1}^{n}C=C+C+C+\cdots C(n\ \text{times})=nC$$

केन्द्रीय प्रवृत्ति की माप

पिछले अध्याय में आँकड़ों के छोटे करने तथा उनके प्रस्तुत करने की समस्याओं पर विचार किया जा चुका है। कई बार सम्पूर्ण आँकड़ों के लिए एक निरूपक मान का प्राप्त करना आवश्यक हो जाता है। यह निरूपक-मान किसी बंटन के लिए एक व्यापक विचार पाने में सहायता प्रदान करता है। इसके अतिरिक्त ये सारांश मान बंटन के विभिन्न आँकड़ों के बीच तुलना करने में भी सहायता करते हैं। उदाहरण के लिए यह बहुधा कहा जाता है कि अमेरिकावासी भारतीयों की अपेक्षा धनवान हैं। जैसा कि हमें ज्ञात है, अमेरिकावासियों की संख्या लगभग 24 करोड़ तथा भारतीयों की संख्या लगभग 61 करोड़ है। यद्यपि अधिकांश भारतीयों की अपेक्षा अधिकांश अमेरिकावासी धनवान होंगे, किन्तु बहुत थोड़े भारतीय ऐसे भी हैं जो बहुत से अन्य अमेरिकावासियों से अधिक धनवान होंगे। तब फिर हम एक देश की अमीरी की तुलना किसी दूसरे देश से कैसे करेंगे ?

वास्तविक जीवन में हमेशा हम इस प्रकार की तुलनाएँ करते रहते हैं। उदाहरण के लिए हम कहते हैं कि राजस्थान के लोग नेपाल तथा असम के लोगों की अपेक्षा अधिक लम्बे हैं, पंजाब में गेहूँ की पैदावार भारत के अन्य राज्यों की अपेक्षा अधिक है। इन सभी उदाहरणों में दिए गए कथन जैसे अमेरिकावासी और भारतीयों की प्रत्येक की आय, नेपाली, असम और राजस्थान के लोगों की प्रत्येक की ऊँचाई तथा पंजाब व अन्य राज्यों के प्रत्येक खेत की उपज की तुलना पर आधारित नहीं है। लेकिन वे एक ऐसी माप पर आधारित हैं जो इन अलग-अलग और व्यक्तिगत मानों को सारांश रूप में प्रदर्शित करती है। ऐसे सारांशमान जो विभिन्न बंटन-निरूपकों को दर्शाते हैं उनको केन्द्रीय प्रवृत्ति के मापक कहते हैं।

साधारण रूप से प्रयोग में आने वाले केन्द्रीय प्रवृत्ति के मापक निम्नलिखित हैं :

(1) अंकगणितीय माध्य अथवा औसत।
(2) माध्यिका।
(3) बहुलक।

अंकगणितीय माध्य या औसत

केन्द्रीय प्रवृत्ति के अधिकतर प्रयोग में आने वाली माप को अंकगणितीय माध्य कहते हैं। यह माध्य सभी भिन्न-भिन्न मानों के जोड़ में कुल संख्या से भाग देकर निकाला जाता है। माना किसी गाँव में पाँच श्रमिक किसानों के परिवार हैं जिनका मासिक व्यय 100 रुपये, 80 रुपये, 120 रुपये, 90 रुपये और 60 रुपये है तो इन परिवारों का माध्य या औसत व्यय

$$\frac{100+80+120+90+60}{5}=90 \text{ रुपये}$$

होगा।

इसी प्रकार किसी क्षेत्र में कृषक परिवारों की n संख्या है। यदि X_1, X_2, X_3 और X_n क्रमशः पहले, दूसरे, तीसरे और nवें श्रमिक किसान परिवार के उपभोगव्यय को दिखाते हैं तब अंकगणितीय माध्य इस प्रकार होगा :

$$X=\frac{X_1+X_2+X_3\cdots\cdots+X_n}{n}$$

$$=\frac{X\Sigma}{n} \text{ जब } \Sigma X=X_1+X_2\cdots\cdots+X_n$$

पहले दिए गए उदाहरण में हमने प्रत्येक श्रमिक-किसान परिवार के उपभोगव्यय के आँकड़े दिए हैं। यदि इस प्रकार के परिवारों की संख्या बहुत अधिक नहीं है, तो उपरोक्त विधि से उसका अंकगणितीय माध्य निकाल सकते हैं।

छोटे अवर्गीकृत आँकड़ों के लिए ऐसे माध्य की गणना में अधिक कठिनाइयों का सामना नहीं करना पड़ता। यद्यपि आँकड़े प्रायः अवर्गीकृत रूप में प्राप्त नहीं किए जाते अपितु बारंबारता बंटन के रूप में प्राप्त होते हैं।

एक बारंबारता बंटन का अंकगणितीय माध्य निम्न प्रकार से दिया गया है :

$$\bar{X} = \frac{f X_1 + f_2 X_2 \cdots\cdots + fn\, Xn}{f_1 + f_2 \cdots\cdots + fn}$$

$$= \frac{\Sigma fX}{n}$$

जहाँ $X_1, X_2 \cdots\cdots Xn$, पहले दूसरे व nवें वर्ग के मध्यमान हैं, दूसरी ओर $f_1, f_2 \cdots\cdots fn$ पहले, दूसरे व nवें वर्ग की बारंबारता हैं।

उदाहरण 1 (अवर्गीकृत आँकड़ा)

एक जिले के दस केन्द्रों पर किसी माह में अंकित वर्षा नीचे दी गई हैं। जिले की औसत मासिक वर्षा निकालिए।

संक्षिप्त विधि

ऐसी सभी अंतराल वाली बारंबारता सारणी के लिए, जिसमें आँकड़े बहुत अधिक हों, संक्षिप्त विधि का प्रयोग करना अधिक उपयुक्त होता है। इस विधि से माध्य को निकालने का सूत्र इस प्रकार है :

$$\bar{X} = a + \frac{fu}{f} \times h$$

यहाँ a कल्पित माध्य प्रदर्शित करता है।

u इस माने हुए माध्य से प्रत्येक मध्यमान का विचलन, जो वर्ग अंतराल h द्वारा विभाजित किया जाता है को प्रदर्शित करता है। जैसे $u = \frac{X - a}{h}$

केन्द्र	A	B	C	D	E	F	G	H	I	J
वर्षा (मि० मी० में)	10·2	15·3	18·9	9·9	12·5	11·1	10·5	10.4	10·5	10·7

$$\text{हल} = \frac{10·2 + 15·3 + 18·9 + 9·9 + 12·5 + 11·1 + 10·5 + 10·4 + 10·5 + 10·7}{10}$$

$$= \frac{120·0}{10} = 12.00 \text{ मि० मी०}$$

उदाहरण 2 (वर्गीकृत आँकड़ा)

निम्नलिखित सारणी में दिए गए वर्षा के आँकड़ों से अंकगणितीय माध्य निकालिए।

वर्ग (वर्षा मि०मी० में)	दिनों की संख्या (f)	वर्गों के मध्यमान (X)	f(X)
30-35	5	32·5	162·5
35-40	6	37·5	225·0
40-45	11	42·5	467·0
45-50	18	47·5	855·0
50-55	19	52·5	997·5
55-60	15	57·5	862·5
60-65	13	62·5	812·5
65-70	1	67·5	67·5
70-75	2	72 5	145·0
	Σf = 90		Σf(X) = 4595·0

$n = \Sigma f = 90$

$$\therefore \bar{X} = \frac{\Sigma fX}{n} = \frac{4595·0}{90} = 51·055 \text{ मि० मी०}$$

यद्यपि माना हुआ माध्य कोई भी स्वेच्छा से चुना जा सकता है। हम प्रायः शृंखला के मध्य में कोई ऐसा मध्यमान चुनते हैं जिसकी बारंबारता सबसे अधिक हो। इस प्रकार के काल्पनिक मान के मध्यमान का चयन गणना के काम को आसान अथवा कम कर देता है।

अब हम पीछे दिए गए संक्षिप्त विधि के उदाहरण की मदद से वर्षा के औसत (माध्य) आँकड़ों को निकालेंगे। 52·5 को काल्पनिक माध्य मानकर और इसे उच्चतम बारंबारता का मध्यमान चुनकर हम निम्नलिखित विधि के अनुसार इसे हल करेंगे :

वर्ग वर्षा मि० मी० में	मध्यमान (X)	$u = \frac{X - 52·5}{5}$	दिनों की संख्या (f)	fu
30-35	32·5	−4	5	−20
35-40	37·5	−3	6	−18

40-45	42·5	—2	11	—22
45-50	47·5	—1	18	—18
50-55	52·5	0	19	0
55-60	57·5	+1	15	15
60-65	62·5	+2	13	26
65-70	67·5	+3	1	3
70-75	72·5	+4	2	8
		$\Sigma f = 9$		$\Sigma fu = -26$

अब $\bar{X} = a + \frac{\Sigma fu}{\Sigma f} \times h$

$= 52.5 + \left(\frac{-26}{90} \times 5\right)$

$= 52.5 - 1.444$

$= 51.056$ मि० मी०

अंकगणितीय माध्य की विशेषताएँ निम्नलिखित हैं— केन्द्रीय प्रवृत्ति की माप के लिए अधिकतर अंकगणितीय माध्य का प्रयोग होता है क्योंकि :

1. इसकी गणना सरल है और इसको समझना भी आसान है,

2. यह चरांक के सभी मानों को ध्यान में रखता है तथा

3. यह प्रतिचयन की अस्थिरता से बहुत कम प्रभावित होता है।

फिर भी अंकगणितीय माध्य के कुछ दोष भी हैं :

(1) अंकगणितीय माध्य अतिविषम मानों से प्रभावित होता है। एक शृंखला के किसी भी छोर पर यदि मान बहुत बड़े हैं तो वह मध्यमान को ऊपर या नीचे ले जा सकता है। वास्तविक जीवन की समस्याओं में साधारणतः न्यूनतम मान 0 से नीचे नहीं होते, इसलिए अंकगणितीय माध्य की स्वाभाविक रूप से ऊपर की ओर प्रवृत्ति होती है। यदि अनेक छोटे मानों के साथ एक भी बड़ा मान होता है तो वह अंकगणितीय माध्य को ऊपर ले जाएगा। इसके विपरीत यदि कई बड़े मानों के बीच एक भी छोटा मान है तो यह माध्य मान को काफी नीचे ले जाएगा।

(2) कभी-कभी हमें खुले अंत वाले वर्गों के बारंबारता बंटन (विवृतान्त वर्गों) में सही रूप से माध्यमिक मान निर्धारित करना संभव नहीं होता। (बारंबारता बंटन में एक सिरे पर मान माध्यमिक मान से नीचे और दूसरी ओर बहुत ऊँचे होते हैं।) उदाहरण के लिए एक बारंबारता बंटन में एक छोर के पहले वर्ग में 200 से कम मान हो तथा इसके अंतिम वर्ग में 2000 और इससे अधिक दिया हो तो इन निम्नतम व उच्चतम वर्गों के बीच के मध्यमान को सही रूप से नहीं जान सकते। अतः अंकगणितीय माध्य मान को सही रूप से निकालना प्रत्येक बंटन में संभव नहीं होता।

माध्यिका

जैसा कि हम जान चुके हैं अंकगणितीय माध्य या औसत किसी दी हुई शृंखला के मानों का औसत है, इसलिए वह चरम-मानों से प्रभावित होता है। यदि हम ज्ञात शृंखला में केन्द्रीय स्थान या स्थिति मान लें तो चरम मानों के प्रभाव से बचा जा सकता है। इस स्थिति की माप माध्यिका कहलाती है। माध्यिका वह मान है जो शृंखला को दो बराबर भागों में इस प्रकार बाँटता है कि आधी शृंखला या लगभग आधे मान इससे नीचे या कम और शेष आधे या लगभग आधे मान इससे ऊपर या अधिक होते हैं।

मान लें कि एक दुकान में सात व्यक्ति काम करते हैं। उनमें से छः श्रमिक हैं जिनका मासिक वेतन 120, 130, 150, 100, 170 तथा 180 रुपये है। सातवाँ व्यक्ति दुकान का स्वामी है और उसकी मासिक आय 3000 रुपया है। इन सातों लोगों की मासिक आय का माध्य या औसत (120 + 130 + 150 + 100 + 170 + 180 + 3000) ÷ 7 = 550 रुपया प्रतिमास होगा। इस उदाहरण में केवल एक अति चरम मान के कारण माध्य या औसत काफी ऊँचा हो गया है और इसलिए अधिक भ्रम पैदा करता है। अतः यह केन्द्रीय प्रवृत्ति की उपयुक्त माप नहीं मानी जा सकती। अधिकतर श्रमिकों का वेतन औसत से बहुत कम है। ऐसी दशाओं में केन्द्रीय प्रवृत्ति की उपयुक्त माप माध्यिका ही होगी।

माध्यिका प्राप्त करने के लिए हम पहले आँकड़ों को आरोही व अवरोही क्रम में रखते हैं। उपरोक्त आँकड़ों को आरोही क्रम में रखने पर प्रेक्षण इस प्रकार लिखे जा सकते हैं : 100, 120, 130, 150, 170, 180, 3000 रुपये। क्योंकि इस शृंखला में कुल सात प्रेक्षण हैं इसलिए चौथे की स्थिति केन्द्रीय या मध्य में है। इस चौथी स्थिति का मान 150 रुपये है जो माध्यिका है। तीन प्रेक्षणमान 100, 120, तथा 130 इससे नीचे या कम हैं और अन्य तीन क्रमशः 170, 180 और 3000 इससे ऊपर या अधिक हैं; इस प्रकार से यह मान-माध्य की अपेक्षा आँकड़ों की केन्द्रीय

प्रवृत्ति को और अच्छे रूप से प्रस्तुत करता है। हमारे इस उदाहरण में प्रेक्षणों की संख्या विषम है इसलिए हम बीच के मान को वास्तविक मान निर्धारित कर लेते हैं। लेकिन जब प्रेक्षणों की संख्या सम हो तो दो संख्याएँ ऐसी होंगी जो माध्य में आती हों। उनका औसत ही माध्यिका मान ली जाती है। जैसा कि निम्नलिखित उदाहरण से स्पष्ट किया गया है :

उदाहरण :

किसी बस्ती के 12 परिवारों की मासिक आय नीचे दी गई है।

परिवारों की आय (रुपयों में)

140, 150, 130, 135, 170, 190, 500, 210, 205, 195, 290, 200

इन्हें आरोही क्रम से रखने पर—

130, 135, 140, 150, 170, 190, 195, 200, 205, 210, 290, 500 प्राप्त होगी। इनमें दो की स्थिति मध्य में है जैसे उपरोक्त आँकड़ों में छठे और सातवें मान क्रमश: 190 व 195 हैं। अत: इन दोनों का औसत या माध्य ही माध्यिका है।

$$\text{माध्यिका} \; \frac{190+195}{2}=192{\cdot}50 \text{ रु०}$$

वर्गीकृत आँकड़ों से माध्यिका निकालना

वर्गीकृत आँकड़ों से माध्यिका उस वर्ग में होगी जिसकी स्थिति मध्य में होती है अर्थात् जहाँ n/2वाँ मद होता है। इसलिए हमें वह वर्ग ज्ञात करना है जिसमें माध्यिका आती है। दूसरे शब्दों में माध्यिका वर्ग मालूम करना है। क्योंकि हमें किसी वर्ग में प्रेक्षणों के बंटन का पता नहीं है अत: हम यह मान लेते हैं कि वर्ग में प्रेक्षणों का बंटन समान है। अब माध्यिका अन्तर्वेशन द्वारा इस प्रकार प्राप्त कर ली जाती है :

$$\text{माध्यिका}=L_1+\left(\frac{N/2-C}{f}\right)h$$

जहाँ L_1 माध्यिका वर्ग की निम्न सीमा है।

C माध्यिका वर्ग के पूर्ववर्ती वर्ग की संचयी बारंबारता है।

f माध्यिका वर्ग की बारंबारता है।

h माध्यिका वर्ग अन्तराल का परिमाण है।

उदाहरण : नीचे भू-जोत के अनुसार परिवार संख्या दी गई है। इसमें भू-जोत की माध्यिका इस प्रकार निकाल सकते हैं :

भू-जोत का आकार बंटन

आकार (हेक्टेयर में)	परिवारों की संख्या (f)	संचयी बारंबारता
0-1	550	550
1-3	600	1150
3-5	400	1550
5-10	250	1800
10-20	110	1910
20-50	85	1995
50 से ऊपर	5	2000
योग	2000	

तीसरे स्तम्भ में हम देखते हैं कि 0—1 हेक्टे० वाले वर्ग में आरोह-क्रम से पहले 550 जोत है, अगली 600 जोतें अर्थात् 551वीं से 1150 तक 1 से 3 हेक्टे० वाले वर्ग में आते हैं। उससे आगे 400 जोत 1151 से 1550वीं मान तक 3 से 5 हेक्टे० वाले वर्ग में आते हैं। स्तम्भ 3 में दी गई संचयी बारंबारता, माध्यिका वर्ग को निर्धारित करने में सहायता करती है। हमारे उदाहरण में $\frac{n}{2}=\frac{2000}{2}=1000$ होगी। इसलिए इस प्रेक्षण में 1000वाँ परिवार 1 से 3 हेक्टे० के वर्ग में आता है।

इसलिए :

$L_1=1$

$h=3-1=2$

$f=600$ और

$c=550$

$$\text{इसलिए माध्यिका}=L_1+\left(\frac{N/2-C}{f}\right)\times h$$

$$=1+\left(\frac{1000-550}{600}\right)\times 2$$

$$=1+1{\cdot}5$$

$$=2.5 \text{ हेक्टे०}$$

इसका अर्थ यह है कि हमारे भू-जोतों के बंटन में आकार के अनुसार लगभग 1000 जोत हैं। दूसरे शब्दों में 50 प्रतिशत जोत 2·5 हेक्टे० से कम तथा 1000 (अथवा शेष 50%) इससे अधिक हैं।

आओ, इस श्रृंखला का अंकगणितीय माध्य निकालने का प्रयत्न करें। यद्यपि यह एक अनुपयुक्त औसत है। हमें शीघ्र ही विवृतान्त वर्ग '50 और उससे अधिक' हेक्टेयर भू-जोत वर्ग की समस्या का सामना करना पड़ता है। यदि यथाप्राप्त आँकड़े जिनसे बारंबारता बंटन बनाया गया है, हमारी पहुँच से बाहर हैं तो हमें स्वेच्छा से एक उपरिसीमा उस वर्ग में रखनी पड़ती है। यह स्वाभाविक है कि उपरिसीमा जितनी ऊँची होगी, उतना ही माध्य का मान ऊँचा होगा। मान लें कि उपरिसीमा 100 है तो इसका वर्ग-अन्तराल सामान्यत: 30 से अधिक होगा, जो कि पूर्ववर्ती वर्ग का आकार है। जोत का माध्य-आकार $\bar{X}=4\ 975$ हेक्टे० होता है जो माध्यिका $=2\cdot5$ हेक्टे० का लगभग दूना है। क्योंकि बंटन का झुकाव दायीं ओर को है, इसलिए माध्य अधिक मानों (चरम) की ओर खींचा गया है।

इस प्रकार माध्य की तरह माध्यिका जो एक स्थिति की माप होती है, मानों से अधिक प्रभावित नहीं होती है। अत: इसे केन्द्रीय प्रवृत्ति जानने का उपयोगी साधन माना जाता है। विशेष रूप से अनेकरूपता वाले बंटनों में जैसे कि भू-जोत का बंटन, आय और सम्पत्ति का बंटन तथा नगरीय आवासों का बंटन आदि।

किसी माध्यिका पर असमान वर्ग अन्तराल या विवर्तान्त वर्गों की उपस्थिति का भी प्रभाव नहीं पड़ता जैसा कि पहले दिए गए जोत और उनके आकार पर आधारित बंटन में देख चुके हैं। इसी प्रकार यदि एक सारणी में प्रारम्भिक या अन्तिम पद उपलब्ध न हो, परन्तु इन खोए हुए या छूटे हुए पदों की संख्या ज्ञात हो तो हम माध्यिका की गणना कर सकते हैं। फिर भी आँकड़ों को आरोही या अवरोही क्रम में रखे बिना माध्यिका नहीं निकाल सकते। यदि आँकड़े बहुत अधिक हों तो इस कार्य में काफी कठिनाई हो सकती है और समय भी अधिक लगेगा। इसी प्रकार अनियमित आँकड़ों में जहाँ माध्यिका के पास कई रिक्त स्थान हों तो इसे केन्द्रीय प्रवृत्ति की अच्छी माप नहीं कहेंगे। इसका कारण यह है कि श्रृंखला में एक या दो मान घटाने या बढ़ाने से माध्यिका का मान त्रुटिपूर्ण हो जाएगा।

विभाजन मान

हम जान चुके हैं कि माध्यिका वह मान है जो एक श्रृंखला को दो या लगभग दो बराबर भागों में बाँटता है। बंटन के बारे में अधिक जानने के लिए हम मानों को इस प्रकार निर्धारित करते हैं जिससे प्रेक्षण 4, 10, 100 या n बराबर भागों में विभाजित हो सकें।

चतुर्थक

ऐसे मान जो श्रृंखला को चार बराबर भागों में बाँटते हों, चतुर्थक कहलाते हैं। किसी भी बंटन के लिए, तीन चतुर्थक होंगे जो Q_1, Q_2 और Q_3 से सूचित किए जाते हैं। उदाहरणार्थ Q_1, प्रथम या सबसे कम वाला चतुर्थक श्रृंखला को इस प्रकार विभाजित करता है कि कुल प्रेक्षणों के एक चौथाई मान इससे नीचे और $\frac{3}{4}$ इससे ऊपर आते हैं। Q_2 दूसरा या मध्य का चतुर्थक है जिसमें प्रेक्षणों का $\frac{2}{4}$ (अथवा $\frac{1}{2}$) इससे अधिक तथा $\frac{2}{4}$ (या $\frac{1}{2}$) इससे नीचे होते हैं। आप देखेंगे कि Q_2 माध्यिका ही है। एक चौथाई प्रेक्षण Q_1 तथा Q_2 (माध्यिका) के बीच और एक चौथाई Q_2 (माध्यिका) तथा Q_3 के बीच होंगे। इसी प्रकार Q_3 जो कि तीसरा या ऊपरी चतुर्थक है उससे $\frac{3}{4}$ भाग नीचे और केवल $\frac{1}{4}$ भाग ऊपर होते हैं।

चतुर्थक ज्ञात करने की विधि माध्य को ज्ञात करने की विधि के ही समान है। इसमें पहले हम वे वर्ग निर्धारित करते हैं जिनमें चतुर्थक पड़ता है। इसलिए Q_1 के लिए पहले हमें वर्ग ढूंढ़ना होता है जहाँ N/4 प्रेक्षण पड़ते हैं। उसी प्रकार Q_3 के लिए वह वर्ग निश्चित करते है जिसमे 3n/4 प्रेक्षण आते है। वर्गों का निर्धारण करने के बाद Q_1 व Q_3 के मानों को निम्न प्रकार से अंतर्वेशित किया जाता है।

$$Q_1=L_1\left(\frac{N/4-C}{f}\right)\times h$$

यहाँ L_1 = निम्न या प्रथम चतुर्थक वर्ग की निम्न सीमा

f = निम्न चतुर्थक की बारंबारता

h = निम्न चतुर्थक वर्ग अन्तराल का परिमाण और

C = निम्न चतुर्थक वर्ग से पूर्ववर्ती वर्ग की संचयी बारंबारता

$$\text{और } Q_3 = L_1 + \left(\frac{3N/4 - C}{f}\right) \times h$$

यहाँ

L_1 = सबसे ऊपरी चतुर्थक वर्ग की निम्न सीमा

f = सबसे ऊपरी चतुर्थक वर्ग की बारंबारता

L = सबसे ऊपरी चतुर्थक वर्ग अन्तराल का परिमाण

C = सबसे ऊपरी चतुर्थक वर्ग से पूर्ववर्ती वर्ग की संचयी बारंबारता

आओ, अब हम पूर्व सारणी में आकार के आधार पर भू-जोतों के बंटन के लिए Q_1 और Q_2 की गणना करें।

$$\frac{N}{4} = \frac{2000}{4} = 500$$

500वाँ भूजोत 0—1 हेक्टे० वाले वर्ग अर्थात् पहले वर्ग में आता है। इसलिए Q_1 को ज्ञात करने के लिए,

$L_1 = 0$

$f = 550$

$h = 1 - 0 = 1$

$C = 0$

(क्योंकि निम्न चतुर्थक वर्ग से पहले कोई वर्ग नहीं है। ऐसे वर्ग की संचयी बारंबारता कोई भी नहीं है अतः उसे शून्य माना जा सकता है।)

$$\therefore \; Q_1 = L_1 + \left(\frac{N/4 - C}{f}\right) \times h$$

$$= O + \frac{500 - O}{550} \times 1$$

$$= \frac{500}{550} = \frac{10}{11} = 0{\cdot}91 \text{ हेक्टे०}$$

इसका तात्पर्य यह है कि 500 भू-जोत अर्थात् कुल का 25 प्रतिशत 0·91 हेक्टे० से नीचे की हैं और 1500 अर्थात् 75% इससे अधिक की हैं। इससे इस बात का भी पता चलता है कि अन्य 500 अर्थात् कुल भू-जोतों का 25 प्रतिशत 0·91 हेक्टेयर ($= Q_1$) तथा 2·5 हेक्टेयर ($= Q_2$ = माध्यिका) के बीच में आती है। इसी प्रकार हम Q_3 अथवा सबसे ऊपरी चतुर्थक वर्ग ज्ञात कर सकते हैं।

यह वह वर्ग है जिसमें $\frac{3N}{4}$वीं $= \frac{3}{4} \times 2000 = 1500$वीं भू-जोत आती है। स्तम्भ 3 से हमने देखा कि 1500 भू-जोत ऐसे है जो 3 से 5 हेक्टेयर वाले आकार वर्ग में हैं, इसलिए सबसे ऊपरी चतुर्थक गणना करने के लिए :

$L_1 = 3$

$f = 400$

$L = 5 - 3 = 2$ और

$C = 1150$

$$Q_3 = L_1 + \left(\frac{3N/4 - C}{f}\right) \times h$$

$$= \frac{3 + 1500 - 1150}{400} \times 2 = 3 + \frac{7}{4}$$

$$= 4{\cdot}75 \text{ हेक्टे०}$$

यहाँ सबसे ऊपरी चतुर्थक, Q_3 = 4·75 यह दिखाता है कि कुल भूजोतों के लगभग 75% इस आकार से नीचे हैं और 25% इस आकार से ऊपर हैं।

दशमक

ऐसे मान जो किसी बंटन को दस बराबर भागों में बाँटते हैं, दशमक कहलाते हैं। स्वाभाविक रूप से नौ दशमक हैं : $D_1, D_2, D_3, D_4, D_5, D_6, D_7, D_8, D_9$ तथा D_5 पाँचवाँ दशमक वैसा ही है जैसा कि Q_2 या माध्यिका। किसी दशमक का मान जैसे कि D_j, j वाँ दशमक इसी प्रकार ज्ञात किया जाता है जैसा कि माध्यिका और चतुर्थक का निम्न प्रकार से निकाला जाएगा :

$$Dj = L_1 + \left(\frac{jN/10 - C}{f}\right) h$$

यहाँ L_1 = jवें दशमक वर्ग की निम्न सीमा।

f = jवें दशमक वर्ग की बारंबारता।

h = jवें दशमक वर्ग का परिमाण।

और C = jवें दशमक वर्ग से पूर्ववर्ती वर्ग की संचयी बारंबारता।

आइए अब हम भू-जोतों के वितरण का D_3 तीसरा दशमक और D_9 नौवाँ दशमक ज्ञात करें।

$$D_3 = L_1 + \left(\frac{3N/10 - C}{f}\right) h$$

और $D_9 = L_1 + \left(\frac{9N/10 - C}{f}\right) h$

अब $\frac{3N}{10} = \frac{3 \times 2000}{10} = 600$

और $\frac{9n}{10} = \frac{9 \times 2000}{10} = 1800$

600वीं भूजोत 1-3 हेक्टेयर वाले वर्ग में आती है, इसलिए $L_1 = 1, f = 600, h = 2, C = 550.$

$$\therefore D_3 = 1 + \frac{600 - 550}{600} \times 2$$

$$= 1{\cdot}17 \text{ हेक्टेयर}$$

1800वीं भू-जोत 5-10 वाले वर्ग में पड़ता है। वास्तव में यह इस वर्ग में अन्तिम या उच्चतम जोत है।

इसलिए $L_1 = i, f = 600, h = 5,$ and $C = 1550.$

$$D_9 = 5 + \frac{1800 - 1550}{250} \times 5$$

$$= 10 \text{ हेक्टेयर}$$

इसका अर्थ यह है कि $\frac{3}{10}$ या 30 प्रतिशत जोतें 1·17 हेक्टेयर से छोटी और $\frac{7}{10}$ या 70% इससे बड़ी हैं। इसी प्रकार D_9 का मान 10 हेक्टेयर है अर्थात् $\frac{9}{10}$ या 90% जोतें 10 हेक्टेयर से छोटी है तथा केवल $\frac{1}{10}$ या 10 प्रतिशत इससे बड़ी है।

शतमक

ऐसे मान जो किसी शृंखला को 100 बराबर भागों में बाँटते हैं, शतमक कहलाते हैं। इस प्रकार 99 शतमक हैं। P_1 P_2······ ···P_{99} तक। j वीं शतमक का सूत्र इस प्रकार है :

$$Pj = L_1 + \left(\frac{jN/100 - C}{f}\right) h$$

जहाँ L_1 = jवीं शतमक वर्ग की निम्न रेखा
j = इस वर्ग की बारंबारता
h = jवें शतमक वर्ग अन्तराल का परिमाण
C = jवें शतमक वर्ग से पूर्ववर्ती वर्ग की संचयी बारंबारता।

आइए अब हम P_{65} पद वाला वर्ग अर्थात् 65वें शतमक का परिकलन करें। अब $P_{65} = L_1 + \left(\frac{65N/100 - C}{f}\right) h$

सर्वप्रथम हमें P_{65} पद वाला वर्ग अर्थात् वह वर्ग जिसमें $\frac{65N}{100}$वीं मद आती है, ज्ञात करना है।

$65N/100 = 65/100 \times 2000 = 1300$

1300वाँ भू-जोत 3·5 हेक्टेयर वाले वर्ग में आता है।

अत: $L_1 = 3$
$f = 400$
$h = 2$
$C = 1150$

$$P_{65} = 3 + \left(\frac{1300 - 1150}{400}\right) \times 2$$

$$= 3{\cdot}75 \text{ हेक्टेयर}$$

इसका अर्थ यह है कि 65 प्रतिशत भू-जोतों का क्षेत्रफल 3·75 हेक्टे० से नीचे और 35 प्रतिशत का इसके ऊपर है। इसी प्रकार किसी अन्य शतमक का मान निकाल सकते हैं। किसी और मतलब के लिए पंचयकों द्वारा पाँच बराबर भाग करके या अष्टयकों द्वारा आठ समान भाग करके या किसी अन्य संख्या से (n) बराबर भाग करके बंटन का अध्ययन किया जा सकता है। इनके परिकलन की विधि अन्य विभाजकों या स्थितिज मानों की तरह ही है।

विभाजक या स्थितिज मान किसी बंटन के विभिन्न भागों के अध्ययन में मदद देते हैं और इस प्रकार उसकी रचना के बारे में अधिक जान सकते हैं। भूगोल में इन धारणाओं की क्रियात्मक उपयोगिता निम्नलिखित उदाहरण से स्पष्ट हो जाती है।

उदाहरण :

मध्य प्रदेश की 1971 वर्ष की कुल जनसंख्या में साक्षरों का प्रतिशत जिलेवार नीचे दिया है। जिलों को चार समूहों—निम्न, मध्यम, सामान्य तथा उच्च साक्षरों में विभाजित करिए :

क्रमसंख्या	जिला	साक्षरों का प्रतिशत
1	मुरैना	19·77
2	भिंड	23 94
3	ग्वालियर	33·94
4	दतिया	21·77
5	शिवपुरी	16·87

6	गुना	17·47
7	टीकमगढ़	13·93
8	छत्तरपुर	15·16
9	पन्ना	14·83
10	सतना	20·68
11	रीवाँ	19·60
12	शहडोल	14·65
13	सीधी	10·74
14	मन्दसौर	27·63
15	रतलाम	25·63
16	उज्जैन	28·56
17	झाबुआ	8·21
18	धार	16·76
19	इन्दौर	44·35
20	देवास	21·55
21	खरगौन	18·78
22	खण्डवा	28·02
23	शाजापुर	18·96
24	रायगढ़	14·37
25	विदिशा	18·33
26	सीहौर	28·57
27	रायसेन	18·38
28	होशंगाबाद	19·43
29	बेतूल	22·42
30	सागर	27 62
31	दमोह	23·28
32	जबलपुर	34·26
33	नरसिंहपुर	29·24
34	मण्डला	18·31
35	छिन्दवाड़ा	21·91
36	सिवनी	21·31
37	बालाघाट	25·13
38	सरगूजा	12·36
39	विलासपुर	22·79
40	रायगढ़	19·92
41	दुर्ग	24.75
42	रायपुर	23·60
43	बस्तर	9·64

स्रोत : जनसंख्या का अस्थायी योग भारत की जनगणना 1971.

अवरोह क्रम में इन 43 मानों का विन्यास करने पर

8·21 9·64 10·74 12·36 13·93 14·37 14·65
14 83 15·16 16·76 16·87 17·47 18·31 18·33
18·38 18·78 18·96 19·60 19·77 19·92 20·68
21·31 21·55 21·77 21·91 22·42 22·79 23·28
23·60 23·94 24·75 25·13 25·63 27·62 27·63
28·02 28·56 28·57 29·24 29 43 33·99 34·26
44·35

यहाँ मध्य का मान 21·31 (माध्यिका) या Q_2 है। पहले आधे भाग के मानों का मध्यमान 16·87 या Q_1 है और दूसरे आधे भाग के मानों का मध्यमान 25·63 या Q_3 है।

जैसा हम देखते हैं कि 10 मान ऐसे हैं जो 16·87 (Q_1) से नीचे हैं। 11 मान 16.87 से ऊपर तथा 21·31 से नीचे हैं। 11 मान 21.31 से ऊपर किन्तु 25·63 (Q_3) से नीचे और 11 मान ऐसे भी हैं जिनके मान 25·63 या इससे ऊपर हैं।

एक बार शतमकों के मान ज्ञात हो जाने पर उनको पूर्ण संख्याओं में बदल दिया जाता है, ताकि उनके प्रस्तुत करने में आसानी रहती है। इनको इस प्रकार अनुबन्ध किया जाता है कि समुदाय में रखने में कोई कठिनाई न हो। उपरोक्त विभाजन को पूर्ण संख्याओं में इस प्रकार लिखेंगे :

समुदाय	प्रतिशत का परिसर	जिलों की संख्या
निम्न साक्षरता	17 से कम तक	11
मध्यम साक्षरता	17 से लेकर 20 से कम तक	9
सामान्य साक्षरता	20 से लेकर 25 से कम तक	11
उच्च साक्षरता	25 से अधिक	12

क्योंकि ये समुदाय साक्षरता के निम्न स्तर से उच्च स्तर की ओर हैं, उपरोक्त विधि की तरह इनको निम्न, मध्यम, सामान्य और उच्च साक्षरता प्रदर्शित करने वाला माना जा सकता है।

जो जिले प्रत्येक समुदाय में आते हैं वे निम्न प्रकार के हैं :

समुदाय—1 (निम्न साक्षरता)

शिवपुरी, टीकमगढ़, छत्तरपुर, पन्ना, शहडोल, सीधी, झाबुआ, धार, रायगढ़ और बस्तर।

समुदाय—2 (मध्यम साक्षरता)

मुरैना, गुना, रीवाँ, खरगोन, शाजापुर, विदिशा, रायसेन, मण्डला, रायगढ़।

समुदाय-3 (सामान्य साक्षरता)

भिंड, दतिया, सतना, देवास, बेतूल, दमोह, छिंदवाड़ा, सिवनी, विलासपुर, दुर्ग, रायपुर।

समुदाय-4 (उच्च साक्षरता)

ग्वालियर, मन्दसौर, रतलाम, उज्जैन, इन्दौर, खण्डवा, सीहोर, होशंगाबाद, सागर, जबलपुर, नरसिंहपुर, बालाघाट।

साक्षरता के वितरण प्रतिरूप को चित्र 57 में दिखलाया गया हैं।

यदि प्रेक्षणों की संख्या बहुत अधिक हो तो मानों को क्रम से रखना बहुत कठिन होता है। इस प्रकार के उदाहरणों में पहले मानों को एक सारणी रूप में क्रमबद्ध किया जाता है और तब Q_1, Q_2 और Q_3 के मानों को उपरोक्त विधि के अनुसार ज्ञात किया जाता है।

उदाहरण :

पंजाब के ग्रामीण बस्ती का आकार के अनुसार बंटन 1971 के लिए नीचे दिया गया है। इसमें वह अन्तराल मालूम करिए जिससे ग्रामों को चार समूहों में बाँटा जाए और प्रत्येक समूह में ग्रामों की संख्या समान हो। यह भी मालूम करिए कि किस आकार के ग्राम पंजाब का सबसे अधिक प्रतिनिधित्व करते हैं।
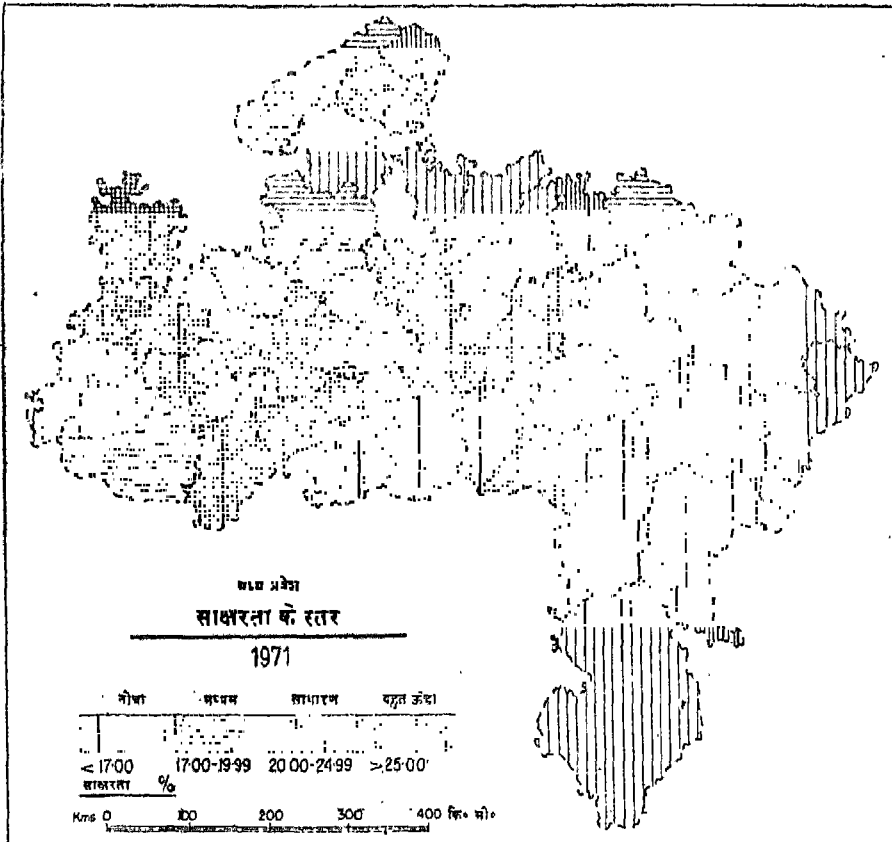
चित्र—57 वर्ग-अन्तरालों का चयन और मानचित्रण

वर्ग (जनसंख्या)	बारंबारता (ग्रामों की संख्या)	संचयी बारंबारता
200 से कम	1887	1887
200 से 500	3311	5198
500 से 1000	3577	8775
1000 से 2000	2392	11167
2000 से 5000	940	12107
5000 से 10000	79	12186
10 000 और अधिक	2	12188
	12188	

स्रोत : 1971 में भारत की जनगणना

पहले चतुर्थक Q_1 के लिए हमें सर्वप्रथम $\frac{N}{4}$ या $\frac{12188}{4} = 3047$ निकालना होगा जो वर्ग 200 से 500 में आता है और इसी प्रकार :

$L = 200$, $C = 1887$, $f = 3311$, और
$h = 500 - 200 = 300$

अत: $Q_1 = 200 + \frac{3047 - 1887}{3311} \times 300$

$= 200 + \frac{1160 \times 300}{3311} = 200 + 105 \cdot 104$

$= 305 \cdot 104$ अथवा 305 व्यक्ति

Q_2 या माध्यिका के लिए हमें $\frac{N}{2}$ निकालना होगा। उदाहरण के लिए $\frac{12188}{2} = 6094$ आता है जो 500 से 1000 वाले वर्ग में पड़ता है और इसी लिए

$L = 500$, $C = 5198$, $f = 3577$, और
$h = 1000 - 500 = 500$

अत: Q_2 या माध्यिका $= 500 + \frac{6094 - 5198}{3577} \times 500$

$= 500 + \frac{896 \times 500}{3577}$

$= 500 + 125 \cdot 244$

$= 625 \cdot 244$

$= 625$ व्यक्ति

और Q_3 निकालने के लिए गणना इस प्रकार करनी होगी :

$\frac{3N}{4}$ या $\frac{3 \times 12188}{4} = 9131$ जो कि 1000 से 2000 वाले वर्ग में आता है। अत:

$L = 1000$, $C = 8775$, $f = 2392$, और
$h = 2000 \quad 1000 = 1000$

$Q_3 = 1000 + \frac{9131 - 8775}{2392} \times 1000$

$= 1000 + \frac{356}{2392} \times 1000$

$= 1000 + 48 \cdot 83 = 1048 \cdot 83$ या 1049 व्यक्ति

इस प्रकार आकार के अनुसार गाँवों को वर्गीकरण के लिए निम्नलिखित चतुर्थकों (समुदायों) में बाँटा जा सकता है। दिए गए पूर्ववर्ती उदाहरण में :

गाँवों के समुदाय आकार	जनसंख्या
छोटा	300 से कम
मध्यम	300 से 625
सामान्य रूप से ऊँचा	625 से 1000
बहुत ऊँचा	1000 से ऊपर

विशेष टिप्पणी – सरल बनाने के लिए 305 और 1049 को क्रमश: 300 व 1000 की पूर्ण संख्याओं में मान लिया है।

बहुलक

हमने केन्द्रीय प्रवृत्ति के मापों जैसे माध्य और माध्यिका का अध्ययन कर लिया है। ये दोनों सामान्यत: अधिक प्रयोग में आते हैं परन्तु कई बार हम शृंखला के सबसे विशेष मान अर्थात् उस मान को जिसके चारों ओर पदों का सबसे अधिक संकेन्द्रण होता है, के बारे में अध्ययन करते हैं। इस मान को बहुलक कहते हैं। उदाहरण के लिए पुरुषों की कमीज बनाने में विशिष्टता रखने वाला एक वस्त्र-निर्माता यह जानना चाहेगा कि किस आकार की कमीज की सबसे अधिक माँग है। यह बिलकुल सत्य है कि वह अन्य आकारों की भी कमीजें तैयार करेगा लेकिन उसका सबसे अधिक उत्पादन अधिकतम माँग वाली कमीज पर केन्द्रित होगा।

यदि आँकड़े अवर्गीकृत हों तो बहुलक ऐसा मान होगा जो शृंखला में सबसे अधिक बार आता है। इसे जानने के

लिए आँकड़ों को व्यवस्थित रूप में क्रमानुसार सारणीबद्ध करना होता है। जब किसी शृंखला में कोई एक मान अन्य मानों की अपेक्षा सबसे अधिक बार आता है तो उस बंटन को एक बहुलक बंटन कहते हैं, परन्तु यदि ऐसे दो मान हैं, जिनकी बारंबारता एक समान और सर्वाधिक होता है तो इस बंटन को द्वि-बहुलक बंटन कहते हैं। जब प्रेक्षणों के सारे मान एक से या उनकी आवृत्ति नहीं होती है, वहाँ बहुलक नहीं होता है।

वर्गीकृत आँकड़ों में बहुलक अधिकतम बारंबारता वाले वर्ग को पहचान कर निम्न प्रकार से निकाला जा सकता है :

$$Mo = L_1 + \frac{D_1}{D_1 + D_2} \times h$$

जहाँ L_1=बहुलक वर्ग की निम्न सीमा अर्थात् अधिकतम बारंबारता वाले वर्ग की निम्न सीमा।

D_1=बहुलक वर्ग और उससे पूर्व के निम्न वर्ग के बीच की बारंबारताओं का अन्तर।

D_2=बहुलक वर्ग तथा उसके बाद आने वाले वर्ग की बारंबारताओं के बीच अन्तर।

और h =बहुलक वर्ग-अन्तराल का परिमाण।

उदाहरण :

निम्नलिखित बंटन से श्रमिकों के परिवारों की बहुलक आय निकालिए।

एक नगर में श्रमिकों के परिवारों की आय

प्रतिवर्ष आय (रुपये)	परिवारों की संख्या
300 रुपये से कम	500
300 से 600	1500
600 से 1200	3000
1200 से 2400	6500
2400 से 3600	3500
3600 से 4800	1800
4800 से 8000	600
8000 से 15000	120
15000 से ऊपर	80
कुल योग	17,600

$$\text{बहुलक} = L_1 + \frac{D_1}{D_1 + D_2} \times h$$

यहाँ पर बहुलक वर्ग 1200—1400 रुपये वाला है और इसलिए $L_1=1200$, $D_1=6500-3000=3500$

$D_2=6500-3500=3000$ और $h=2400-1200=1200$

$$\therefore \text{बहुलक} = 1200 + \frac{3500}{3500+3000} \times 1200$$

$$= 1200 + \frac{8400}{13} = 1200 + 646{\cdot}15$$

$$= 1846{\cdot}15 \text{ रुपये।}$$

अतः इस नगर में श्रमिकों के परिवारों की बहुलक आय 1846·15 रुपये है।

बहुलक को आसानी से निरीक्षण द्वारा मालूम किया जा सकता है। और यह एक अनुमान है जो उन लोगों द्वारा भी प्रभावपूर्ण ढंग से प्रयोग किया जा सकता है जो सांख्यिकीय विधियों को नहीं जानते। परन्तु यह एक महत्वपूर्ण माप नहीं है जब तक कि प्रेक्षणों की संख्या बहुत अधिक न हो। इसके अतिरिक्त यद्यपि यह असमान वर्ग-अन्तरालों में भी उपयोग किया जा सकता है परन्तु कुछ अवस्थाओं में यह गलत चित्र प्रस्तुत कर सकता है।

माध्यिका की तरह, कुछ चरम मानों के होने का बहुलक पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता क्योंकि इसकी परिभाषा से ही यह किसी शृंखला में सबसे अधिक विशिष्ट मान हैं। बहुलक का प्रयोग सामान्य रूप से नहीं किया जाता क्योंकि संभव है कि एक शृंखला में कोई ऐसा संकेन्द्रण बिन्दु न हो या दो या दो से अधिक संकेन्द्रण बिन्दु हों। ऐसी अवस्थाओं में बहुलक सुनिश्चित नहीं होता। जब बंटन बहुत अधिक विषम हो तो बहुलक प्रायः बंटन के प्रारम्भ या अन्त में ही होता है। ऐसी अवस्था में बहुलक केन्द्रीय प्रवृत्ति की माप नहीं हो सकता।

अब हम उपरोक्त विवेचन से कुछ ऐसे महत्वपूर्ण निष्कर्ष निकाल सकते हैं जो केन्द्रीय प्रवृत्ति के सभी मापों पर लागू होते हैं :

(1) एक माध्य या औसत केन्द्रीय प्रवृत्ति की माप तभी कर सकती है जबकि बारंबारता बंटन में अत्यधिक मात्रा में संकेन्द्रण अथवा गुच्छता हो और विचरण या विविधता बहुत अधिक न हो। एक औसत स्वयं में किसी शृंखला के विचरण की अधिकतर सीमाओं को स्पष्ट नहीं

करता है और इसीलिए यदि केवल औसत दिया हुआ है तो हम निश्चित रूप से नहीं कह सकते कि यह केन्द्रीय प्रवृत्ति का एक सार्थक तथा उपयुक्त माप है या नहीं।

(2) एक माध्य या औसत दो या अधिक शृंखलाओं की तुलना करने में महत्वपूर्ण हो सकता है। यदि दोनों की आकृति एक समान हो। यहाँ भी केवल माध्यों या औसतों से यह नहीं बताया जा सकता कि वे स्थिति निर्धारण के उपयोगी माप हैं अथवा नहीं।

एक और परिस्थिति में अंकगणितीय माध्य केन्द्रीय प्रवृत्ति का उपयोगी माप नहीं हो सकता जब शृंखला विशेषरूप से असममित या विषम हो। आय, भूजोतों या अन्य संपतियों के बंटन, औद्योगिक क्रियाओं का स्वामित्व स्वरूप आदि कुछ ऐसे उदाहरण हैं जहाँ बारंबारता बंटनों के अधिकतर देशों में अत्यधिक विषम होने की संभावना होती है। और ऐसी दशाओं में अंकगणितीय माध्य केन्द्रीय प्रवृत्ति का उपयुक्त माप नहीं हो सकता। फिर भी क्योंकि अंकगणितीय माध्य में कुछ महत्त्वपूर्ण विशेषताएँ हैं इसलिए इसका व्यापक प्रयोग होता है। ये विशेषताएँ निम्न हैं :

(1) संख्याओं के किसी समुच्चय के माध्य से विचलनों का बीजीय योग शून्य होता है जैसे

$\Sigma X) - \overline{X}) = 0$

(2) संख्याओं के विचलनों के वर्गों का योग किसी समुच्चय के माध्य से सबसे कम होता है जैसे

$\Sigma (X - \overline{X})^2$ न्यूनतम है।

(3) यदि f_1 संख्याओं का माध्य m_1 f_2 संख्याओं का माध्य m_2 .... fk संख्याओं का माध्य mk हो तब संख्याओं का माध्य :

$$\overline{X} = \frac{f_1 m_1 + f_2 m_2 + \ldots\ldots\ldots + f_K m_K}{f_1 + f_2 + \ldots\ldots\ldots + f_K}$$

अर्थात् सम्मिलित माध्य सभी माध्यमों का भारित अंकगणितीय माध्य है।

(4) यदि a कोई कल्पित अंकगणितीय माध्य है जो कोई भी संख्या हो सकती है और यदि $uj = xj - a$ (a से xj का विचलन) हो तो हम कल्पित माध्य की सहायता से माध्य $\overline{X}$ को आसानी से निकाल सकते हैं।

माध्य, माध्यिका और बहुलक—एक आपेक्षिक मूल्यांकन

केन्द्रीय प्रवृत्ति की तीनों मापों में से प्रत्येक की विशेषताओं का विवेचन करते समय हमने बताया है कि केन्द्रीय प्रवृत्ति के किसी विशेष माप का चयन आँकड़ों के बंटन और उस उद्देश्य पर निर्भर करता है जिसके लिए वह माप प्रयोग में लाया जाता है। अंकगणितीय माप निस्संदेह सबसे अधिक प्रचलित माप है। इसकी लोकप्रियता का एक मुख्य कारण यह है कि यह अति सरल है और इसका आगे गणितीय विवेचन हो सकता है। परन्तु चरम मानों वाली या विवृतान्त वर्गों वाली श्रेणियों में माध्य बहुत अधिक भ्रामक होता है। यहाँ माध्यिका केन्द्रीय प्रवृत्ति का अधिक उपयुक्त माप होगी। जैसा ऊपर बताया जा चुका है, बहुलक का उपयोग बहुत कम किया जाता है।

विक्षेपण और केन्द्रीकरण की माप

हमने पिछले अध्याय में केन्द्रीय प्रवृत्ति के विविध मापों द्वारा किसी शृंखला के आँकड़ों को छोटा करने की अधिक महत्वपूर्ण विधियों पर विचार किया है। ये विधियाँ अत्यन्त उपयोगी हैं क्योंकि सम्पूर्ण बंटन के लिए केवल एक प्रतिनिधि मान प्रदान करती है फिर भी जैसा कि पहले लिखा जा चुका है, वे मानों के फैलाव के बारे में तथा आँकड़ों की अन्य महत्त्वपूर्ण विशेषताओं के बारे में सूचना प्रदान नहीं कर पाते। उदाहरण के लिए एक देश में लोगों की औसत आय—प्रति व्यक्ति आय एक प्रकार की ऐसी माप है जिससे उस देश के आर्थिक विकास के स्तर का पता चलता है। फिर भी इसके द्वारा लोगों में आय के बंटन के बारे में कोई भी जानकारी प्राप्त नहीं होती और न ही यह इस बात को स्पष्ट करता है कि गरीब और अमीर के बीच कितना अन्तर है। इससे यह बात भी स्पष्ट नहीं हो पाती कि कितने लोग निर्धनता की रेखा से नीचे हैं और ऐसे कितने व्यक्ति हैं जिनकी आय अत्यन्त अधिक है। किसी बंटन का पूर्ण चित्र देने के लिए यह आवश्यक है कि केन्द्रीय प्रवृत्ति के मापों के साथ विक्षेपण मापों अथवा आन्तरिक अथवा आन्तरिक परिवर्तनशीलता के आँकड़ों को भी दें। परिवर्तनशीलता के सर्वाधिक प्रयोग में आने वाले निम्नलिखित सात माप हैं :

(1) परिसर
(2) चतुर्थक विचलन
(3) माध्य विचलन
(4) प्रामाणिक विचलन
(5) आपेक्षिक विक्षेपण
(6) लोलेंज वक्र
(7) अवस्थिति खंड

परिसर

परिवर्तनशीलता की सबसे सरल माप परिसर है। यह किसी शृंखला में अधिकतम व न्यूनतम मानों के बीच अन्तर से प्राप्त की जाती है। माना कि पाँच लोगों की मासिक आय 180, 250, 170, 100 व 200 रुपए है। इस बंटन में निम्नतम मान 100 है और उच्चतम 250 है। दोनों मानों के बीच अन्तर 250 – 100 = 150 है जो इस बंटन का परिसर है। परिसर का निकालना और समझना बहुत सरल है। फिर भी क्योंकि यह केवल दो अति-विषम (अधिकतम और न्यूनतम) मानों पर निर्भर करता है और अन्य मानों को प्रयोग में नहीं लाता, इसलिए यह बहुत अधिक भ्रम पैदा करता है।

उदाहरण

माना कि दो बस्तियों A तथा B में 10 लोगों की आय इस प्रकार है :

मासिक आय

बस्ती A : 70, 100, 50, 130, 140, 150, 90, 60, 110 और 600 रुपए।

बस्ती B : 1250, 1350, 1600, 1450, 1550, 1700, 1750, 1800, 1400 और 1650 रुपए।

परिसर

बस्ती A : 600 – 50 = 550 रुपए

बस्ती B : 1800 – 1250 = 550 रुपए

माध्य

$\bar{X}A = 150$ रुपए

$\bar{X}B = 1550$ रुपए

उपरोक्त दोनों बंटनों में परिसर एक-सा अर्थात् 550 रु० है। लेकिन बस्ती A में आय 50 रु० से 600 रु० तक है और बस्ती B में 1250 रु० से 1800 रु० के बीच में है। इसके अतिरिक्त दोनों बस्तियों में आयों की अधिकतम एवं न्यूनतम सीमाओं के बीच बंटन भी अलग-अलग हैं। बस्ती A में औसत आय ($\bar{X}A$) = 150 रु० से केवल एक ही मान अधिक है जबकि दूसरी ओर बस्ती B में औसत आय ($\bar{X}B$) = 1550 रु० से 4 लोगों की आय कम और 5 लोगों की आय इससे अधिक है। इससे ज्ञात हुआ कि परिसर परिवर्तनशीलता की अशोधित माप है। और इसे सावधानी से केवल वहीं प्रयोग करना चाहिए जहाँ आंकड़े बहुत कुछ लगातार हों और अनियमित न हों।

चतुर्थक विचलन

परिसर में निहित चरम मानों के प्रभाव को बचाने के लिए हम प्राय: ऊपरी व निम्न चतुर्थकों के बीच के आधे अन्तर को लेकर परिवर्तनशीलता की माप करते हैं। इस अन्तर को अर्ध-आन्तरिक चतुर्थक परिसर या चतुर्थक-विचलन कहते हैं (Q)।

$$Q = \frac{Q_3 - Q_1}{Q_2}$$

यद्यपि इस प्रकार की माप से चरम मानों का प्रभाव हट जाता है फिर भी यह शृंखला के सभी मानों पर नहीं आधारित होती।

माध्य विचलन या औसत विचलन

परिवर्तनशीलता अथवा विचलन की माप के लिए सही दृष्टिकोण वह होगा जिसमें किसी शृंखला के सभी मानों को ध्यान में रखा जाय। इसके लिए एक विधि वह है जिसमें माध्य विचलन या औसत विचलन निकाला जाता है। जैसा कि इसके नाम से स्पष्ट होता है, यह माप किसी निश्चित बिन्दु से विभिन्न मानों के बीच विचलनों का औसत है। और यह प्राय: अंकगणितीय माध्य अथवा कभी-कभी माध्यिका भी होती है। सबसे पहले हम सभी विचलनों का बिना उनके चिह्नों पर ध्यान दिए योग प्राप्त करते हैं, फिर उस योग को प्रेक्षणों की संख्या से विभाजित करते हैं। विचलन के चिह्नों की उपेक्षा करके और केवल उनके परिमाण को ध्यान में रखने से उन दोनों को एक दूसरे को रद्द करने का अवसर नहीं दिया जाता अर्थात् दोनों (धनात्मक और ऋणात्मक) विचलनों को समान महत्व दिया जाता है। (यहाँ छात्रों को स्मरण करना चाहिए कि माध्य से विचलनों का योग $\Sigma(X - \bar{X}) = 0$ है।

अवर्गीकृत आँकड़ों के लिए बीजगणित के शब्दों में

$$\text{माध्य विचलन (MD)} = \frac{\Sigma|(X - \bar{X})|}{N}$$

जहाँ मापांक कहलाने वाले प्रतीक | | में यह बात निहित है कि इसके भीतर हम केवल चरों के परिमाण पर ही विचार कर रहे हैं। उदाहरण के लिए चिह्नों की उपेक्षा करके, $X - \bar{X}$ = माध्य या माध्यिका से मानों का विचलन तथा N = प्रेक्षणों की कुल संख्या है।

वर्गीकृत आँकड़ों के लिए, $MD = \frac{\Sigma f|(X-\bar{X})|}{N}$

यहाँ पर $X-\bar{X}$ = माध्य (अथवा माध्यिका) से वर्ग के मध्य बिन्दु के विचलन और

$N = \Sigma f$ जो बारंबारता का कुल योग है अर्थात् प्रेक्षणों की कुल संख्या

उदाहरण :

A तथा B बस्तियों के दस-दस व्यक्तियों की आय के माध्य की गणना इस प्रकार कर सकते हैं।

बस्ती A

व्यक्तियों की क्रमसंख्या	आय रुपयों में (X_A)	$X_A - \bar{X}_A$
1	70	80
2	100	50
3	50	100
4	130	20
5	140	10
6	150	0
7	90	60
8	60	90
9	110	40
10	600	450
योग	1500	900

$$\bar{X}_A = 150$$

$$MD_A = \frac{\Sigma|X_A - \bar{X}_A|}{N} = \frac{900}{10} = 90 \text{ रुपये}$$

बस्ती B

व्यक्तियों की क्रमसंख्या	आय रुपयों में (X_B)	$X_B - \bar{X}_B$
1	1250	300
2	1350	200
3	1600	50
4	1450	100
5	1550	0
6	1700	150
7	1750	200
8	1800	250
9	1400	150
10	1650	100
योग	15,500	1500

$$\bar{X}_B = 1500$$

$$MD_B = \frac{\Sigma|X_B - \bar{X}_B|}{N} = \frac{1500}{10} = 150 \text{ रुपये}$$

A बस्ती का माध्य-विचलन 90 रुपये, B बस्ती के माध्य-विचलन 150 रुपये की अपेक्षा कम है। फिर भी इसकी व्याख्या इस प्रकार से नहीं की जानी चाहिए कि बस्ती A के आयों में निम्न परिवर्तनशीलता दिखाई देती है क्योंकि (1) जैसा हमने ऊपर देखा है कि बस्ती A की शृंखला बहुत विषम व अनियमित है, जबकि B बस्ती की शृंखला लगभग सममित है और (2) दोनों शृंखलाओं के औसतों में भी अन्तर है।

मानक विचलन

विचलन के माप की अन्य विधि जिसमें किसी बंटन के सारे मानों को ध्यान में रखा जाता है, *मानक विचलन* कहलाती है। यहाँ सबसे पहले औसत से विचलनों के वर्गों का कुल योग निकाल लिया जाता है और फिर प्रेक्षणों की संख्या से विभाजित कर दिया जाता हैं। इस परिणाम को प्रसरण कहते हैं। इसके धनात्मक वर्गमूल को मानक विचलन कहा जाता है। यह बात यहाँ अवश्य ध्यान में रखनी चाहिए कि जहाँ माध्य-विचलन के निकालने में विचलन के ऋणात्मक चिह्नों की उपेक्षा की गई थी वहाँ उसी प्रभाव को विचलनों के वर्ग द्वारा प्राप्त किया जाता है।

अवर्गीकृत आँकड़ों के लिए

मानक विचलन $(\sigma) = \sqrt{\frac{\Sigma(X-\bar{X})^2}{N}}$

उपरोक्त सूत्र कुछ कठिन प्रतीत होगा यदि X का मान दशमलव अंकों में हो और दूसरे यदि प्रेक्षणों की संख्या बहुत अधिक हो। तब हम निम्नलिखित लघुविधि का प्रयोग कर सकते हैं :

$$\sqrt{\frac{\Sigma X^2}{N} - \left(\frac{\Sigma X}{N}\right)^2}$$

उदाहरण :

नीचे दी गई जोधपुर और बीकानेर की दस वर्षों की औसत वर्षा का मानक विचलन ज्ञात करिए।

जिला **वर्षा इंचों में**

बीकानेर (X) 6·4, 27·4, 8·1, 16·1, 19·0, 7·0, 10·2, 4·7, 1·4 व 18·9

जोधपुर (Y) 8·7, 14·6, 25·1, 30·6, 22·7, 9·4, 15·0, 15·3, 9·0 व 11·3

माध्य और मानक विचलन की परिगणना

बीकानेर				जोधपुर		
वर्ष	वर्षा (X)	$X-\bar{X}$	$(X-\bar{X})^2$	वर्षा (Y)	$Y-\bar{Y}$	$(Y-\bar{Y})^2$
1	6·4	6·62	43·82	8·7	—7·47	55·80
2	27·4	14·38	206·78	14·6	—1·57	2·47
3	8·1	4·92	24·21	25·1	8·93	79·75
4	16 1	3·08	9·48	30 6	14·43	208·22
5	19·0	5·98	35·76	22·7	6·53	42 64
6	7·2	—5·82	33·87	9·4	—6·77	45·83
7	10·0	—3·02	9·12	15·0	—1·17	1·37
8	4·7	—8·32	69·22	15·3	—0·87	0·76
9	12·4	—0·62	0·38	9·0	—7·17	51·41
10	18·9	5·88	34·57	11·3	—4·87	23·72
	130·20		467·22	161·70		511·97

माध्य $X = \frac{\Sigma X}{N} = \frac{130{\cdot}2}{10} = 13.02$

मा० वि० $= \sqrt{\frac{\Sigma(X-\bar{X})^2}{N}} = \sqrt{\frac{467{\cdot}22}{10}}$

$= \sqrt{46{\cdot}722} = 6{\cdot}83$ इंच

माध्य $Y = \frac{\Sigma Y}{N} = \frac{161.7}{10} = 16{\cdot}17$

मा० वि० $= \sqrt{\frac{\Sigma(Y-\bar{Y})^2}{N}} = \sqrt{\frac{511{\cdot}97}{10}}$

$\sqrt{51{\cdot}197} = 7{\cdot}16$ इंच

	बीकानेर	जोधपुर
वर्षा का मानक विचलन	6·83 इंच	7·16 इंच
वर्षा का औसत	13·02 इंच	16·17 इंच

इससे यह ज्ञात हुआ कि जोधपुर में मानक विचलन का मान 7 16 इंच है जो बीकानेर के मानक विचलन मान 6·83 इंच से अधिक है।

इस पुस्तक के आलेखीय निरूपण वाले भाग में बहुत प्रकार के बारंबारता वक्रों की व्याख्या की गई है। उन बारंबारता वक्रों में से एक घंटी के आकार का सममित वक्र (जिसे प्रसामान्य वक्र कहते हैं) की व्याख्या की गई है। प्रसामान्य वक्र को आँकड़ों में इनकी कुछ महत्वपूर्ण विशेषताओं के कारण बड़े व्यापक रूप में प्रयोग किया जाता है। ये विशेषताएँ निम्नलिखित हैं :

(अ) वक्र $\bar{X}$ (या माध्यिका या बहुलक) के मानों के चारों ओर सममित रूप से वितरित होती है।

(ब) एक प्रसामान्य बंटन में, उसके माध्य, माध्यिका और बहुलक समरूप होते हैं।

(स) एक प्रसामान्य बंटन में प्रेक्षणों का बहुत बड़ा भाग माध्य के चारों ओर केन्द्रित रहता है।

$\bar{X} \pm$ मानक विचलन प्रेक्षजों का 68·27% भाग शामिल करता है।

$X \pm 2$ मानक विचलन प्रेक्षणों का 95·45% भाग शामिल करता है।

$X \pm 3$ मानक विचलन प्रेक्षणों का 99·73% भाग शामिल करता है।

(द) प्रसामान्य वक्र के दोनों ओर Xअक्ष से कभी नहीं मिलते, दूसरे शब्दों में वे Xअक्ष पर उप- गामी होते हैं।

प्रसामान्य वक्र की ये विशेषताएँ प्रेक्षकों को चार या छः श्रेणियों में विभाजित करती हैं यदि वे प्रसामान्य रूप से वितरित हों।

कल्पना कीजिए कि प्रसामान्य बंटन का माध्य 50 है और उसका मानक विचलन (S.D.) 7 है, तब तीनों उपरोक्त दिए गए वर्गों की सीमाएँ इस प्रकार होंगी :

$\bar{X} \pm$ मानक विचलन (मा० वि०)

50 —7 से 50+7 अर्थात् 43 से 57

$\bar{X} \pm 2$(मा० वि०)

50—2×7 से 50+2×7 अर्थात् 36 से 64

$\bar{X} \pm 3$मा० वि०

50—3×7 से 50+3×7 अर्थात् 29 से 71

अतः इनको छः वर्गों में इस प्रकार रखा जा सकता है :

$\bar{X}$ से कम—2 मा० वि०	36 से कम
$\bar{X}$ —2 मा० वि० से $\bar{X}$—मा० वि०	36 — 43
$\bar{X}$ — मा० वि० से $\bar{X}$	43 — 50
$\bar{X}$ से $\bar{X}$+मा० वि०	50 — 57
$\bar{X}$ + $\bar{X}$+2मा० वि से मा० वि	57 — 64
$\bar{X}$ +2 मा० वि० और अधिक	64 और अधिक

आपेक्षिक विक्षेपण की माप

हम अब तक विक्षेपण की निरपेक्ष माप के बारे में विचार-विमर्श करते आ रहे हैं। किसी श्रेणी की केन्द्रीय प्रवृत्ति की जानकारी के बिना ये निरपेक्ष माप हमें परिवर्तनशीलता का सही ज्ञान नहीं दे पाते। इसके अतिरिक्त हम विक्षेपण की निरपेक्ष माप अलग-अलग प्रकट किए बिना दो या दो से अधिक बंटनों के बीच तुलना नहीं कर सकते अथवा जब वे एक-सी इकाइयों में भी प्रकट किए जाते हैं तो उनके माध्य बिलकुल भिन्न होते हैं। ऐसी स्थितियों में हमें विक्षेपण की आपेक्षिक माप का प्रयोग करना होगा। आपेक्षिक विक्षेपण की सबसे सामान्य रूप में प्रयोग की जाने वाली माप को विचरण गुणांक कहते हैं।

$$\text{विचरण-गुणांक (वि० गु०)} = \frac{\sigma}{\bar{X}} \times 100$$

आपेक्षिक अस्थिरता को अच्छी तरह समझने के लिए हम बीकानेर और जोधपुर की वर्षा की अस्थिरता के पूर्व उदाहरण पर विचार करेंगे। बीकानेर में औसत वार्षिक वर्षा 13·02 इंच हुई थी। क्योंकि दस वर्ष के समय में वर्षा का औसत प्रतिवर्ष के औसत से भिन्न रहा है, इसकी अस्थिरता की तुलना मानक विचलनों से नहीं की जा सकती। बीकानेर में वर्षा का मानक विचलन 6·83 इंच और जोधपुर में यह 7·16 इंच है। यदि हम विचरण गुणांक द्वारा इन नगरों की अस्थिरता की तुलना उनकी वर्षा के औसत स्तर के सम्बन्ध में करते हैं तो वह इस प्रकार होगी :

	बीकानेर	जोधपुर
वर्षा का मा० विचलन	6·83 इंच	7·16 इंच
वर्षा का औसत	13·02 इंच	16·17 इंच
विचरण गुणांक	$\frac{6.83}{13.02} \times 100 = 52.46$	$\frac{7.16}{16.17} \times 100 = 44.28$

इस प्रकार हम देखते हैं कि विचरण गुणांक जोधपुर की अपेक्षा बीकानेर में अधिक है। इसलिए यह निष्कर्ष निकाला जाता है कि बीकानेर में उसके औसत के संदर्भ में वर्षा की अस्थिरता जोधपुर की अपेक्षा अधिक है। यहाँ यह बात ध्यान में रखना आवश्यक है कि निरपेक्ष अस्थिरता के सम्बन्ध में मानक विचलन ठीक विपरीत दशा का चित्रण करता है।

लोरेंज़ वक्र

बहुधा हमें आय, व्यय, धन, भू-जोत तथा अन्य सम्पत्ति आदि के वितरण में असमानताओं की समस्याओं का अध्ययन करने में रुचि होती है। लोरेंज़ वक्र इन समस्याओं के अध्ययन के लिए अत्यन्त उपयोगी साधन है।

उदाहरण के लिए हम आय वितरण की ही समस्या लेते हैं। यदि एक देश में n प्रतिशत जनसंख्या की राष्ट्रीय आय n प्रतिशत है तो उस देश में आय का वितरण बिलकुल एक समान होगा। इसका अर्थ यह हुआ कि एक प्रतिशत जनसंख्या की कुल आय राष्ट्रीय आय का एक प्रतिशत मिलता है, दो प्रतिशत जनसंख्या की आय कुल आय की दो प्रतिशत तथा दस प्रतिशत जनसंख्या को कुल आय का 10 प्रतिशत भाग प्राप्त होता है, आदि, आदि। हम उनकी जनसंख्या का सम्मिलित प्रतिशत X-अक्ष पर और कुल आय में उनके प्रतिनिधि भाग को Y अक्ष पर करते हैं। ऐसे ग्राफ पर समान बंटन की रेखा 45 अंश की अंकित रेखा होगी। अतः लोरेंज़ वक्र समान बंटन की रेखा से वास्तविक बंटन के विचलन की माप है।

इस बात को और भी स्पष्ट करने के लिए निम्नलिखित उदाहरण पर विचार करिए।

उदाहरण :

भारत में 1961-62 में आकार के आधार पर जोतों का बंटन नीचे दिया गया है। जोतों के आकार-बंटन में असमानता प्रदर्शित करने के लिए एक लोरेंज़ वक्र बनाइए।

जोतों का क्षेत्रफल (हेक्टेयर में)	जोतों की संख्या (दस लाख में)	जोतों का क्षेत्रफल (दस लाख हेक्टेयर में)
1 से कम	19·8	9·2
1-3	18·0	32·1
3-5	6·1	23·0
5-10	4·5	30·6
10-20	1·8	23·1
20 से ऊपर	0·5	15·1
योग	50·7	133·5

स्रोत : नेशनल सेम्पल सर्वे सेवन्टींथ राउंड

क्षेत्रफल के अनुसार जोतों को प्रदर्शित करने वाले लोरेंज़ वक्र के लिए द्वितीय और तृतीय स्तम्भों में कुल

योग के प्रतिशत मानों का दिया जाना अति आवश्यक है। ये प्रतिशत निम्न सारणी में दिए गए हैं और प्रत्येक स्तंभ में उनके संचयी मान निकाले गए हैं। एक स्तम्भ की विभिन्न संचयी बारंबारताओं को X—अक्ष पर दूसरे स्तम्भ के संगत संचयी मानों को Y-अक्ष पर अंकित किया जाता हैं। जब ये क्रमागत बिन्दु मिला दिए जाते हैं तो लोरेंज वक्र बनता है। यह वक्र आगे दिए गए चित्र में दिखाया गया है। (चित्र 58)

जोतों का क्षेत्रफल (हेक्टेयर में)	प्रतिशत जोतों का	प्रतिशत क्षेत्रफल का	संचयी प्रतिशत जोतों का	संचयी प्रतिशत क्षेत्रफल का
1 से कम	39·1	6·9	39·1	6·9
1-3	35 5	24·1	74·6	31·0
3-5	12·0	17·2	86·6	48·2
5-10	8·9	22·9	95·5	71·1
10-20	3·5	17·3	99·0	88·4
20 से अधिक	1·0	11·6	100·0	100·0
	100·0	100·0		

वक्र के दोनों सिरों के बिन्दुओं को भी एक विकीर्ण से मिला दिया जाता है जिससे वह समान बंटन की रेखा को प्रदर्शित करता है।

चित्र—58 लोरेंज वक्र

अवस्थिति-खंड

कभी-कभी हमें देश के विभिन्न भागों में उद्योग अथवा किसी अन्य आर्थिक क्रिया के भौगोलिक वितरण को मापने की आवश्यकता पड़ती है। इसके लिए सम्बन्धित आर्थिक क्रियाओं के आँकड़ों को मानचित्र पर अंकित करना ही पर्याप्त नहीं है। हमारी रुचि उस क्षेत्र में सभी उद्योगों के बीच किसी उद्योग विशेष के आपेक्षिक महत्व की माप करने तथा सम्पूर्ण राष्ट्रीय स्तर पर उसके मान के साथ तुलना करने में होती है। इस प्रकार की माप को अवस्थिति-खंड कहते हैं।

अवस्थिति-खंड को निम्नलिखित सूत्र के आधार पर निकाला जाता है। कल्पना करें कि M क्षेत्र के चीनी उद्योग में लगे श्रमिकों की संख्या Ws है और Wi, M क्षेत्र के सभी उद्योगों में लगे श्रमिकों की संख्या है।
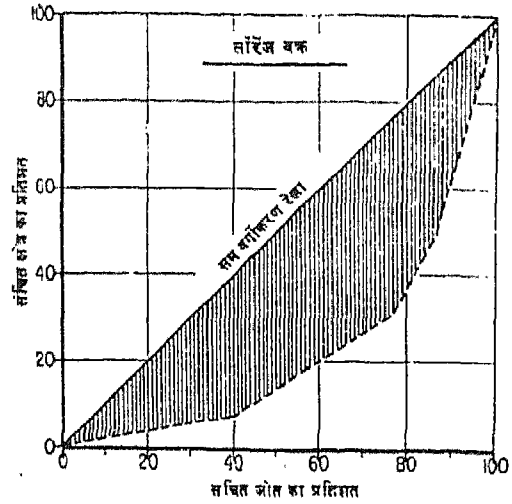
Ns सम्पूर्ण देश के चीनी उद्योग में लगे श्रमिकों की संख्या है।

Ni सम्पूर्ण देश के सभी उद्योगों में लगे श्रमिकों की संख्या है।

तो M क्षेत्र का अवस्थिति खंड

$$L.Q.M. = \frac{\frac{Ws}{Wi}}{\frac{Ns}{Ni}}$$ होगा

इस प्रकार निकाले गए किसी देश के सभी क्षेत्रों के अवस्थिति खंड के मान देश के विभिन्न भागों में उद्योगों के वितरण तथा उनके संकेन्द्रण के प्रतिरूपों की माप के लिए मानचित्र पर दिखाए जा सकते हैं। इसमें एक क्षेत्र के किन्हीं विशेष लक्षणों के अनुपात और वहाँ अर्थात् सम्पूर्ण देश के कुल लक्षणों के बीच अनुपात को दिखाते हैं। यदि किसी क्षेत्र के अनुपात का मान राष्ट्र के अनुपात के मान अर्थात् अवस्थिति खंड की तुलना में एक से अधिक है तो वह क्षेत्र में संकेन्द्रण को प्रदर्शित करेगा। यदि अनुपात इकाई के बराबर है तो वह न संकेन्द्रण प्रदर्शित करेगा और न विक्षेपण। यदि दूसरी ओर इस अनुपात का मान एक से कम आता है तो वह उस क्षेत्र में उस विशेष लक्षण का विक्षेपण दिखाएगा।

अवस्थिति-खंड की व्याख्या करते समय निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखना चाहिए :

(1) ये अनुपातों के अनुपात हैं इसलिए ये बिना किसी इकाई के साधारण अंक हैं।

(2) क्योंकि अ० खं० (L.Q.) किसी इकाई में में नहीं होते इसलिए वे तुलना करने के योग्य होते हैं।

(3) अ० खं० (L.Q.) का लाभ यह है कि इसके लिए बहुत विस्तृत आँकड़ों की आवश्यकता नहीं होती और यह सरलता से समझ में आ जाता है।

अवस्थिति-खंड का प्रयोग कुल जनसंख्या के सम्बन्ध में जनसंख्या के किसी उपवर्ग का संकेन्द्रण मापने के लिए भी किया जा सकता है। अवस्थिति-खंड का परिकलन असम, मेघालय व मिजोराम के जिलों की जातियों व जनजातियों की जनसंख्या और उनकी कुल जनसंख्या के अनुपात के आँकड़े लेकर निम्नलिखित उदाहरण द्वारा स्पष्ट किया गया है।

उदाहरण :

1971 में असम, मेघालय तथा मिजोराम के जिलों की कुल जनसंख्या और उनकी अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों की अलग-अलग जनसंख्या नीचे दी जा रही है। इन आँकड़ों से अनुसूचित जातियों व जनजातियों के अपेक्षाकृत अधिक संकेन्द्रण के क्षेत्र मालूम करिए।

जिला	कुल जनसंख्या	अनुसूचित जातियों की जनसंख्या	जनजातियों की जनसंख्या
गोलपारा	2225103	120006	308287
कामरूप	2854183	164762	290090
दारंग	1736188	77104	185640
नौगाँव	1680995	167263	125311
शिवसागर	1837389	86120	125311
लखीमपुर	2122719	77789	286300
मिकिर पहाड़ियाँ	379310	9820	210039
उत्तर काचार प०	76047	826	52583
काचार	1713318	208867	15283
मिजो पहाड़ियाँ	332390	82	313299

हल

जिला	कुल जनसंख्या में जनजातियों की संख्या	कुल जनसंख्या में अनुसूचित जातियों की जनसंख्या का प्रतिशत	जनजातियों का अ० खं०	अनुसूचित जातियों का अ० खं०
गोलपारा	13·85	5·39	1·08	0·88
कामरूप	10·44	5·77	0·81	0 95
दारंग	10·69	4·44	0·83	0.73
नौगाँव	7·44	9·95	0.58	1·63
शिवसागर	6·82	4·69	0·53	0·77
लखीमपुर	13·45	3·67	1·05	0·60
मिकिर प०	55·37	2·59	4·31	0·42
उ०काचार प०	59·15	1·22	5·39	0 20
काचार	0·89	12·19	0·07	2·00
मिजो प०	94·26	0·03	7·34	0 004
असम	12·84	6·16		

उपरोक्त सारणी के स्तम्भ दो या तीन में कुल जनसंख्या में जनजातियों व अनुसूचित जातियों के प्रतिशत प्रत्येक जिले के लिए और सम्पूर्ण असम के लिए निकाले गए हैं। अवस्थिति-खंड प्राप्त करने के लिए इन जिलेवार प्रतिशत की संख्याओं को उसी स्तम्भ की सम्पूर्ण क्षेत्र (असम) की कुल प्रतिशत संख्या से भाग करते हैं और परिणाम के मान को सम्बन्धित जिलों के सामने स्तम्भ 4 व 5 में लिख देते हैं।

सभी जिलों के अवस्थिति-खंड के मानों की तुलना करने से ज्ञात होता है कि उत्तरी काचार पहाड़ियाँ, मिजो पहाड़ियाँ और मिकिर पहाड़ियाँ जिलों में अनुसूचित जनजातियों का सबसे अधिक संकेन्द्रण है क्योंकि इन जिलों में अवस्थिति-खंड का मान 1 से बहुत ऊँचा है। गोलपारा और लखीमपुर जिलों में यह बिलकुल संतुलित है। अन्य सभी जिलों में अनुसूचित जनजातियों की जनसंख्या अधिक विक्षेपित है। इन अवस्थिति-खंडों के मानों को जब मानचित्र पर प्रदर्शित किया जाता है तो विचाराधीन लक्षण के क्षैतिजीय-संकेन्द्रण अथवा विक्षेपण का सुन्दर चित्र उपस्थित होता है। नीचे चित्र में मानचित्र पर असम, मेघालय तथा मिजोराम की
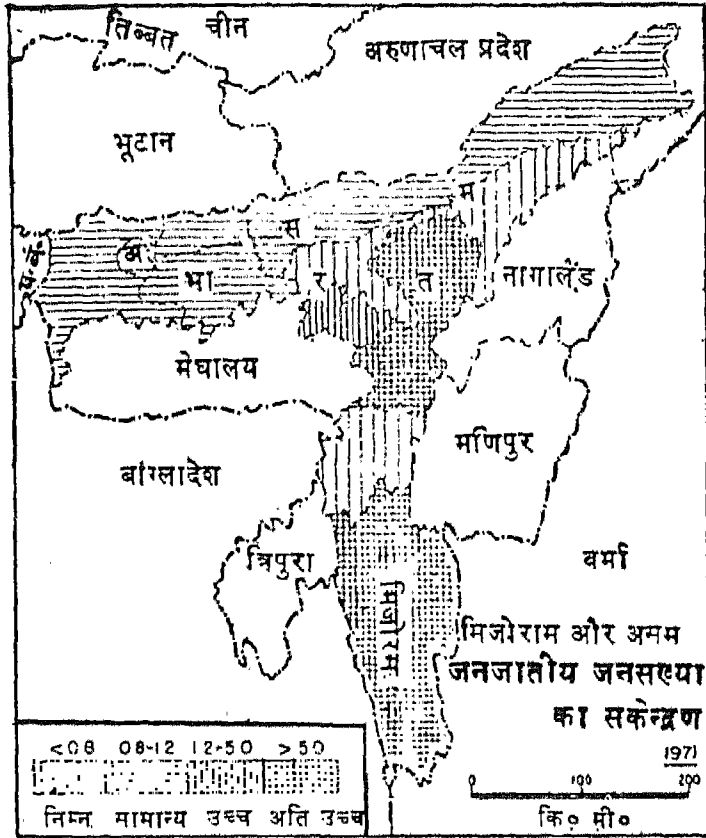
चित्र—59 अवस्थिति-खण्ड—जनजातियों की जनसंख्या का सकेन्द्रण

अनुसूचित जनजातियों के अवस्थिति-खंड को दर्शाया गया है। (चित्र 59)

इसी प्रकार से अनुसूचित जातियों की जनसंख्या काचार और नौगांव को छोड़कर जहाँ इनका उच्च संकेन्द्रण सारे क्षेत्र में अधिक विक्षेपित है (क्योंकि अ० खं० का मान केवल इन दो जिलों में ही इकाई से अधिक है।)

विभिन्न चरों की संयुक्त माप

किसी क्षेत्र के किसी एक चर के मान द्वारा वहाँ के सामाजिक-आर्थिक स्तर की एक विशिष्ट दशाओं की जानकारी मिलती है। परन्तु यह अकेला मान सम्बन्धित दृष्टिकोण को पूर्णरूप से स्पष्ट करने के लिए काफी नहीं होता। उदाहरण के लिए कुल जनसंख्या में नगरीय जनसंख्या का प्रतिशत नागरीकरण की क्षैतिजिक प्रक्रिया को पूरी तरह स्पष्ट नहीं करता। यह नागरीकरण के अन्य पक्षों जैसे, लोगों के व्यावसायिक स्तर, उनकी शिक्षा, क्षेत्र का औद्योगिक आधार और उनके रहन-सहन की दशाओं आदि के बारे में भी प्रकाश डालने में असमर्थ है। अतः नागरीकरण की प्रक्रिया का अध्ययन कई पहलुओं से किया जाना चाहिए क्योंकि उनमें से प्रत्येक पहलू नागरीकरण के बारे में केवल आंशिक जानकारी देता है। इसी प्रकार कृषि के विभिन्न पक्षों जैसे प्रति एकड़ उत्पादन, सिंचाई का स्तर और खादों के प्रयोग आदि में से प्रत्येक पक्ष कृषि-विकास की केवल आंशिक जानकारी देता है।

किसी एक मानचित्र पर बहु-चर आँकड़ों को प्रदर्शित करके और उनसे एक मिला-जुला चित्र निकालना भूगोल-वेत्ताओं का एक महत्वपूर्ण कार्य है। आँकड़ों की प्रकृति एवं अध्ययन के उद्देश्यों के आधार पर इस कार्य को करने की कई विधियाँ हैं। उनमें से सरलतम विधि केन्द्रल की क्रम-विन्यास विधि है जिसको नीचे समझाया गये है :

केन्डल की क्रम-विन्यास विधि[1]

इंग्लैण्ड और वेल्स की कृषीय क्षमता मापते समय प्रसिद्ध सांख्यकीय वेत्ता एम० जी० केन्डल ने काउन्टी के अनुसार विभिन्न फसलों के प्रति एकड़ उत्पादन आँकड़े प्राप्त किए।

इन फसलों की प्रति एकड़ उपज को तब उसके कोटि-क्रमों (रेंक) में बदला गया। फिर इन कोटि-क्रमों को जोड़कर विभिन्न सूबों (काउन्टीज) का उनकी समग्र कृषीय उत्पादकता के आधार पर मिश्रित कोटि-क्रम तैयार किया गया। इस प्रकार यदि j सूबे में i फसल का कोटिक्रम R_{ij} है तो उसकी फसल की उत्पादकता का मिश्रित सूचक I_j होगा और यह निम्नलिखित सूत्र से दिखाया जाता है :

$$I_j = \Sigma R_{ij} \qquad i = 1, 2 \cdots\cdots, n$$

और इसमें n = चयन की गई फसलों की संख्या है। सूबों को फिर कुल क्रमांक के आधार पर क्रम में रखा जाता है।

निम्नलिखित उदाहरण में राजस्थान के जिलेवार आँकड़ों को लेकर कोटि-क्रम विधि द्वारा एक मिश्रित सूचक की रचना-विधि समझाई गई है।

उदाहरण :

राजस्थान के जिलों में पाँच महत्वपूर्ण फसलों का सन् 1970-71 का प्रति हेक्टेयर उत्पादन (मेट्रिक टन में) पृ० 125 पर सारणी में दिया गया है। कोटि-क्रम का प्रयोग करके कृषि-उत्पादकता के मिश्रित सूचक की रचना करिए

हल :

इसमें केन्डल की विधि का प्रयोग करके सभी 26 जिलों की उत्पादकता को प्रत्येक फसल के अन्तर्गत अलग-अलग कोटिक्रम में रखा जाता है। इस प्रकार प्रत्येक जिले में पाँच फसलों के पाँच कोटिक्रम हैं। और सातवें स्तम्भ में इन पाँचों कोटि-क्रमों का योग है। इस कोटि-क्रमों के योग के आधार पर सभी 26 जिलों को आठवें स्तम्भ में मिश्रित कोटि-क्रम में रखा गया है। यह मिश्रित कोटि-क्रम ही प्रत्येक जिले की कृषीय उत्पादकता का सूचक है। पृ० 126 पर दी सारणी में पाँच फसलों में से प्रत्येक के लिए जिलों को प्रति हेक्टेयर पैदवार के अनुसार पाँच बार कोटि-क्रमों में रखा गया है। जिन जिलों में पैदावार सबसे अधिक है, पहली कोटि में रखे गए हैं। उससे कम पैदावार दूसरी कोटि में और फिर इसी प्रकार अन्य जिलों को कोटि-क्रम में रखते जाते हैं।

सहबद्ध कोटि-क्रम की समस्या

कभी-कभी कुछ जिलों में कुछ फसलों की प्रति हेक्टेयर पैदावार एक समान हो सकती है। किसी भी कोटि-क्रम विधि में समान कोटि-क्रम अर्थात् सहबद्ध की समस्या का होना सामान्य बात है। इस कठिनाई को दूर करने की विधि यह है कि उन्हें जो अनुक्रमिक कोटि-क्रम दिए जाने हैं उन सबके औसत-मान के बराबर सभी को एक-सा कोटि-क्रम दिया जाता है। उदाहरण के लिए बीकानेर, सीकर, झुंझुनू और चूरू जिलों में ज्वार की उपज 0·500 है। इससे अगला उच्चमान 0 512 है जिसका कोटि-क्रम सात है। इसलिए 0·500 उपज-मान रखने वाले अगले चार मानों को क्रमागत कोटि-क्रम 8, 9, 10, 11 देंगे। इन चारों कोटि-क्रमों का औसत 9·5 हुआ। अतः चारों उपज-मानों में से प्रत्येक को 9·5 कोटि-क्रम दिया गया है। इससे अगला निम्नतम मान गंगानगर में 0·485 है और इसे 12 की कोटि-क्रम में रखा गया है। अन्य कोटि-क्रम भी इसी प्रकार निकाले गए हैं। यह नियम उन सब जिलों पर लागू होगा जिनकी उपज समान है।

इस प्रकार अन्तिम स्तम्भ में दिया गया मिश्रित कोटि-क्रम इन पाँच फसलों के आधार पर सारे जिलों की समग्र कृषि उत्पादकता को प्रदर्शित करती है। इस अभ्यास के अनुसार जयपुर सबसे अधिक कृषि उत्पादक जिला है क्योंकि इसका मिश्रित कोटि-क्रम का मान सबसे कम या

1. एम-जी० केन्डल : दी ज्याग्राफीकल डिस्ट्रीब्यूशन आफ क्रोप प्रोडक्टिविटी इन इंग्लैंड, जरनल आफ रायल स्टेटिस्टीकल सोसाइटी, 102, 21 (1939)

1970-71 में राजस्थान में प्रति हेक्टेयर पैदावार (मैट्रिक टन में)

जिला	मक्का	बाजरा	ज्वार	जौ	चना
अजमेर	·085	·667	·343	1·378	·551
अलवर	·905	·567	·611	1·640	·991
बाँसवाड़ा	1·309	—	·436	1·545	·053
बाड़मेर	—	·496	·413	1·333	·500
भरतपुर	·001	1·107	·403	1·020	·658
भीलवाड़ा	1·008	·518	·196	1 293	·470
बीकानेर	—	·156	·500	—	1·000
चित्तौड़गढ़	1·801	—	·632	1·577	·482
चूरू	—	·251	.500	—	·418
डूंगरपुर	·868	·005	·434	1·568	·316
गंगानगर	1·307	·951	·405	·756	.692
जयपुर	3·397	·679	·444	1·767	1·248
जैसलमेर	—	·180	·400	—	·666
झालावाड़	1·303	·509	·583	1·500	·406
झुंझुनू	—	·520	·500	1·516	·314
जोधपुर	·001	·527	·292	1·133	·552
कोटा	1·443	·521	·624	1·456	·581
नागौर	1·142	·307	·275	1·204	·554
पाली	·806	·851	·512	1·199	·558
सवाई माधोपुर	·091	·880	·799	1·435	·825
सीकर	—	·480	·500	1·773	·814
सिरोही	1·083	·530	·393	1·950	·553
टोंक	1·004	·668	·355	1·395	·736
उदयपर	1·320	·500	·365	1·284	·775
बूंदी	1·387	·571	·576	1·464	·594
जालौर	2·000	·081	·419	1.190	·558

(—) का अर्थ नगण्य है।

पैदावार कोटिक्रम में (राजस्थान)

जिला	मक्का	बाजरा	ज्वार	जौ	चना	कुल	मिश्रित कोटिक्रम
अजमेर	19	7	23	15	15	79	16
अलवर	14	9	4	5	3	35	3
बाँसवाड़ा	8	25 5	14	8	26	85·5	20
बाड़मेर	23 5	18	17	16	19	93·5	24
भरतपुर	15·5	1	18	23	10	67·5	13
भीलवाडा	12	14	26	17	21	90 0	23
बीकानेर	23·5	23	9·5	25	2	83·0	19
चित्तौड़गढ़	4	25·5	2	6	20	57·5	8
चूरू	23·5	21	9·5	25	22	101·0	26
डूंगरपुर	18	16·5	15	7	24	80·5	18
गंगानगर	9	2	12	4	8	35·0	4
जयपुर	1	5	13	3	1	23·0	1
जैसलमेर	23·5	22	19	25	9	98·5	25
झालावाड़	10	15	5	10	23	63 0	11
झुंझुनू	23 5	13	9·5	9	25	80·0	17
जोधपुर	15·5	11	24	22	17	89·5	22
कोटा	5	12	3	12	2	34·0	2
नागौर	11	20	25	18	15	89·0	21
पाली	20	4	7	19	13·5	63·5	12
सवाई माधोपुर	17	3	1	13	4	38·0	5
सीकर	23·5	19	9·5	2	5	59·0	9
सिरोही	3	10	20	20	16	69 0	14
टोंक	13	6	22	14	7	62·0	10
उदयपुर	7	16·5	21	1	6	51·5	7
बूंदी	6	8	6	11	11	42·0	6
जालौर	2	24	16	21	13·5	76·5	15
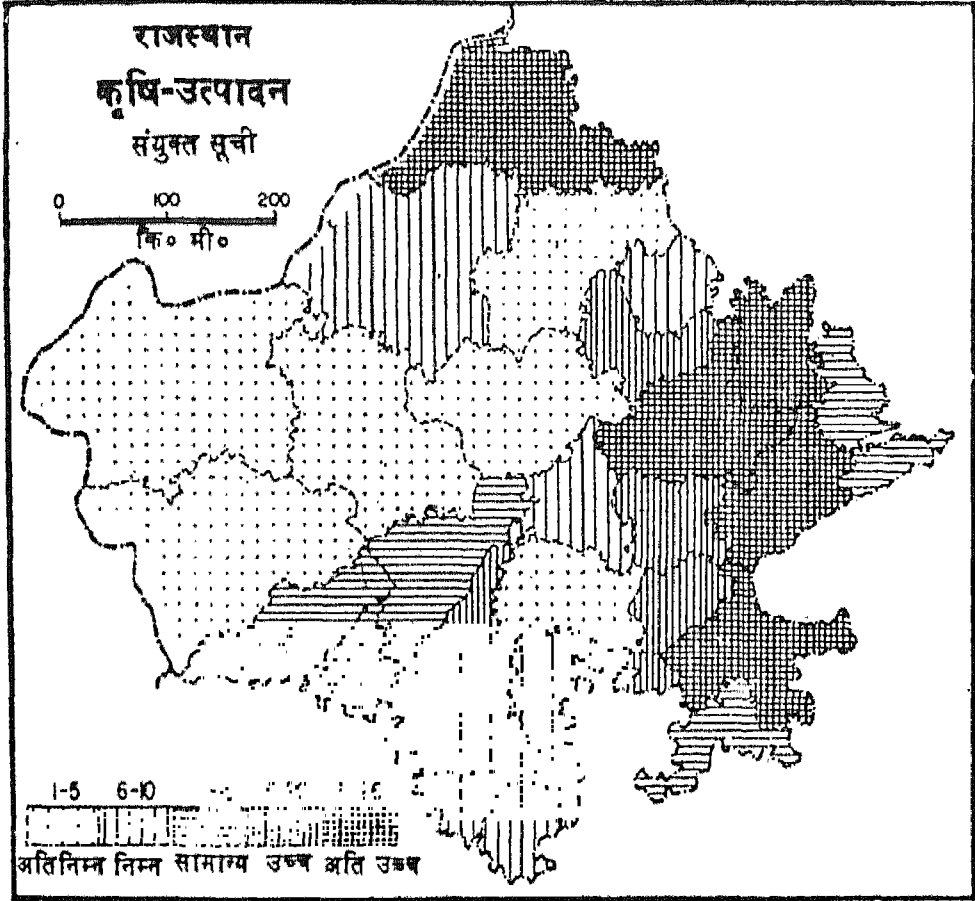
चित्र—60 कृषीय उत्पादकता की संयुक्त सूची

प्रथम स्थान पर है। कोटा इससे अगला कृषि उत्पादक जिला है क्योंकि इसका मिश्रित कोटि-क्रम उससे कम है। इसके बाद अलवर, गंगानगर आदि आते हैं। उत्पादकता के आधार पर ऊपर दी गयी प्रमुख पाँच फसलों में सबसे कम कृषीय उत्पादकता का जिला चुरू है जिसका मिश्रित कोटि-क्रम 26 है।

कोटि-क्रम विधि के बहुत सरल होने के बावजूद इसमें कुछ गम्भीर कमियाँ भी हैं। जब हम जिलों को उनकी फसल की उपज के आधार पर कोटि-क्रम में रखते हैं तो निरपेक्ष अन्तरों को दृष्टि में नहीं लाते। उदाहरणार्थ माना कि एक फसल की पैदावार का उच्चतम मान 0·95 है उसके बादका उच्चतम मान 0·94 है और तीसरा उच्चतम मान 0·70 है। हम उन्हें 1, 2, 3, के कोटि-क्रमों में रखेंगे। इस प्रकार पहले दो जिलों के बीच 0·05 इकाइयों का अन्तर एक कोटि-क्रम बढ़ा देता है जबकि दूसरे और तीसरे के बीच में 0·20 इकाइयों का अन्तर होने पर भी एक ही कोटिक्रम बढ़ता है।

इस विधि का एक और बहुत बड़ा दोष यह है कि सारी फसलों के कोटि-क्रमों को, उनके क्षेत्र-अनुपात का विचार किए बिना ही एक समान महत्व दिया जाता है।

सूचकांक

हम भौगोलिक भूदृश्य बनाने वाली किन्हीं दो लक्षणों के बीच सहसम्बन्ध को सूचकांक के प्रयोग द्वारा आलेखी रूप में माप सकते हैं। उदाहरणार्थ हम भारत में किसी विशेष अवधि में जनसंख्या की वृद्धि और अकृषीय कार्यों की वृद्धि के बीच का सहसम्बन्ध जानना चाहते हैं। इसके लिए हमें सूचकांक की विधि अपनानी होगी। सूचकांक काल-श्रृंखला में एक ऐसा शब्द है जिसे आपेक्षिक संख्या के रूप में व्यक्त किया जाता है। नीचे की सारणी में 1920 से 1964 तक जनसंख्या और अकृषीय रोजगारों से सम्बन्धित आँकड़े दिए गए हैं :

सारणी : कुल जनसंख्या और अकृषीय रोजगारों में लगे व्यक्तियों की कुल संख्या

वर्ष	जनसंख्या (हजार में)	आपेक्षिक सूचकांक (1930=100)	अकृषीय कार्यों में लगे लोगों की संख्या (हजार में)	आपेक्षिक सूचकांक (1930=100)
1920	104466	85	27088	93
1930	123077	100	29143	100
1940	132122	107	32058	110
1050	151683	123	44738	154
1960	179323	146	52898	182
1964	192119	155	58188	200

स्रोत : मौरिस एच० यीट्स: एन इन्ट्रोडक्शन टू क्वान्टीटेटिव एनालिसिस इन इकौनामिक ज्योग्राफी, मेकग्रा हिल. न्यूयार्क 1968

उदाहरण के लिए 1960 में अकृषीय व्यवसायों में लगे कुल व्यक्तियों की संख्या 58,188,000 थी और 1930 में यह संख्या 29,143,000 थी। यदि 1930 के वर्ष को आधार मानकर उसे 100 मान दिया जाये तो सूचकांक इस प्रकार निकाला जाता है :

$$\text{सूचकांक} = \frac{58188000}{29,143\,000} \times \frac{100}{1}$$
$$= 190\ 66 = 200$$

संख्याओं को एक काल-श्रेणी में निश्चित आधार के सापेक्ष में प्रदर्शित करने के तीन लाभ हैं। सर्वप्रथम बड़ी संख्याओं को अति छोटा कर दिया जाता है जिससे उनका प्रयोग बहुत आसान हो जाता है। उपरोक्त उदाहरण में 29,143,000 को 100 की संख्या का सूचकांक दिया गया है और इसलिए 58,188,000 संख्या का सूचकांक पहली के सापेक्ष में 200 हो जाता है। ये दोनों सूचकांक प्रयोग करना वास्तव में अति सरल है। दूसरे क्योंकि बड़ी संख्याएँ आसान बना दी जाती हैं, अतः संख्याओं की शृंखलाओं के मध्य तुलना करना और भी सुविधाजनक हो जाता है। तीसरे जब शृंखलाओं को किसी एक आधार-वर्ष के सापेक्ष में सूचकांकों में बदल दिया जाता है तो उनके द्वारा परिवर्तनों के अध्ययन पर महत्व दिया जाता है और इससे संख्याओं के परिमाण का अत्यधिक प्रभाव विलुप्त हो जाता है।

सम्बन्धों की माप

हमारे देश में यह एक साधारण अनुभव है कि कृषि-उत्पादन का स्तर मानसून पर निर्भर करता है। जिस वर्ष वर्षा अच्छी होती है उस वर्ष कृषि उत्पादन भी अधिक होता है और कम वर्षा वाले वर्ष में कम। हम यह भी जानते हैं कि असिंचित खेतों की अपेक्षा सुनिश्चित सिंचाई वाले खतों में प्रति हेक्टेयर उत्पादन अधिक होता है। इस प्रकार के अन्य बहुत से उदाहरण विभिन्न चरों के बीच सम्बन्धों को बताने के लिए दिए जा सकते हैं।

ऊपर दिए उदाहरण दो चरों के बीच सह-सम्बन्धों के हैं। कभी-कभी यह सम्बन्ध तीन या तीन से अधिक चरों के बीच बढ़ाया जा सकता है। उदाहरण के लिए प्रति हेक्टेयर उत्पादकता का सम्बन्ध तीन या तीन से अधिक चरों के बीच बढ़ाया जा सकता है। उदाहरण के लिए प्रति हेक्टेयर उत्पादकता का सम्बन्ध केवल सिंचाई से ही नहीं अपितु बीजों की श्रेष्ठता, खादों और कीटनाशक दवाइयों के प्रयोग आदि से भी हो सकता है।

यहाँ यह बात अच्छी तरह समझ लेनी चाहिए कि दो चरों के बीच केवल सम्बन्ध मात्र के बने रहने का यह अर्थ नहीं कि एक चर की उत्पत्ति दूसरे के कारण है। अधिकांश देशों में जनसंख्या और राष्ट्रीय आय में वृद्धि एक लम्बे समय में होती है। लेकिन इसका यह मतलब बिलकुल नहीं है कि एक निश्चित समय के बीतने से ही आबादी या राष्ट्रीय-आय में वृद्धि होती है। स्पष्ट है कि एक लम्बी अवधि के बीतने के साथ कई अन्य कारक उभरते हैं जो इन दोनों की वृद्धि में योगदान देते हैं।

चरों के बीच सम्बन्धों की तीव्रता और उसके स्वभाव की माप को *सह-सम्बन्ध* कहते हैं और जब यह गुणों के मध्य हो तो इसे *सहचारी* कहते हैं। हम यहाँ केवल साधारण सह-सम्बन्ध की चर्चा अर्थात् दो चरों के मध्य सम्बन्ध तक ही सीमित रहेंगे। उदाहरण के लिए कृषि-उत्पादन एक क्षेत्र से दूसरे में असमान होगा, यदि सिंचाई का स्तर और अन्य प्रभावित करने वाले कारकों में भी विभिन्नता होगी। इस स्थिति में कृषि उत्पादकता आश्रित चर है और सिंचाई तथा अन्य कारक जो इसे प्रभावित करते हैं, स्वतंत्र चर कहे जाते हैं। यदि अन्य सब बातें एक समान रहें तो जिन क्षेत्रों में सिंचाई अधिक है, वहाँ कृषीय उत्पादकता भी अधिक होने की आशा होती है और जिन भागों में सिंचाई की सुविधाएँ कम हैं, उनमें अपेक्षाकृत कृषीय उत्पादकता भी कम होनी चाहिए। ऐसी किसी परिस्थिति में जहाँ आश्रित चर के ऊँचे मान स्वतंत्र चर के ऊँचे मान के साथ प्राप्त होते हैं, तब उन दोनों चरों के बीच धनात्मक सह-सम्बन्ध कहा जाता है।

सिद्धान्त रूप से धनात्मक सह-सम्बन्ध निम्नलिखित चरों में प्राप्त होता है: (1) नागरीकरण व औद्योगीकरण, (2) औद्योगिक उत्पादन और रोजगार तथा (3) अप्रवासन और जनसंख्या की वृद्धि इत्यादि। इसके दूसरी ओर यदि एक चर के उच्चमान दूसरे चर के निम्न मानों के साथ पाए जाएँ तो ऐसे चरों को ऋणात्मक सह-सम्बन्धी चर कहते हैं। ऋणात्मक सह-सम्बन्ध वाले चरों का एक ऐसा उदाहरण होगा: (1) साक्षरता और ग्रामीण जनसंख्या का भाग, (2) प्रति एकड़ कृषि का उत्पादन और सूखापन आदि। यदि दो चरों के मानों में कोई सह-सम्बन्ध नहीं हो तो उनको स्वतंत्र चर कहते हैं।

जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, सह-सम्बन्ध दो चरों के बीच केवल उसकी तीव्रता और स्वभाव की ओर संकेत करता है। यह आवश्यक नहीं है कि सह-सम्बन्ध कार्य-कारण सम्बन्ध भी स्थापित करें जैसा कि जनसंख्या वृद्धि और राष्ट्रीय आय के बीच सह-सम्बन्ध ऊपर दिए उदाहरण में बताया गया है। इस पर भी ऐसे बहुत से प्रमाण मिलते हैं कि चरों के बीच कार्य-कारण सम्बन्ध विद्यमान है परन्तु फिर भी सह-सम्बन्ध यह स्पष्ट नहीं कर सकता कि कौन-सा चर कारण है और कौन-सा प्रभाव। उदाहरण के लिए किसी वस्तु की माँग और उसके मूल्य का सह-सम्बन्ध सामान्यत: लिया जाता है, किन्तु इस सह-सम्बन्ध से यह बात स्पष्ट नहीं हो पाती कि माँग मूल्य पर निर्भर है अथवा मूल्य माँग पर निर्भर है।

इस प्रकार के प्रश्नों के उत्तर सांख्यिकीय द्वारा नहीं प्रदान किया जा सकता है, इसके उत्तर का दायित्व सिद्धान्त पर है। किन्तु जब सिद्धान्त, सैद्धान्तिक अभिग्रहीतों द्वारा कार्यकारण सम्बन्ध की दिशा को स्पष्ट देता है तो उस अवस्था में सांख्यिकीय विधि उसकी जाँच के लिए सहायता प्रदान करती है।

किसी वैज्ञानिक खोज के लिए कारणात्मक सम्बन्ध की पहचान बहुत आवश्यक है। इन कारणात्मक सम्बन्धों की अच्छी जानकारी किसी दिए गए घटक के भावी मार्ग के लिए भविष्यवाणी, प्रभाव और नियंत्रण करने में सहायता करती है। यह नीति-निर्धारण के लिए अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है।

ऊपर दिए उदाहरण में साधारण सह-सम्बन्ध केवल दो या दो से अधिक चरांकों के सम्बन्धों की जानकारी देता है। यह सह-सम्बन्ध किसी प्रकार के कारणात्मक सम्बन्ध का संकेत नहीं देता। फिर भी, बहुत-सी परिस्थितियों में जानने के लिए पहला कार्य दोनों (या अधिक) चरों के बीच यदि कोई सम्बन्ध है, उसे मालूम करना है। यह जानकारी तब दो चरों के बीच कारण और प्रभाव के बारे में किसी सैद्धान्तिक परिकल्पना का सृजन कर सकती है।

किसी भी युगल चरों के मध्य सह-सम्बन्ध की प्रकृति को ग्राफ कागज पर प्रकीर्ण आरेख बनाकर अध्ययन किया जा सकता है, और गणित द्वारा भी सह-सम्बन्ध के गुणांक निकाल कर जाना जा सकता है।

प्रकीर्ण आरेख

किन्हीं दो चरों के मध्य सम्बन्ध देखने के लिए यह एक सरल विधि है। इसमें एक चर के मानों को X-अक्ष और उनके अनुरूप दूसरे चर के मानों को Y-अक्ष पर अंकित करते हैं। इस प्रकार हम प्रत्येक प्रेक्षण को ग्राफ पर एक बिन्दु के रूप में प्रदर्शित कर सकते हैं। ग्राफ पर बिन्दुओं के इस प्रकार बने गुच्छे को प्रकीर्ण आरेख कहते हैं। अगर इन बिन्दुओं का ढाल ऊपर की ओर होता है तो दो चरांकों के बीच धनात्मक सह-सम्बन्ध कहा जाता है, और यदि बिन्दुओं का ढाल नीचे की ओर हो तो ऋणात्मक सह-सम्बन्ध कहते हैं। इन बिन्दुओं का
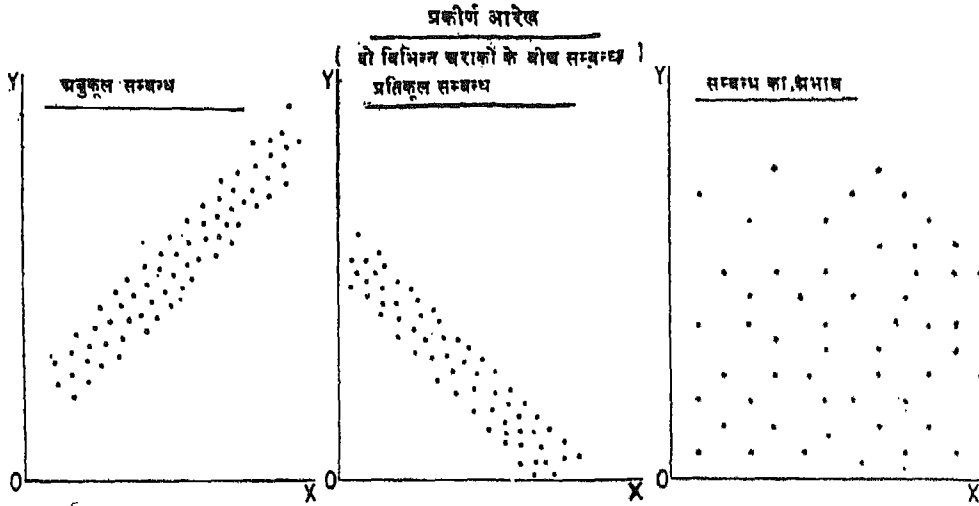
चित्र—61 दो चरों के मध्य सम्बन्ध प्रदर्शित करने वाला प्रकीर्ण आरेख

यदि कोई प्रतिरूप स्पष्ट नहीं होता तो दोनों चरों को स्वतंत्र कहा जाता है। निम्नलिखित चित्र में प्रकीर्ण आरेखों के प्रकार दिखाए गए हैं। इनमें ऊपर दिए गए उदाहरणों को रखकर स्पष्ट किया जा सकता है। इन बिन्दुओं की एक रेखा के निकट स्थिति सम्बन्धों की तीव्रता दिखाती है।

सह-सम्बन्ध गुणांक

प्रकीर्ण आरेख उस समय तक उपयोगी है जब तक यह दो चरांकों के बीच सह-सम्बन्ध की दिशा और तीव्रता की सामान्य जानकारी प्रकट करता है। फिर भी आरेखीय विधि सम्बन्धों की तीव्रता की परिमाणात्मक माप प्रदान करने में असमर्थ होती है। इस कारण हमें कुछ मात्रिक मापों का सहारा लेना पड़ता है। इनमें सबसे सरल है कोटि-क्रम सह-सम्बन्ध का गुणांक[1] अर्थात् Rk जिसे निम्नलिखित सूत्र से प्राप्त कर सकते हैं :

$$R_K = 1 - \frac{6\Sigma d^2}{n^3 - n}$$

यहाँ n प्रेक्षणों की संख्या तथा d दो चरांकों के कोटि-क्रमों का अन्तर है।

यदि Rk का मान ऋणात्मक है तो यह ऋणात्मक सह-सम्बन्ध की उपस्थिति प्रदर्शित करता है और यदि धनात्मक है तो यह दो चरांकों के बीच सह-सम्बन्ध की उपस्थिति बताएगा। Rk का शून्य मान यह दिखाता है कि दो चरांकों के बीच कोई भी सह-सम्बन्ध नहीं है। Rk का अधिकतम मान इकाई है (चाहे धन या ऋण) दूसरे शब्दों में Rk कभी धन एक (+1) से अधिक और ऋण एक (—1) से कम नहीं हो सकता। इस प्रकार शून्य और एक के बीच Rk का मान न्यूनतम से अधिकतम के सह-सम्बन्ध की तीव्रता बताता है।

निम्नलिखित उदाहरण द्वारा उपरोक्त संकल्पना को और अधिक स्पष्ट किया जा सकता है।

उदाहरण

भारत के राज्यों में 1971 की कुल जनसंख्या में साक्षरों का प्रतिशत और कुल जनसंख्या में ग्रामीण जनसंख्या का प्रतिशत नीचे दिया है। इन आँकड़ों को प्रकीर्ण आरेख द्वारा दिखाइए और पद-सह-सम्बन्ध गुणांक निकालिए।

1. कोटि-क्रम सह-सम्बन्ध केवल रेखीय सह-सम्बन्ध की माप करता है अर्थात् एक प्रकीर्ण आरेख द्वारा प्रदर्शित सम्बन्ध जो एक रेखा के आस-पास ही घूमता है।

आँकड़ों को प्रकीर्ण आरेख द्वारा दिखाने के लिए प्रत्येक जिले के मानों में से एक प्रकार के मानों को X अक्ष पर और दूसरे प्रकार के मानों को Y अक्ष पर अंकित किया जाता है। इस प्रकार से मानों को जब ग्राफ पर अंकित कर दिया जाता है तो निम्न प्रकार का प्रकीर्ण आरेख बनता है। प्रकीर्ण आरेख भारत के राज्यों में साक्षरता और ग्रामीण जनसंख्या के बीच एक ऋणात्मक सह-सम्बन्ध सूचित करता है (क्योंकि इसमें बिन्दुओं की ढाल नीचे की ओर है), फिर भी यह सह-सम्बन्ध प्रभावशाली नहीं दिखाई पड़ता क्योंकि ये बिन्दु ठीक एक रेखा पर नहीं पड़ रहे हैं। इस सह-सम्बन्ध की तीव्रता की माप के लिए निम्न प्रकार से एक कोटि-क्रम सह-सम्बन्ध गुणांक निकाला जाता है।
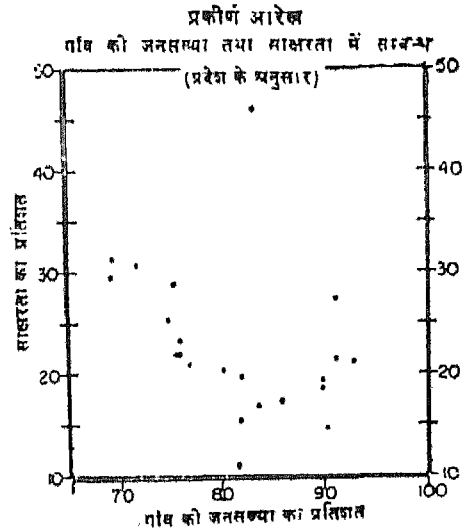
राज्य	कुल जनसंख्या में साक्षरों की जनसंख्या का प्रतिशत	कुल जनसंख्या में ग्रामीण जनसंख्या का प्रतिशत
आन्ध्र प्रदेश	21·19	80·65
असम	27·47	91·61
बिहार	18·40	89·96
गुजरात	30·45	71·87
हरियाणा	19·93	82·22
हिमाचल प्रदेश	21·26	92·94
जम्मू व कश्मीर	11·03	81·74
केरल	46 85	83·72
मध्य प्रदेश	17·13	83·74
महाराष्ट्र	29·82	68·80
कर्नाटक	25·40	75·69
नागालैण्ड	17·91	90·09
उड़ीसा	21·66	91·28
पंजाब	26·74	76·20
राजस्थान	15·21	82·39
तमिलनाडु	31·41	69 72
उत्तर प्रदेश	17·65	86·00
बंगाल	29·28	75·41

चित्र—62 प्रकीर्ण आरेख

सर्वप्रथम साक्षरता के मान और ग्रामीण जनसंख्या के अनुपात कोटि-क्रमों में बदल दिए जाते हैं और ये सारणी में दूसरे तथा तीसरे स्तम्भों में दिए हैं। इन कोटि-क्रमों का अन्तर भी स्तम्भ 4 में दिया है और स्तम्भ 5 में इन अन्तरों के वर्ग दिए हैं। यदि इन कोटिक्रमों के अन्तरों का योग Σd^2 है तो कोटि-क्रम सह-सम्बन्ध गुणांक Rk को निम्नलिखित सूत्र से निकाल सकते हैं :

$$Rk = 1 - \frac{6\Sigma d^2}{n^3 - n}$$

जबकि n प्रेक्षकों की संख्या है

$$\therefore \; Rk = 1 - \frac{6 \times 1388}{18 \times 18 \times 18 - 18}$$

$$= 1 - \frac{8328}{5832 - 18}$$

$$= 1 - \frac{8328}{5814} = 1 - 1{\cdot}43$$

$$= -0{\cdot}43$$

राज्य	प्रतिशत का कोटिक्रम साक्षर जनसंख्या	प्रतिशत का कोटिक्रम ग्रामीण जनसंख्या	कोटिक्रम का अन्तर (d)	d^2
(1)	(2)	(3)	(4)	(5)
आन्ध्र प्रदेश	11	12	—1	1
असम	6	2	—4	16
बिहार	13	5	—8	64

गुजरात	3	16	—13	169
हरियाणा	12	10	2	4
हिमाचल प्रदेश	10	1	9	81
जम्मू और कश्मीर	18	11	7	49
केरल	1	8	—7	49
मध्य प्रदेश	16	7	9	81
महाराष्ट्र	4	18	—14	196
कर्नाटक	8	14	—6	36
नागालैण्ड	14	4	10	100
उड़ीसा	9	3	6	36
पंजाब	7	13	—6	36
राजस्थान	17	9	8	64
तमिलनाडु	2	17	—15	225
उत्तर प्रदेश	15	6	9	81
प० बंगाल	5	15	—10	100
कुल				$d^2 = 1388$

क्योंकि कोटि-क्रम सह-सम्बन्ध गुणांक का चिह्न ऋणात्मक है, अतः साक्षरता और ग्रामीण जनसंख्या के बीच भी सह-सम्बन्ध ऋणात्मक है। अर्थात् जिन जिलों में ग्रामीण जनसंख्या का प्रतिशत ऊँचा है वहाँ साक्षरता कम है।

इसके अतिरिक्त, क्योंकि सह-सम्बन्ध गुणांक का अधिकतम मान एक (धन या ऋण) तक हो सकता है, इसलिए मान 0·43 बहुत तीव्र सह-सम्बन्ध को सूचित नहीं करता। फिर भी यहाँ यह समझ लेना चाहिए कि सह-सम्बन्ध Rk का मान, प्रेक्षकों की कम संख्या की अपेक्षा प्रेक्षकों की अधिक संख्या के आधार पर ज्यादा शुद्ध होता है।

APPENDICES

APPENDIX I

Representative Fractions with their Metric and British Equivalents

Map scale (R. F.)	One centimetre represents	One kilometre represents	One inch represents	One mile represents
1 : 2,000	20 metres	50.0 cm	56 yards	31.68 inches
1 : 5,000	50 metres	20.0 cm	139 yards	12.67 inches
1 : 10,000	0.1 km	10.0 cm	0.158 mile	6.34 inches
1 : 20,000	0.2 km	5.0 cm	0.316 mile	3.17 inches
1 : 24,000	0.24 km	4.17 cm	0.379 mile	2.64 inches
1 : 25,000	0.25 km	4.0 cm	0 395 mile	2.53 inches
1 : 31,680	0.317 km	3.16 cm	0.5 mile	2.0 inches
1 : 50,000	0.5 km	2.0 cm	0.789 mile	1.27 inches
1 : 62,500	0·625 km	1.6 cm	0.986 mile	1.014 inches
1 : 63,360	0.634 km	1.58 cm	1.0 mile	1.0 inch
1 : 75,000	0.75 km	1.33 cm	1.18 miles	0.845 inch
1 : 80,000	0.8 km	1.25 cm	1.26 miles	0.792 inch
1 : 100,000	1.0 km	1.0 cm	1.58 miles	0.634 inch
1 : 125,000	1.25 km	8.0 mm	1.97 miles	0.507 inch
1 : 250,000	2.5 km	4.0 mm	3.95 miles	0.253 inch
1 : 500,000	5.0 km	2.0 mm	7.89 miles	0.127 inch
1 : 1,000,000	10.0 km	1.0 mm	15·78 miles	0.063 inch

APPENDIX II

Important Properties of Some Common Projecitons

Projections and its suitability	Properties
Simple cylindrical (Suitable for mapping area in low latitudes, i.e. equatorial regions.)	1. It is neither equal-area nor orthomorphic. 2. All parallels are equal to the equator and all meridians are half of the equator in length. 3. Parallels and meridians are spaced at equal intervals 4. Parallel scale is correct only along the equator. It gets exaggerated poleward. Meridian scale is correct throughout. 5. The poles are projected as straight lines.
Cylindrical equal-area (Suitable for representing countries adjoining the equator and also used for world distribution maps.)	1. It is equal-area but not orthomorphic. 2. All parallels are spaced unequally, becoming closer towards poles while all meridians are spaced at equal intervals. 3 Parallel scale is correct only along the equator. It gets exaggerated towards north and south. Meridian scale is not correct throughout. It diminishes towards the poles. 4. The poles are projected as straight lines.
Simple conical with one standard parallel. (Suitable for showing regions in mid-latitudes where latitudinal extent may be less than 20°.)	1. It is neither equal-area nor orthomorphic- 2. Parallels are arcs of concentric circles and meridians are straight lines radiating from the centre at uniform angular intervals. 3. Parallel scale is correct only along the standard parallel while to the north and south of it, it is exaggerated. Meridian scale is correct everywhere. 4. The pole is projected as an arc of a circle.
Zenithal equidistant (Suitable for polar regions not exceeding 30° in latitude extent around the pole.)	1. It is neither equal-area nor orthomorphic. 2. Parallels are equidistant concentric circle and meridians are evenly spaced radiating lines from the centre. 3. Every point is at its true distance and in the right direction from the centre, i.e., the pole. 4. Parallel scale is not correct as it increases rapidly away from the centre. Meridian scale is correct throughout.

APPENDIX III

Topographic Maps of the Survey of India

The Survey of India was established in 1767. Besides giving training to many British Surveyors, it has trained Surveyors who are held in high esteem. Since its establishment, this organisation has published topographic sheets in a number of series.

The International series

The Scale of this series is 1:1,000,000. Each sheet extends over 4^0 of latitude and 6^0 of longitude. In this series, the elevation is shown in metres. These sheets are known as 1/m sheets or one to one million sheets.

India and Adjacent countries series

This series forms the base and also the basis of arrangements of all other topographic sheets of India.(Fig. 63). The scale of this series is also 1 : 1,000,000 but the whole country is divided into 4x4 degree sheets. That is, each such map contains 4^0 of latitude and 4^0 of longitude. The Indian maps in this series are numbered as 45, 46, 47...55... and so on.

The maps next in this series are on the scale of 1 : 2,50,000 where 1 centimetre shows 2.5 kilometres. In this series each 4×4 degree sheet is subdivided into 16 equal sheets. Each sheet covers 1^0 of latitude and 1^0 of longitude. These are numbered from A to P, e.g. 55A. 55B, 55C, and 55P (Fig. 63).

Each such sheet is further sub-divided into 16 equal parts covering an extent of 15′ of latitude and longitude. It is equivalent to 1/4th of a degree of latitude and longitude. Thus the degree sheet 55P will have the topographic sheets No. 55P/1, 55P/2, 55P/3, 55P/4 and so on (Fig. 63). The scale of each such sheet is 1 : 50,000 where 1 centimetre shows 0.5 kilometre. The maps drawn on this scale are capable of showing fairly accurate details.

It may also be mentioned that each sheet on 1 : 50,000 scale is sub-divided into four equal parts. These are numbered with respect to their direction from the centre of the degree sheet. For example sheet No. 55A/4 will have 55A/4/N.E., 55A/4/N.W., 55A/4/S.W. and 55A/4/SE. The extent covered in each sheet is 7′ 5″ of the latitude and the longitude (Fig. 64). The scale of each such sheet is 1 : 25,000 where 1 centimetre shows 0.5 kilometre.

The topographic sheets issued by the Survey of India may be had from:

i) The Director, Map Publication, Survey of India Deptt., Hathibarkala, Dehra Dun.

ii) The Deputy Director, Map Publication, Survey of India Deptt., 13, Wood Street, Calcutta-700016.

iii) The Incharge, Map Sales Officer, Survey of India, Janpath Barracks, 'A', First Floor, New Delhi-110001.
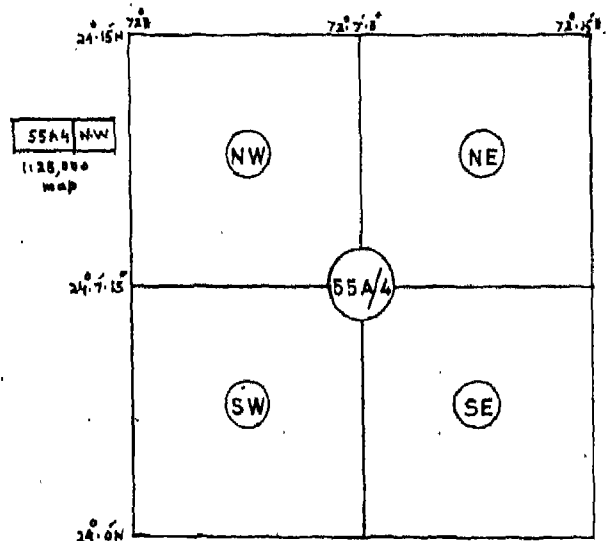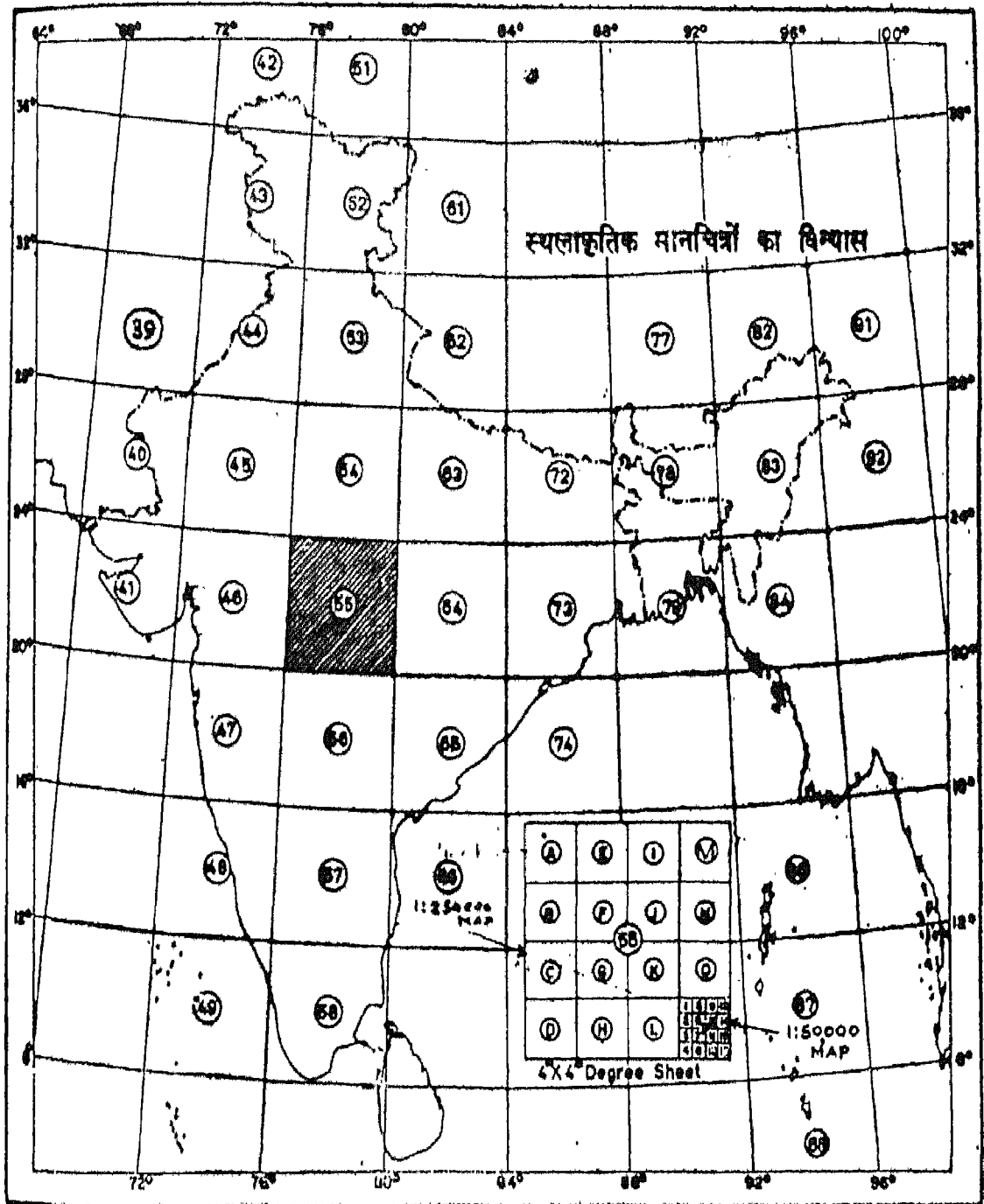
The territorial waters of India extend into the sea to a distance of twelve nautical miles measured from the appropriate base line.

Fig. 63. Reference Map of Topographic Sheets Published by the Survey of India

APPENDIX IV

Altitudes, Pressures and Temperatures

Altitude (metres)	Pressure (millimetres)	Temperatures (°C)	Altitude (metres)	Pressure (millimetres)	Temperature (°C)
−500	806.2	+18.3	6,000	353.8	−24.0
0	760.0	15.0	6,500	330.2	−27.3
500	716.0	11.7	7,000	307.8	−30.5
1,000	674.1	8.5	7,500	286.8	−33.7
1,500	634.2	5.2	8,000	266.9	−37.0
2,000	596.2	+ 2.0	8,500	248.1	−40.3
2,500	560.1	− 1.2	9,000	230.5	−43.5
3,000	525.8	− 4.5	9,500	213.8	−46.7
3,500	493.2	− 7.8	10,000	198.2	−50.3
4,000	462.2	−11.0	10,500	183.4	−53.3
4,500	432.9	−14.2	11,000	169.7	−55.0
5,000	405.1	−17.5	11,500	156.9	−55.0
5,500	378.7	−20.8	12,000	145.0	−55.0

APPENDIX V

Relative Humidity as a Percentage

The ratio between the actual humidity of air and its maximum capacity to hold moisture at a given temperature is known as relative humidity. It is always expressed as a percentage. After taking the dry bulb and wet bulb readings at a given place and time, the relative humidity can be found from the following Table. This Table has been standardised on the basis of many observations and experiments conducted at the normal pressure of 76 centimetres at sea level.

Suppose, for any sample of air at a certain place, the bulb temperature is 90°F and the wet bulb reading is 82°F. The difference between the two is 8°F Now, find out 90°F in the "Dry bulb temperature" column, and 8 in the "Difference in degrees between dry bulb and wet bulb readings" line. At the intersection of 90°F and 8 you get the number 71 which is the relative humidity expressed as a percentage for that instant of time at that place

When dry bulb and wet bulb readings are the same, the relative humidity is 100 per cent, that is the air has reached its saturation point.

Dry bulb temperature in °F	Difference in degrees dry bulb and wet bulb readings													
	1	2	3	4	6	8	10	12	14	16	18	20	25	30
0	67	33	1											
5	73	46	20											
10	78	56	34	13										
15	82	64	46	29										
20	85	70	55	40	12									
25	87	74	62	49	25	1								
30	89	78	67	56	36	16								
35	91	81	72	63	45	27	10							
40	92	83	75	68	52	37	22	7						
45	93	86	78	71	57	44	31	18	6					
50	93	87	80	74	61	49	38	27	16	5				
55	94	88	82	76	65	54	43	33	23	14	5			
60	94	89	83	78	68	58	48	39	30	21	13	5		
65	95	90	85	80	70	61	52	44	35	27	20	12		
70	95	90	86	81	72	64	55	48	40	33	25	19	3	
75	96	91	86	82	74	66	58	51	44	37	30	24	9	
80	96	91	87	83	75	68	61	54	47	41	35	29	15	3
85	96	92	88	84	76	70	63	56	50	44	38	32	20	8
90	96	92	89	85	78	71	65	58	52	47	41	36	24	13
95	96	93	89	86	79	72	66	60	54	49	44	38	27	17
100	96	93	89	86	80	73	68	62	56	51	46	41	30	21
105	97	93	90	87	81	74	69	63	58	53	48	43	33	23
110	97	93	90	87	81	75	70	65	60	55	50	46	36	26

APPENDIX VI

The Beaufort Scale for Estimating Wind Speed

Beaufort number	Wind	Wind speed (km/hr)	Noticeable effect of wind speed
0	Calm	1	Smoke rises vertically.
1	Light air	1—6	Wind direction shown by smoke drift but not by wind vanes.
2	Slight breeze	7—12	Wind felt on face ; leaves rustle ; wind vanes moved by wind.
3	Gentle breeze	13—18	Leaves and twigs in constant motion; wind extends light-flag.
4	Moderate breeze	19—26	Raises dust and loose paper ; small branches are moved.
5	Fresh breeze	27—35	Small trees in leaf begin to sway.
6	Strong breeze	36 —44	Large branches in motion; whistling in telegraph wires ; umbrellas used with difficulty.
7	Moderate gale	45—55	Whole trees in motion ; inconvenience felt when walking against wind.
8	Fresh gale	56—66	Twigs break off ; progress generally impeded.
9	Strong gale	67—77	Slight structural damage occurs ; chimney tops and hanging signs blown away.
10	Whole gale	78—90	Tree uprooted ; considerable structural damage.
11	Storm	91—104	Very rarely experienced ; accompained by wide-spread damage.
12	Hurricane	above 104	Very violent and destructive.

शब्दावली

अनुप्रस्थ परिच्छेद (Cross Section) : किसी सरल रेखा पर ऊर्ध्वाधर कटी हुई भूमि का पार्श्वचित्र। इसे परिच्छेद अथवा परिच्छेदिका भी कहते हैं।

अपवाह (Drainage) : नदियों अथवा सरिताओं का वह तंत्र जो किसी प्रदेश के संपूर्ण वर्षा-जल को बहाकर ले जाता है।

अवस्थिति खंड (Location quotient) : किसी क्षेत्र विशेष के कुछ अभिलक्षकों के प्रतिशत और उन्हीं के पूरे प्रदेश के प्रतिशत के बीच अनुपात को अवस्थिति-खंड कहते हैं।

अक्षांशीय पैमाना (Parallel Scale) : किसी अक्षांश रेखा पर की वह दूरी जो दो देशान्तर रेखाओं के बीच नापी जाए। अक्षांशीय पैमाना मानक अक्षांश रेखा पर सर्वदा शुद्ध रहता है।

आपेक्षिक परिक्षेपण (Reletive Dispersion) : किसी बारंबारता बंटन के परिक्षेपण का माप और उसकी केन्द्रीय प्रवृत्ति की माप के बीच के अनुपात को आपेक्षिक-परिक्षेपण कहते हैं।

आयतचित्र (Histogram) : बारंबारता बंटन, जैसे वर्षा की ऋतु अनुसार बारंबारता का ग्राफीय प्रदर्शन।

उच्चावच (Relief) : पृथ्वी के धरातलीय लक्षण जैसे, पर्वत, पठार, मैदान, घाटी तथा जलाशय के लिए दिया गया सामूहिक नाम। भू-सतह की ऊँचाइयों एवं गर्तों को उच्चावच-लक्षण कहते हैं।

उच्चावच मानचित्र (Relief Map) : समोच्च रेखा, आकृति रेखा, स्तर-रंजन, हैश्यूर, पहाड़ी-छायाकरण जैसी विधियों में से किसी एक अथवा इन विधियों के मिश्रण द्वारा एक समतल धरातल पर किसी क्षेत्र के उच्चावच को निरूपित करने वाला मानचित्र।

एकदिश नौपथ (Rhumb Line) : किसी प्रक्षेप पर सभी देशान्तर रेखाओं को एक ही कोण पर काटने वाली नियत दिगंशीय रेखा।

केन्द्रीय देशान्तर रेखा (Central meridian) : किसी भी मान की देशान्तर रेखा जब प्रक्षेप के केन्द्र या मध्य भाग में स्थित होती है तो इसे केन्द्रीय देशान्तर रेखा या मध्य देशान्तर रेखा कहते हैं। इसका प्रधान मध्याह्न रेखा से कोई संबंध नहीं होता।

केन्द्रीय प्रवृत्ति (Central Tendency) : सांख्यिकीय आँकड़ों की प्रवृत्ति जो किसी मान के आस-पास गुच्छित होती है।

खमध्य प्रक्षेप (Azimuthal Projection) : एक प्रकार का मानचित्र प्रक्षेप जिसमें गोलक के किसी भाग को एक ऐसे समतल पर प्रक्षेपित करते हैं, जो उत्तर अथवा दक्षिण ध्रुव जैसे किसी विशिष्ट बिन्दु पर गोलक को स्पर्श करता है। ये प्रक्षेप यथार्थ दिक्मान प्रक्षेप भी कहे जाते हैं, क्योंकि इन प्रक्षेपों पर खींचे गए मानचित्र के केन्द्र से सभी बिन्दुओं के दिक्मान यथार्थ होते हैं। अंग्रेजी के एजिमुथ शब्द का अर्थ है दिशा या दिगंश।

चक्रारेख (Wheel diagram) : वृत्तीय आरेख जिसमें आँकड़े को प्रतिशत के रूप में प्रदर्शित करने के लिए वृत्त को त्रिज्या-खंडों में विभाजित करते हैं।

चतुर्थक (Quartile) : चतुर्थक चर संस्थाओं के वे मान हैं जो श्रृंखला के पदों को चार बराबर भागों में बाँटते हैं।

चुम्बकीय उत्तर (Magnetic North) : चुंबकीय कंपास की सुई द्वारा निर्देशित दिशा। चुंबकीय उत्तरी ध्रुव यथार्थ उत्तर ध्रुव से भिन्न है और यह समय के साथ धीरे-धीरे खिसकता रहता है।

चर (Variable) : कोई भी अभिलक्षण जो बदलता रहता है। संख्यात्मक चर वह अभिलक्षण है जिसके अलग-अलग मान होते है और उनका अन्तर संख्यात्मक रूप में मापा जा सकता है। उदाहरण के लिए वर्षा एक संख्यात्मक चर है क्योंकि विभिन्न क्षेत्रों अथवा विभिन्न अवधियों में हुई वर्षा के अलग-अलग मानों के अंतरों को मापा जा सकता है। उसके दूसरी ओर गुणात्मक चर वह अभिलक्षण हैं जिसके अलग-अलग मानों को संख्यात्मक रूप में माप नहीं सकते। उदाहरण के लिए सेक्स एक गुणात्मक चर है। यह स्त्री अथवा पुरुष कोई भी हो सकता है। गुणात्मक चर को गुण भी कहा जाता है।

जरीब (Chain) : सर्वेक्षण जरीब दूरी मापने का एक साधन है। इसके द्वारा किसी क्षेत्र में सर्वेक्षण करते समय दो बिन्दुओं के बीच क्षैतिज दूरी नापी जाती है। जरीब विभिन्न लम्बाई के होते हैं, उदाहरणार्थ, प्रत्येक मीटरी जरीब 20 या 30 मीटर लम्बे होते हैं। इंजीनियरी जरीब की लम्बाई 100 फुट और गुंटर जरीब 66 फुट का होता है।

जरीब सर्वेक्षण (Chain Survey) : जरीब और फीते की मदद से क्षैतिज-दूरी नापने की प्रक्रिया। यह विधि अपेक्षाकृत सरल होती है और इसके द्वारा छोटे-छोटे क्षेत्रों के विभिन्न ब्यौरों का मापन काफी हद तक शुद्ध होता है।

जलवायु मानचित्र (Climatic Maps) : संसार अथवा उसके किसी भाग पर किसी विशेष अवधि में विद्यमान तापमान, वायुदाब, वायु, वृष्टि एवं आकाश की सामान्य दशाओं को प्रकट करने वाला मानचित्र।

जल विभाजक (Water Shed) : परस्पर विरोधी दिशाओं में प्रवाहित जल का विभाजन करने वाला पतला एवं ऊँचा स्थलीय भाग।

दंड आलेख (Bar Graph) : स्तंभों या दंडों की एक श्रृंखला जिसमें दंडों की लम्बाई उनके द्वारा प्रदर्शित मात्रा के अनुपात में होती है। ये स्तम्भ या दंड चुने हुए पैमाने के अनुसार खींचे जाते हैं। ये या तो क्षैतिज या ऊर्ध्वाधर रूप में खींचे जा सकते हैं।

देशान्तरीय पैमाना (Meridian Scale) : किसी देशान्तर रेखा पर नापी गई दो अक्षांश रेखाओं के बीच की दूरी।

निर्देश चिह्न (Bench Mark) : स्थाई निर्देश के लिए किसी इमारत अथवा शिला जैसी ऊँची एवं टिकाऊ वस्तु का अंकित किसी विशेष स्थान की वास्तविक ऊँचाई। मानचित्र पर निर्देश चिह्न को B.M. अक्षरों के साथ समुद्र तल से, इस चिह्न की वास्तविक ऊँचाई को अंकित कर प्रदर्शित किया जाता है।' इस पुस्तक में दिए स्थलाकृतिक मानचित्रों में इसे तल चिह्न (तल चि०) से व्यक्त किया गया है।

निर्द्रव वायुदाबमापी (Aneroid Barometer) : एक हलका और आसानी से उठा ले जा सकने वाला यंत्र जिसे साधारणतया वायुदाब नापने में प्रयोग करते हैं। इसमें आंशिक रूप से वायु निकाली गई धातु की एक डिबिया, लचीला ढक्कन, तथा उत्तोलक-नियंत्रित सुई होती है। वायुदाब में जो कुछ भी परिवर्तन होता है वह लचीले एवं सुग्राही ढक्कन की गति से सूचित होता है।

पवनारेख (Wind rose) : किसी स्थान पर किसी अवधि में विभिन्न दिशाओं में बहने वाली वायु की आवृत्ति को प्रकट करने वाला आरेख।

पेंटोग्राफ (Panto graps) : मानचित्रों को शुद्धतापूर्ण बड़ा करने या छोटा करने करने के लिए प्रयोग में आने वाला यंत्र।

प्रकीर्ण आरेख (Scatter diagram) : एक प्रकार का आरेख जिसमें ग्राफ कागज पर दो अभिलक्षकों का विचलन दिखाया जाता है।

प्रवाह मानचित्र (Flow map) : मानचित्र जिनमें 'प्रवाह' अर्थात् लोगों या वस्तुओं का गमनागमन रिबनों द्वारा प्रदर्शित किया जाता है। इन रिबनों की मोटाई उनके द्वारा प्रदर्शित विभिन्न मार्गों पर आने-जाने वाली वस्तुओं की मात्रा या लोगों की संख्या के अनुपात में होती है।

बहुलक (Mode) : किसी श्रेणी में बहुलक चरांक का वह मान होता है, जो सबसे अधिक बार आता है। दूसरे शब्दों में बहुलक पद का वह मान है जिसकी बारंबारता सबसे अधिक होती है।

बारंबारता बंटन सारणी (Frequency distribution table) : विभिन्न परिसरों में पड़ने वाले चर के विविध मानों के इन परिसरों को वर्ग कहते हैं। और प्रत्येक वर्ग में पड़ने वाले विभिन्न मानों को *बारंबारता* कहते हैं।

बेलनाकार प्रक्षेप (Cylindrical Projection) : प्रक्षेपों का वह वर्ग जिसमें यह कल्पना की जाती है कि एक खोखला बेलन एक विशिष्ट प्रकार से या तो ग्लोब पर लिपटा है या ग्लोब को काटता है। सभी बेलनाकार प्रक्षेप आयत बनाते हैं।

बेलनाकार समक्षेत्र प्रक्षेप (Cylindrical equal area Projection) : अक्षांश रेखाओं के बीच की दूरी को ध्रुवों की ओर क्रमशः घटाते हुए, दो अक्षांश रेखाओं के बीच स्थित कटिबंध का क्षेत्रफल, ग्लोब पर स्थित संगत कटिबंध के क्षेत्रफल के बराबर बनाए जाने वाला एक प्रकार का बेलनाकार प्रक्षेप।

बृहत वृत्त (Great Circle) : पृथ्वी की सतह पर वह काल्पनिक वृत्त जिसका तल पृथ्वी को समद्विभाग करता हुआ उसके केन्द्र से होकर गुजरे। पृथ्वी की सतह पर किन्हीं दो बिन्दुओं के बीच की लघुतम दूरी एक बृहत वृत्त के चाप पर होगी।

भू-कर मानचित्र (Cadastral map) : प्रत्येक खेत एवं भूमि के टुकड़े का विस्तार तथा माप के यथार्थ प्रदर्शनार्थ बहुत बड़े पैमाने पर खीचे गए मानचित्र भू-संपत्ति एवं उस पर लगाए जाने वाले कर निर्धारण के लिए इन मानचित्रों की आवश्यकता पड़ी थी। अतः इनका नाम भी भू-कर मानचित्र पड़ गया।

भूमि उपयोग (Land use) : भूमि की सतह का मानव द्वारा उपयोग। विरल जनसंख्या वाले क्षेत्रों में प्राकृतिक एवं अर्ध-प्राकृतिक वनस्पति से आच्छादित भूमि भी इसके अंतर्गत आ जाती है।

माध्य विचलन (Mean deviation) : किसी केन्द्रीय मान से विचलनों के औसत द्वारा परिक्षेपण की माप। ऐसे विचलनों को निरपेक्ष रूप में लिया जाता है अर्थात् उनके धनात्मक अथवा ऋणात्मक चिह्नों पर ध्यान नहीं दिया जाता। केन्द्रीय मान सामान्यतः माध्यिका या माध्य होता है।

माध्यिका (Median) : जब किसी श्रेणी के पदों के विस्तार को आरोही अथवा अवरोही क्रम में रखा जाता है तो मध्य पद का मान माध्यिका कहलाती है। इससे

स्पष्ट हुआ कि माध्यिका पूर्ण श्रेणी को दो बराबर भागों में बाँटती है और इसमें आधे पदों के मान ऊपर और आधे के नीचे होते हैं।

मानक अक्षांश रेखा (Standard Parallel) : किसी भी प्रक्षेप की वह अक्षांश रेखा जिस पर पैमाना शुद्ध हो।

मानक विचलन (Standard deviation) : विक्षेपण के सर्वनिरपेक्ष मापकों में यह सबसे सामान्य मापक है। यह श्रेणी के समस्त पदों के माध्य से निकाले गए विचलनों के वर्गों के माध्य का धनात्मक वर्गमूल होता है।

मानचित्र (Map) : पृथ्वी के धरातल के छोटे या बड़े किसी क्षेत्र का एक चौरस सतह पर पैमाने के अनुसार रूढ़ निरूपण जैसा कि ठीक ऊपर से देखने पर प्रतीत होता है।

मानचित्र कला (Cartography) : सभी प्रकार के मानचित्र बनाने की कला। इसके अंतर्गत मौलिक सर्वेक्षण से लेकर मानचित्र के अंतिम मुद्रण तक की सभी क्रियाएँ आती हैं।

मानचित्र प्रक्षेप (Map Projection) : अक्षांश एवं देशान्तर रेखाओं के जाल को पृथ्वी की गोलाकार सतह से एक समतल पर स्थानांतरित करने की विधि।

मानचित्रावली (Atlas) : एक पुस्तक के रूप में बँधा हुआ मानचित्रों का संग्रह। प्रायः ये मानचित्र छोटे पैमाने पर बनाए जाते हैं। एटलस शब्द सर्वप्रथम सन् 1595 ई० में मर्केटर के मानचित्रों के संग्रह के आवरण-पृष्ठ पर प्रकाशित हुआ था। इस शब्द की उत्पत्ति और भी प्राचीनतम है, क्योंकि पौराणिक विश्वासों के अनुसार, यह आकाश को सहारा देने वाले एटलस पर्वत से संबंधित है।

मानारेख (Cartogram) : किसी क्षेत्र की मूल आकृति को किसी विशेष उद्देश्य से विकृत कर सांख्यिकीय आँकड़ों का आरेखी विधि से मानचित्र पर प्रदर्शन। यह प्रायः किसी एक की कल्पना को आरेखी ढंग से प्रतिष्ठित करने वाला अति सारगर्भित एवं सरल मानचित्र होता है। यह आधुनिक भूगोल के प्रमुख तथा लोकप्रिय साधनों में से एक है।

मापनी (Scale) : मानचित्र पर किन्हीं दो बिन्दुओं के बीच की दूरी और भूमि पर के उन्हीं बिन्दुओं के बीच की वास्तविक दूरी का अनुपात।

मिश्रित माप (Composite Measurment) : कई अंर्तसहसंबंधित चरांकों के व्यापक प्रभाव का मापन।

मौसम (Weather) : किसी स्थान तथा समय विशेष पर वायुदाब, तापमान, आर्द्रता, वर्षण, मेघाच्छन्नता तथा वायु की दृष्टि से वायुमंडल की दशा। ये घटक मौसम के अवयव कहे जाते हैं।

मौसम का पूर्वानुमान (Weather forecast) : किसी क्षेत्र में आगामी 12 से 48 घंटों तक के बीच की मौसम की दशाओं का लगभग सही अनुमान।

यथाकृतिक प्रक्षेप (Orthomorphic Projection) : एक प्रकार का प्रक्षेप जिसमें पृथ्वी के धरातल के किसी क्षेत्र की यथार्थ आकृति बनाए रखने की यथासंभव सभी सतर्कताएँ रखी जाती हैं। इसीलिए इसे *शुद्धाकृतिक प्रक्षेप* भी कहते हैं।

रेखीय मापनी (Linear Scale) : रेखा द्वारा मापनी प्रदर्शन करने की एक विधि जिसमें रेखा को सुविधानुसार प्रधान तथा द्वितीयक भागों में बाँटा जाता है और जिससे मानचित्र पर दूरियाँ सीधे नापी और पढ़ी जा सकती हैं।

रैखिक आलेख (Line graph) : X अक्ष और Y अक्ष पर दो निर्देशांकों की सहायता से निर्धारित बिन्दु-शृंखला को मिलाने वाली निष्कोण रेखा। इसमें एक चर में परिवर्तन दूसरे चर के निर्देशांक से दिखाया जाता है। इसका उपयोग प्रायः वर्षा, तापमान, जनसंख्या में वृद्धि, उत्पादन इत्यादि से संबंधित आँकड़ों को प्रकट करने में किया जाता है।

लौरेंज वक्र (Lorntz Curve) : अभिलक्षकों के संकेन्द्रण को दिखाने वाली एक ग्राफीय विधि।

वर्ग-अंतराल (Class interval) : किसी बारंबारता बंटन के उपरि-वर्ग और निम्न वर्ग की सीमाओं के बीच का अन्तर वर्ग-अंतराल कहलाता है।

वर्णमापी मानचित्र (Choropleth map) : मानचित्र जिनमें क्षेत्रीय आधार पर मात्राओं को प्रदर्शित किया जाता है। ये मात्राएँ किसी विशिष्ट प्रशासनिक इकाइयों के भीतर प्रति इकाई क्षेत्र के औसत मान होते हैं। जैसे जनसंख्या का घनत्व, कुल जनसंख्या में नागरिक जनसंख्या का प्रतिशत आदि।

वर्षामापी (Rain gauge) : किसी स्थान पर निश्चित अवधि (जैसे 24 घंटे) में हुई वर्षा के शुद्ध मापन के लिए प्रयोग में लाया जाने वाला यंत्र।

वातदिक सूचक (Windvane) : वायु की दिशा ज्ञात करने के लिए प्रयोग में आने वाला यंत्र।

वायुदाब मापी (Barometer) : किसी स्थान एवं समय विशेष पर वायु के पूरे स्तम्भ का भार अर्थात् वायुदाब को मापने वाला यंत्र। फोर्टीन एवं निर्द्रव वायुदाब-मापी इस प्रकार के यंत्र के उदाहरण हैं।

वायुवेग मापी (Anemometer) : वायुवेग मापने वाला यंत्र, इसमें एक वेग-सूचक तथा अर्ध गोलाकार प्यालियाँ लगी होती हैं।

वास्तविक उत्तर (True North) : पृथ्वी के उत्तर ध्रुव द्वारा संकेतित दिशा। इसे *भौगोलिक* उत्तर भी कहते हैं।

विकर्ण मापनी (Diagonal Scale) : रेखीय-मापनी (ग्राफिक स्केल) का विस्तार, जिसमें एक सेंटीमीटर या इंच का अल्पांश भी नापा जा सकता है। यह रेखीय मापनी के गौण भाग से भी छोटा भाग मापने में सहायक होती है।

वितरण मानचित्र (Distribution map) : बिन्दु तथा छायाकरण जैसी विधियों द्वारा विभिन्न भौगोलिक तत्वों एवं उनकी आवृत्ति, प्रबलता तथा घनत्व की अवस्थिति को प्रदर्शित करने वाला मानचित्र। उदाहरणार्थ इन मानचित्रों द्वारा किसी क्षेत्र की उपज, पशु-धन, जनसंख्या, औद्योगिक उत्पादन आदि के वितरण को प्रदर्शित किया जाता है।

विक्षेपण या फैलाव (Dispersion) : किसी चरांक के विभिन्न मानों में आंतरिक विभिन्नताओं की गहनता।

शांकव प्रक्षेप (Conical Projection) : एक प्रकार का प्रक्षेप, जिसमें यह कल्पना की जाती है कि मानचित्र कागज के एक ऐसे खोखले शंकु पर प्रक्षेपित होता है जो ग्लोब को या तो कहीं पर स्पर्श करता है अथवा उसे किसी विशिष्ट तरीके से काटता है।

संचयी बारंबारता (Cumulative frequency) : किसी निश्चित मान से अधिक अथवा कम मानों वाले कई प्रेक्षण।

समकोण दर्शक यंत्र (Optical Square) : जरीब सर्वेक्षण में जरीब से निकटवर्ती वस्तुओं के अंतर्लंब नापने के काम में आने वाला यंत्र।

समक्षेत्र प्रक्षेप (Homolographic Projection) : ऐसा प्रक्षेप जिसमें अक्षांश एवं देशांतर रेखाओं का रेखाजाल इस प्रकार से बनाया जाता है कि मानचित्र पर का प्रत्येक चतुर्भुज क्षेत्रफल में ग्लोब के धरातल पर स्थित संगत चतुर्भुज के ठीक बराबर हो। इसलिए इसे शुद्ध क्षेत्रफल प्रक्षेप भी कहते हैं।

समताप रेखा (Isotherm) : मानचित्र पर खींची गई वह काल्पनिक रेखा जो समुद्रतल के अनुसार समान तापमान वाले स्थानों को मिलती है।

समदाब रेखा (Isobar) : मानचित्र पर खींची गई वह काल्पनिक रेखा जो समुद्रतल के अनुसार समान वायुदाब वाले स्थानों को मिलती है।

समवर्षा रेखा (Isohyet) : मानचित्र पर खींची गई वह काल्पनिक रेखा जो एक निश्चित अवधि में हुई समान वर्षा वाले स्थानों को मिलती हैं।

सममानरेखा-मानचित्र (Isopleth Maps) : मानचित्र जिनमें एक-से मानों या एक समान संख्याओं वाले बिन्दुओं को मिलाने वाली काल्पनिक रेखाएँ अर्थात् सममान रेखाएँ बनी होती हैं, उदाहरणार्थ समताप रेखा मानचित्र।

समोच्च रेखा (Contours) : समुद्रतल के समान ऊँचाई पर स्थित बिन्दुओं को मिलाने वाली काल्पनिक रेखा। इसे समतल रेखा भी कहते हैं।

समोच्च रेखा का अंतर्वेशन (Interpolation of contours) : मानचित्र पर दी गई स्थान की ऊँचाइयों की सहायता से समोच्च रेखाएँ खींचना।

समोच्चरेखीय अंतराल (Contour interval) : दो उत्तरोत्तर समोच्च रेखाओं के बीच का अन्तर। इसे ऊर्ध्वाधर अंतराल भी कहते हैं। यह प्राय: अंग्रेजी के अक्षरों द्वारा लिखा जाता है। किसी भी मानचित्र पर प्राय: इसका मान स्थिर होता है।

सर्वेक्षण (Surveying) : पृथ्वी की सतह पर बिन्दुओं की सापेक्ष स्थिति निर्धारण के लिए प्रेक्षण तथा रैखिक एवं कोणात्मक मापन कला। भूपृष्ठ के किसी भाग की सीमा, विस्तार, स्थिति तथा उच्चावच के निर्धारण में यह लाभदायक होता है।

सर्वेक्षण दंड (Ranging rod) : भूमि में गाड़ने के लिए धात्विक नाल से युक्त, सफेद एवं लाल रंजित लकड़ी का सीधा दंड। सर्वेक्षण दंडों का प्रयोग जरीब सर्वेक्षण, प्लेन टेबुल तथा सर्वेक्षण की अन्य विधियों में होता है।

सर्वेक्षण पट्ट (Plane table) : वह सर्वेक्षण यंत्र जिसकी सहायता से किसी छोटे क्षेत्र का यथाकृति मानचित्र क्षेत्र में ही सन्तोषप्रद ढंग से खींचा तथा पूरा किया जा सकता है। भुजाओं के एक जाल में ब्योरेवार विस्तृत लक्षणों को भरने में भी यह सहायक सिद्ध होता है।

सहसंबंध गुणांक (Correlation Co-efficient) : दो चरांकों के बीच संबंधों की दिशा और गहनता की माप।

स्तर रंजन (Layer Colouring) : मानचित्र पर रंगों की सहायता से उच्चावच दिखाने की एक विधि जो विशेषतया एटलस के मानचित्रों तथा दीवारी मानचित्रों से अपनाई जाती है। रंग-व्यवस्था सर्वत्र समान रूप से मान्य होती है, उदाहरणार्थ, समुद्र के लिए नीले रंग की छटाएँ, निम्न स्थलों के लिए हरा रंग, उच्च भूमि के लिए भूरा रंग तथा अत्यधिक ऊँची भूमि के लिए गुलाबी रंग।

स्थलाकृतिक मानचित्र (Topographic map) : भूसतह के प्राकृतिक एवं मानवकृत ब्योरों को प्रदर्शित करने वाला बड़े पैमाने पर खींचा गया एक छोटे क्षेत्र का मानचित्र। इस मानचित्र पर उच्चावच समोच्च रेखाओं द्वारा प्रकट किया जाता है।

study for the reason that this scale as described by the author is used to assess areas of behaviour that cannot be measured by standardised group screening test. The investigator is justified in using this scale as it touches almost all the important areas of behaviour of pupils, which it is hoped, would throw a light in finding out a few highly significant parameters of behaviour of the learning disabled. As there is no other scale available in India and it is found difficult to develop a fresh scale for the purpose of the present study for want of time and finally the above scale is found to be most appropriate one since it covered mostly the learning and behaviour aspects of pupil, the author is justified in selecting this tool.

Adding to these views of the author, it is found through review of literature, that teacher judgement of behavioural characteristics of children has proved to be a reliable technique for identifying children with learning disabilities and rating scales have been found to be useful instruments (Bryan and Mc Grady, 1972). The Behaviour Rating Scale used in the present study is presented in Appendix V.

DESCRIPTION OF THE SCALE

The scale consists of 24 learning and behavioural characteristics of children. All these characteristics are categorised under five areas.

AREA I : AUDITORY COMPREHENSION AND LISTENING

In this area, the characteristics, (i) ability to follow oral directions, (ii) comprehension of class discussion, (iii) ability to retain auditory information, and (iv) comprehension of word meaning were studied.

AREA II : SPOKEN LANGUAGE

In this area, (i) complete and accurate expression, (ii) vocabulary ability, (iii) ability to recall words, (iv) ability to relate experience and (v) ability to formulate ideas are the characteristics examined.

AREA III : ORIENTATION

This area covers the characteristics, (i) promptness, (ii) spatial orientation, (iii) judgement of relationships, and (iv) learning directions.

AREA IV : BEHAVIOUR

In this area, the characteristics, (i) co-operation, (ii) attention, (iii) ability to organise, (iv) ability to cope with new situations, (v) social acceptance, (vi) acceptance of responsibility, (vii) completion of assignments, and (viii) tactfulness were studied.

AREA V : MOTOR

In this area, (i) general co-ordination, (ii) balance, (iii) ability to manipulate equipment are the characteristics studied.

TRANSLATED VERSION OF THE SCALE

The scale is literally translated into Tamil by experienced teachers and who are experts in languages Tamil and English. 5 copies of the translated version of the scale were given to five judges to examine 1) the appropriate words used, 2) the style of the language, 3) whether the translation is exact. In the light of the reports sent by the judges, slight modifications are made and finally the Tamil version of the scale and the English version of the scale was administered to 20 teachers in the rural area who know English very well on different dates. English version scale was administered after 15 days to the administration of the Tamil version to the same teacher about the same pupil. The reliability co-efficient between Tamil version scale and English version scale was found to be .92, significant at .01 level. A copy of the Tamil version of the scale was presented in Appendix IV and the English version was presented in Appendix V.

ADMINISTRATION OF THE SCALE

The scale is administered to the teacher in-charge of the pupil in order to record her observations (judgements or impressions of the teacher) of the pupil in the above five areas. An important instruction was given to the teacher to rate the scale very carefully as the score obtained finally by the pupil decides the pupil's characteristics.

SCORING KEY

The scale consists of 24 behavioural and learning characteristics. The teacher is asked to judge the characteristics of the pupil carefully and rate him on a 5-point scale. A score of 1 represented the lowest rating of function, a score of 5 represented the highest, and a score of 3 was considered average. All the 24 behavioural categories were to be rated.

Since 5 was the highest possible rating on any one factor, the highest total possible score is 120.

INTERPRETATION OF SCORES

The mean score of children identified as normal was 81, while the mean score of learning disabilities group was 61 (Janet W. Lerner, pp-81).

In the present study, the scale is used to confirm the learning disability of the pupil identified by the three mandatory characteristics. In other words, all the learning disabled pupils should obtain a score less than 61 on the Pupil Behaviour Rating Scale, which confirms firmly the disability. Secondly, the scale is intended to study the characteristics of such pupils in the five areas described above. In the Pilot Study, the mean score of low achievers on this scale was found to be 59. Hence the cases who obtain a score of 59 or less will be regarded as learning disabled in the Indian culture.

4) PUPIL'S PERSONAL DATA SCHEDULE (A PERSONAL DATA)

As stated earlier, children with learning disabilities are a heterogeneous group. The wide range of both degree and type of learning disorders requires a diversity of approaches and of diagnostic techniques. The reason for conducting a diagnosis is to gather pertinent information concerning a specific child in order to plan an educational programme to improve the child's learning. As a matter of fact, the diagnosis is continuous and must be revised and modified as the pupils themselves change through learning. It involves continuous reappraisal. A Personal Data Schedule was developed in this study to collect the case history of each learning disabled child identified. In the present investigation, the data and impressions gained through the case study are integrated with the information obtained through other sources in order to get the full spectrum of the pupil under investigation (Janet W. Lerner, 1976). Lerner (1976) suggested four ways of collecting data : 1) a case history or interview, 2) clinical observation, 3) informal testing, and 4) formal standardised testing. In the present study, case history technique is used besides collecting information that relate to learning with the help of pupil learning and behavioural rating scale. Case history provides a calculative information, insights and clues about

the pupil's background and development. Lerner suggested a few items to be explored through case history study, namely, child's identifying information, birth history, physical and developmental data, social, personal and educational factors. All these factors were included carefully incorporated in the Pupil's Personal Data Schedule developed by the author specially for the present study.

The Junior Research Fellows were instructed to be very skillful to collect the data using the above schedule. They were asked to convey a spirit of co-operation and acceptance to guard against any excessive emotional involvement of the subject interviewed. The subjects were the parents of the identified learning disabled children. The investigators were also asked to gather information in a smooth and conversational manner to collect authentic information. The principal investigator himself collected data personally in a few cases. The objective of collecting the information mainly is to integrate the information collected by this technique with that of the data obtained through Pupil Behavioural Rating Scale to arrive at certain significant parameters that would establish learning disability. Care is taken not to prepare a lengthy schedule, but at the same, due attention is paid to collect enough information.

PILOT STUDY

Before administering the schedule in the main study, it was administered to twelve parents in different schools in the Panchayat Union to find out 1) whether parents find it easy to answer the items, 2) whether the investigators find any difficulty in collecting the information through the items framed in the schedule, 3) whether to delete any items which do not give any reliable and meaningful information.

Excepting one or two minor items, it was found that the rest of the items were good enough and the investigator finally prepared the schedule as presented in Appendix VI.

impediments. Thus it was found that [illegible] the sample chosen for the study were [illegible] sensory acuity and were not suffering [illegible] impairments with an exception of [illegible] sample. Having satisfied with this [illegible] then proceeded to follow Step 2, i.e., [illegible] Intelligence Test.

STEP 2 : ADMINISTRATION OF [illegible]

Raven's Coloured Progressive Matrices [illegible] administered to the sample of 923 [illegible] belonging to Chittalapakkam Panchayat Union of [illegible] District, Tamil Nadu State to study their intellectual ability. A detailed sampling distribution is [illegible] Table 1 (Chapter III).

The frequency distribution of Intelligence Test scores obtained by 923 pupils is presented in Table [illegible].

On the basis of the scores obtained by the pupils on Coloured Raven's Progressive Matrices Test, the pupils were classified into five grades on their intellectual ability as described in the manual of Raven's Progressive Matrices Test but strictly following the norms developed for the purpose of the present study (Chapter III). An account of the percentage of pupils falling under each grade is presented in Table 12.

sample found to be intellectually [illegible] and above, the Achievement Test was administered by the Investigator to all the children present at the time of administration. The Test could be conducted to only 720 pupils out of [illegible] as the other children were absent during the [illegible] mentioned earlier. The sample distribution of pupils to whom the Achievement Test was administered is presented in Table 2 (Chapter III). The distribution of [illegible] obtained by 720 pupils is presented in [illegible].

On the basis of the scores obtained by the [illegible] the Achievement Test, the pupils were classified into [illegible] on their academic ability as described in Chapter III. [illegible] account of the percentage of pupils falling under [illegible] is presented in Table 13.

TABLE 13

GRADE-WISE CLASSIFICATION OF PUPILS ON ACHIEVEMENT TEST (N = 720)

GRADE	Interpretation of Grade	No. of Pupils	Percentage of pupils falling under the Grade
GRADE I	Superior in Academic Achievement	73	10.2
GRADE II	Definitely above average in academic achievement	5	0.7
GRADE III	Average in Academic Achievement	275	38.1
GRADE IV	Definitely below average in Academic Achievement	297	41.3
GRADE V	Academically defective	70	9.7
		720	100.00

No.	NAME OF THE VILLAGE	BOYS	GIRLS
6.	Thiruneermalai	-	8
7.	Thiruvanchery	2	1
8.	Madambakkam	4	1
9.	Uthandi	2	1
10.	Sholinganallur	12	12
11.	Pulidivakkam	16	15
	TOTAL	67	66

It may be noted that in the present study 13.5% of the research pouplation under study were found to be learning disabled. This result concurs with the investigations conducted at the international level (Myklebust and Boshes, 1969, Kirk 1974, National Advisory Committee for Handicapped, 1968).

A variety of estimate of the prevalence of children who suffer from learning disabilities has been made, ranging from 1% to 30% of the research population. Myklebust and Boshes (1969) found 15% of the research population were identified as under achievers. A further study by them and more stringent criteria for identification revealed that approximately one-half of those initially identified fell into the category of learning disabled.

In the present study also a [illegible] method was further used to estimate the hard core cases of the learning disabled. For this purpose, the 133 pupils identified above as under-achievers were examined further with the Pupil Behaviour Rating Scale, which was administered to the teachers in-charge of these 133 pupils. The scale records the teacher's judgement of the behaviour of the child in a measurable fashion. The teachers were asked to rate 24 behavioural characteristics of children by rating them on a 5-point scale. The highest possible score on the scale is 120 and as per the manual ([illegible]) the mean score of normal group of pupils was 81, while the mean score of the learning disabilities group was 61. In the present investigation, a pilot study was conducted on this issue and it was found that the mean score of the learning disabilities group in the Indian culture was 59. The study reveals that all the 133 learning disabled pupils identified initially were confirmed as learning disabled on the Pupil Behaviour Rating Scale. It was found that 58 pupils among 133 scored less than 59 on the scale. Out of these 58 pupils, the investigator had chosen the pupils whose scores were least among them. Finally 50 pupils were taken up to study the correlates of learning disabilities. Data related to these 50 hard-core cases of learning disabled pupils is presented in Table 15.

TABLE 15

DATA RELATED TO 50 HARD-CORE LEARNING DISABLED PUPILS

Name of the Village	Name of the Candidate	INTELLIGENCE			ACHIEVEMENT		PUPIL BEHAVIOUR RATING SCALE	
		Scores	Percentile Point	Remarks	Scores	Percentile Point	Remarks	Scores
CHITTALA-PAKKAM	1) Vinayagam	21	50-75	Above average	56	25th	Definitely below average	59
	2) Krishna Kumar	19	50th	Average	10	Below 25th	,,	59
	3) Ratna Sabapathy	21	50-75	Above average	48	,,	,,	53
THURAI-PAKKAM	4) Vijaya Kumar	15	25-50	Average	13	,,	,,	52
	5) Guruswamy	20	50-75	Above average	13	,,	,,	57
	6) Gajendharan	23	50-75	Above average	22	,,	,,	51
	7) Kalaivani	23	50-75	Above average	14	,,	,,	59
	8) Jyothi Lakshmi	22	50-75	Above average	11	,,	,,	56
	9) R. Anjalai	17	25-50	Average	17	,,	,,	57
MOOVARA-SAMPET	10) Dhanasekhar	18	50th	Average	44	,,	,,	51
PILERKAN-KARANAI	11) S. Babu	19	50th	Average	29	25th	,,	[illegible]
	12) Yovan	22	50-75	Above average	66	,,	,,	[illegible]
	13) D. Sakthivelu	23	50-75	Above average	4[illegible]	,,	,,	5[illegible]
	14) Nagavel	15	25-50	Average	72	,,	,,	51
	15) S.R.M. Lakshmi	20	50-75	Above average	[illegible]	,,	,,	57
	16) Kripa Santha Kumari	16	25-50	Average	[illegible]	,,	,,	5[illegible]

Name of the Village	Name of the Candidate	INTELLIGENCE			ACHIEVEMENT		PUPIL BEHAVIOUR RATING SCALE	
		Scores	Percentile Point	Remarks	Scores	Percentile Point	Remarks	Scores
LAKSHMI-PURAM	17) Gajendran	15	25-50	Average	38	25th	Definitely below average	58
TIRUNEER-MALAI	18) S. Kavitha	15	25-50	Average	33	,,	,,	54
	19) Jyothi	22	50-75	Above average	26	,,	,,	51
	20) Ageraiz	22	50-75	Above average	29	,,	,,	55
TIRUVAN-CHERI	21) Thavaselvi	19	50th	Average	30	,,	,,	58
MADAM-BAKKAM	22) Ezumalai	15	25-50	Average	32	,,	,,	54
	23) Taishankar	16	25-50	Average	33	,,	,,	55
	24) Tyagnar	18	50th	Average	52	,,	,,	[illegible]
	25) Kasinathan	18	50th	Average	9	,,	,,	54
	26) Vijaya Kumari	18	50th	Average	51	,,	,,	[illegible]
UTHANDI	27) Kadir Hussain	15	25-50	Average	[illegible]	,,	,,	52
	28) Rehana Begum	17	25-50	Average	27	,,	,,	52
SHOLINGA-NALLUR	29) D. Sudhakar	15	25-50	Average	11	,,	,,	[illegible]
	30) Ashok Kumar	18	50th	Average	34	,,	,,	[illegible]
	31) R. Sekhar	15	25-50	Average	25	,,	,,	[illegible]
	32) Devasikamani	22	50-75	Above average	30	,,	,,	56

Name of the Village	Name of the Candidate	INTELLIGENCE			ACHIEVEMENT		PUPIL BEHAVIOUR RATING SCALE	
		Scores	Percentile Point	Remarks	Scores	Percentile Point	Remarks	Scores
SHOLINGA-NALLUR	33) Mohana	15	25-50	Average	43	25th	Definitely below average	51
	34) Meenakshi	20	50-75	Above average	26	,,	,,	55
	35) K.V. Nagammal	15	25-50	Average	22	,,	,,	54
	36) V. Rajeswari	17	25-50	Averagg	22	,,	,,	53
PULIDI-VAKKAM	37) Palanivel	18	50th	Average	36	,,	Below, average	56
	38) Kannappan	15	25-50	Average	52	,,	,,	51
	39) Dhanasekher	19	50th	Average	37	,,	,,	52
	40) Sukumar	23	50-75	Above average	53	,,	,,	56
	41) Shanabanthini	16	25-50	Average	61	,,	,,	[illegible]
	42) S.R. Balaji	15	25-50	Average	[illegible]	,,	,,	[illegible]
	43) Visvanathan	20	50-75	Above average	26	,,	,,	[illegible]
	44) Manjula	16	25-50	Average	18	,,	,,	[illegible]
	45) Selvi	17	25-50	Average	34	,,	,,	54
	46) Varalakshmi	16	25-50	Average	[illegible]	,,	,,	[illegible]
	47) [illegible]iselvi	17	25-50	Average	[illegible]	,,	,,	[illegible]
	48) Satya Kumari	16	25-50	Average	18	,,	,,	[illegible]
	49) Vidya Lakshmi	20	50-75	Above average	45	,,	,,	[illegible]
	50) [illegible]	16	25-50	Average	46	,,	,,	[illegible]

VISUAL ACUITY : NORMAL FOR ALL HEARING ACUITY : NORMAL FOR ALL

Finally it may be noted that the prevalence of hard-core cases of the learning disabled in the present population was found to be 6.94% which percentage is in concurrence with the previ-ous findings. The study, with the more stringent criteria for identification revealed that approximately, one-third of those initially identified fell into the category of learning disabled. In a study by Myklebust and Boshes (1969) it was found that with such more stringent criteria for identification, one-half of those initially identified fell into the category of learning disabled.

In the present study, it is surprised to note that both boys and girls are in the same proportion as regards to their learning disabilities. The ratio is found to be 1:1 as it is not so in the case of previous studies. Generally boys were found to be more disabled than girls. In the present study, out of 133 cases, initially found to be learning disabled, there were 67 boys and 66 girls. Later, even among 50 hard-core cases, 26 boys and 24 girls were found to be learning disabled.

CHARACTERISTICS OF LEARNING DISABLED CHILDREN IDENTIFIED IN THE PRESENT STUDY

No single variable or characteristic can describe learning disabled pupils as pointed out by Koppitz (1971).

It is difficult to establish clear cause-effect correlates and these may not always be directly relevant to therapeutic planning. Nevertheless, it is useful to note all the possible causes of the learning problems. It is essential to understand the contributing factors, emotional, psychological and environmental factors. Cluster of factors and characteristics revealed in the diagnosis some times constitute a syndrome that leads to useful analysis and a practical teaching plan (Lerner, 1976). Review of literature points out that one such cluster of organic factors might include soft signs of motor awkwardness, poor performance in motor tests and low scores on sub-tests related to spatial orientation. Another set of correlates (Lerner, 1976) might point to a deficiency of auditory memory, inability to learn phonics and slow language development. Larry A. Faas (1976) listed the most frequently mentioned characteristics, such as, 1) ability level, 2) activity level, 3) attentional problems, 4) motor problems, 5) visual-perceptual problems, 6) auditory perceptual problems, 7) language problems, 8) work habits, 9) social-emotional behavioural problems, and 10) orientation problems.

In 1969, Klanger and Kolson described a group of children whose educational performance was deficient because of a variety of secondary factors. They listed the following parameters: 1) Poor attendance, 2) Poor attitudes, 3) Poor self-concept,

4) Lack of confidence, 5) Low level of [illegible], 6) Lack of study skills, 7) Lack of Basic skills, 8) Poor physical conditions, 9) Poor teaching, and 10) Poor curriculum. They pointed out that it is more appropriate to refer to these children as having educational deficiencies than to call them learning disabled. In 1969, Chalfant and Scheffelin described learning disabled children as ones who have a problem involving deviations in the ability to process information. They possess inefficiencies in the reception analysis, synthesis and symbolic use of information.

In the present study, an attempt is made to study a few characteristics of learning disabled children identified. The data were collected using 1) Pupil's Personal Data Schedule, specially prepared for the study by the investigator, 2) Pupil Behaviour Rating Scale developed by Charles High.

PUPIL'S PERSONAL DATA SCHEDULE

ANALYSIS AND INTERPRETATION OF DATA COLLECTED USING PUPIL'S PERSONAL DATA SCHEDULE

Pupil's Personal Data Schedule (PPDS) was prepared carefully by the present investigator to study whether any of the personal factors of the pupils do have any relation to his learning disability. The schedule covered the area 1) Identifying Information, 2) Birth History, 3) Developmental History, 4) Health History, 5) Educational Factors, and 6) Home Factors.

The data were collected from 133 pupils identified as learning disabled out of which a further intensive study was made on 50 cases using Pupil Behaviour Rating Scale to study the major characteristics that influence learning disability. The Personal Data Schedule was administered to the parents of 133 pupils and collected the data on important issues of the pupils. The information gathered are tabulated in different tables as presented below and the results are discussed and inferences are described on each issue.

THE IDENTIFYING INFORMATION

The data collected under the identifying information of the schedule revealed that the average age of children studying V Standard, who were identified as learning disabled is found to be 11.1 years though the average age of all children in the sample is 9.8 years (Table 16). This shows that pupils of this category would have been repeating the same class twice or thrice. This fact is supported by the information that 95 pupils out of these 133 repeated the same class for more than two or three years (Table 17).

TABLE 16

AVERAGE AGE OF LEARNING DISABLED

AGE GROUP	NO. OF CHILDREN	AVERAGE AGE
9 Years	0	
10 Years	8	
11 Years	58	11.1 Years
12 Years	53	
13 Years	14	
	133	

TABLE 17

CLASSES SKIPPED AND REPEATED BY THE LEARNING DISABLED

SKIPPED THE CLASSES	REPEATED THE CLASSES
NIL	95/133

This shows that nearly one-sixth of the entire sample were found to be 10 to 13 years old, who were learning disabled children. The findings thus reveal the fact that these children were not identified sufficiently earlier as learning disabled which would have caused them to repeat the same class for two or three years (Table 17). It is justified to choose children of 9-12 years age group for the present study as Louise Bates Annes (1968) rightly pointed out that during the early ages, five to ten years old range child's own basic potentials express themselves more clearly and less are overlaid by the secondary effects of experience of success or failure than in older children.

SOCIO-ECONOMIC BACKGROUND

The data collected under the "Identifying Information" of the schedule shows that socio-economic background of pupils was very poor. Majority of fathers had education from V Standard to VIII Standard, and they were found to be skilled and unskilled workers. Their income ranged from Rs.150 - Rs.500 per month. A few mothers were working as coolies to supplement their family income. Ramoji Rao (1976) found that the socio-economic status of pupils was the most important single predictor of academic achievement. He also observed that the correlation remained high even when factors like intelligence and study habits were controlled. Mollenkoff (1956), Coleman (1961), Rita Krishnan (1979), Gupta (1968),

Pavithiram and Feroze (1968) found significant positive relationship between father's income and academic performance. Aaron, Marihal (1960) found that it was the basic difference in Socio-Economic Status that influenced the motives and attitudes and academic achievement of pupils but not the location of one's home--rural or urban. They concluded that rural-urban dichotomy was secondary to the ecomomic and social factors. Minner (1968), Dev Karuna (1962), Singh (1962), Krishnan (1977) observed that socio-economic background has positive relationship with the academic performance of the children.

Montague (1964) found that high socio-economic status children were clearly superior to low socio-economic status children in arithmetic concept test. Siller (1967) reported that high socio-economic status children did better than low socio-economic status children on all tests of conceptual ability. The disadvantaged children are deficient in language development in comparison to those belonging to the privileged group. They have a restricted vocabulary, narrower and simpler syntax and higher threshold for verbal mediation.

Thus it may be concluded that low socio-economic status is one of the basic factors that would have influenced the learning disabilities of the pupils in the present study.

BIRTH ORDER

Among the host of factors that determine the creative achievements of an individual, his birth order and family size appeal to be the important factors. In a study by Vasantha (1978), it was found that the student of First and Second birth orders were significantly superior to the students of other birth orders on the tests of creative thinking. Eisenman and Cherry (1970), Repucca (1971), Srivastava (1978), Jarial (1980) and Conean Helen (1980) found that in comparison to last borns, first borns were significantly more creative. In the present study, third birth order children among the learning disabled occupy I Rank and the first order children occupy third rank. Thus it may be concluded that later born children might experience academic problems when compared with first borns. Contradictory to this finding, Ramana Reddy (1978) found from his longitudinal study of 750, subjects selected from rural and semi-urban areas that the order of birth and the size of family were unrelated to academic achievement. Hence the result of the present study should be accepted with utmost caution. Even in the present study, though there are 32 children of third birth order fall under I Rank, the number of children falling under II Rank and I Rank are almost nearer to this number, which difference may not be significant. Thus it may be concluded in the light of previous findings and the present finding that the birth order is not significantly related to the learning disabilities.

TABLE 18

BIRTH ORDER OF THE LEARNING DISABLED CHILDREN

BIRTH ORDER	NO. OF CHILDREN	RANK
Third	32	I
Second	28	II
First	24	III
Fourth	22	IV
Fifth	16	V
Others	11	VI to IX

BIRTH HISTORY

As regards to their birth history, there are no remarkable points that influenced their low academic performance. During pregnancy, neither mother nor the children suffered from any serious illness or infection. The average B.P. of mothers at the time of delivery was neither high nor low. Only one case was found to be diabetic and the rest were normal. No strong medication was given to the mother, during pregnancy. 130 children out of 133 cases were born normal and none of them were born premature. Thus the birth history of all these 133 pupils show that the birth was normal and none of them had any problems that would have injured their brains or any other physiological condition. 50% of parents married in relation and the other 50% married not in relation.

(c) BIRTH CONDITIONS	YES	NO
i) Normal delivery	131	2
ii) Whether matured	133	-

As regard to other birth conditions, no significant information was there to be considered other than the above information presented in the table.

DEVELOPMENTAL HISTORY

As regards to developmental history of the learning disabled pupils identified in this study, it is interesting to note that none of the parameters examined has any influence on their poor academic performance. Almost all pupils had normal growth and sound physical development. Inspite of possessing such normal developmental history, these children show low academic performance, means, there should be some other versile factors which caused them to be learning disabled. The data related to developmental history is presented in Table 20. The result is in concurence with the previous findings. A child's progress in learning disabled programmes cannot be predicted purely on the basis of a child's developmental history or medical diagnosis (Borther 1969, Dubhaff 1966, Ferichal 1966, Kolling, 1969). The findings of present study and the review of literature reveal that mere developmental history cannot predict the learning disability of a child.

TABLE 20

DEVELOPMENTAL HISTORY

Physical Growth		Teething Structure		Age of Sitting		Age of first words		Age of walking		Speech		Handedness	
N	U	N	U	N	U	N	U	N	U	N	U	L	R
133	-	130	3	133	-	132	1	133	-	132	1	2	131

*N = Normal; U = Unusual; L = Left; R = Right

HEALTH HISTORY

Case studies as reported by Luoise Bates Annes shows that learning disabled children used to have often health problems such as vomiting, stomach-ache, adverse health history, thumb-sucking, night-mares, long history of illness, etc. In another study, the authors observed significant relationship among allergic reactions and hyperactivity and learning disability (Wunderlich, 1973).

Metabolic or biochemical disorders have been statedto be some of the hereditory disorders affecting learning functions.

As pointed earlier, it was also observed that a child's academic progress cannot be predicted purely on the basis of medical diagnosis (Bortner, M and Birch, H.G, 1969, Dubnoff, B. 1966). They also reported that it is impractical and meaningless to group children in special classes on the basis of medical diagnosis.

Gupta (1967) observed that tuition given at home contributed to a reasonable extent the scholastic achievement of pupils. Fraser (1967) reported the correlation to be .[illegible] between parental encouragement and the performance of the subjects. Ranoji Rao (1976), Jenner, [illegible] (1974) found positive correlations between study habits and scholastic achievement. These studies and the studies reported in the earlier chapter throw a light to understand the [illegible] parameters that contribute the scholastic achievement.

In the present study, the majority of the children (74/133, 46/133) were found to have joined the school at the age of five or six. The average age of children at the time of their joining the school is 5.24 years, which shows that these children did not join the school late. Most probably, these children would have been forced to join the schools at appropriate age due to the compulsory elementary education policy of the Government.

In this study, it is found that though 96 pupils, out of 133 (72.7%) showed positive attitude to go to school, about 91.6% of children showed negative attitude towards studies. The reasons for this attitude might be several. Explorations of this area by teachers should be encouraged so that the root cause for this negative attitude may be known.

TABLE 22

ATTITUDE TOWARDS SCHOOL (N = 133)

Positive No. of Pupils	Percentage	Negative No. of Pupils	Percentage
96	72.7	37	27.4

TABLE 23

ATTITUDE TOWARDS STUDIES (N = 133)

Positive	Percentage	Negative	Percentage
11	8.4	1[illegible]	91.[illegible]

The result that the pupils showed positive attitude to go to school is supported by the finding that the frequent absenteeism of these children was only 36%. Thus basically, there needs certain motivation and necessary change in the methods of teaching to promote interest among such children so that they may show positive attitude towards studies.

But one thing is noticed during this investigation. From the Personal Data of the pupils collected, it is observed that almost all children identified as learning disabled did not keep any time schedule regularly for their studies. They did not receive any special help in the form of tuitions or any guidance by teachers after or before school hours. The parents too, with their poor educational background did not bother their children to study or provide any special coaching.

TABLE 24

STUDY HABITS OF LEARNING DISABLED (N = 133)

Time schedule for studies				Special help in studies			
Yes	%	No	%	Yes	%	No	%
5	3.7	128	96.3	6	4.6	127	95.4

Thus it may be noted that the children of this category should be encouraged to cultivate good study habits or should be given special instructions in the subjects in which they are poor so that they might develop positive attitude even towards studies.

HOME FACTORS

Some socio-psychiatrically oriented researchers tend to overstress the effect of the parental discord and domestic conditions including broken homes, drunkenness, physical or mental cruelty and crime on children's reading and writing problems.

The study proved that the home background of the learning disabled children was not so bad. Inspite of having satisfactory home situation, they could not show good academic progress means. There might exist some other factors which directly effect their academic performance, the study of which factors would be attempted at a later stage during the discussion of the results obtained by Pupil's Rating Scale. Table 25 shows the home factors of 133 learning disabled.

TABLE 25

HOME FACTORS OF LEARNING DISABLED CHILDREN (N = 133)

FACTOR	YES	%	NO	%
Foster Home	38	28.5	95	71.5
Broken Home	3	2.2	130	97.8
Unstable Home	2	1.5	131	98.5
Over Expectations	47	35.3	86	64.7
Undue Petting	13	9.7	120	90.3
Authoritarian atmosphere	11	8.2	122	91.8

SUMMARY OF FINDINGS

The results obtained by the use of Pupil's Personal Data Schedule reveal the following observations:

1) The pupils identified as Learning Disabled were not identified sufficiently earlier, as much most of them were repeating the same class.

2) The socio-economic background of the parents of the learning disabled was found to be low.

3) The later born children were found to have encountered academic problems when compared with first born children.

4) As regards to their birth history, there were no any remarkable observations which influenced their low academic performance. Birth history of the learning disabled was found to be normal and satisfactory.

5) Developmental history of the learning disabled pupils was also found to be normal and satisfactory.

6) Health history of these children also was satisfactory and normal.

7) There was no late joining of the school by these children, since all these children were found to have joined the school at the age of five or six.

8) The learning disabled pupils showed positive attitude to go to school. They, thowever, showed negative attitude towards studies.

9) The learning disabled pupils did not keep up any time schedule for their studies at home, which shows that they had poor study habits.

10) The learning disabled children in the present study did not receive any special help or guidance from any one in the matters related to their studies either at home or at school.

11) There was no undue petting by their parents and there was no authoritarian atmosphere in the houses of these children. The home background of the pupils was found to be satisfactory.

The summary of results presented above lead to a meaningful conclusion that a tri-chotomy of variables influence the learning disability basically, which are Pupil-Parent-School related. On the pupil side, it was observed that pupils had poor study habits and showed negative attitude towards studies. As related to parents, it was noticed that the parents belonged to low-socio-economic group as much they could not help much their children to meet their educational needs. The school related variables show that the schools had no facilities for the identification of

learning disabilities earlier and the school authorities could not provide any specialised instruction for the learning disabled children.

As these Pupil-Parent-School related variables appear to be very fundamental in their nature like the basic needs of any human being, the investigator termed them as basic characteristics that influence the learning disability of any child. The following table shows the tri-chotomy of variables which are termed basic characteristics.

TABLE 26

BASIC CHARACTERISTICS

Tri-chotomy of variables influencing the learning disability

NO.	PUPIL RELATED	PARENT RELATED	SCHOOL RELATED
1.	Poor study habits	Low socio-economic status	Lack of facilities to identify learning disabled pupil earlier
2.	Negative attitude towards studies	-	Lack of facilities for specialised instruction for learning disabled

PUPIL BEHAVIOUR RATING SCALE

ANALYSIS AND INTERPRETATION OF DATA COLLECTED ON PUPIL BEHAVIOUR RATING SCALE

An intensive study was made to study further the characteristics of the learning disabled in terms of learning and behaviour in addition to the basic characteristics observed in the study. Out of 133 cases identified as learning disabled in the present study, a study of 50 case studies was undertaken whose scores on the Pupil Behaviour Rating Scale lie between 32 to 59. These children are described as high-risk learning disabled as their scores fall below the score of 61, which score on the scale indicates the learning disability of a pupil.

The Pupil Behaviour Rating Scale was described in detail in Chapter III, which is presented both in English and Tamil versions in Appendix I and Appendix II. The scale, according to the authors was used to assess the areas of learning and behaviour of the learning disabled pupils. Bryan and Mc Grady (1968) pointed out that the teacher judgement of behavioural and learning characteristics has proved to be a reliable technique for identifying children with learning disabilities. Thus the present investigator is justified in using the scale to identify such disabled children but to study their learning and behaviour characteristics. Within the behavioural approach

to teach children with learning problems the concept of observation takes on a very specific meaning. Thus direct and structured observational technique was aimed here to study their characteristics.

The study has high lighted numerous and diversed aspects about the participatory behaviour and learning of the learning disabled children. It would be highly advantageous to discuss and understand such aspects.

As described earlier, the behaviour and learning AREAS rated by the teachers in the PUPIL BEHAVIOUR RATING SCALE were 1) Auditory comprehension and listening, 2) Spoken language, 3) Orientation, 4) Behaviour, and 5) Motor.

In the first area, four aspects of comprehension of language activities are to be evaluated. The four aspects are (i) ability to follow directions, (ii) comprehension of class discussion, (iii) ability to retain orally given information, and (iv) comprehension of word meaning. Each aspect is rated on a five-point scale and each point here is known as the dimension of the aspect.

In the second area, the child's oral speaking abilities are evaluated through five aspects. The aspects are (i) ability to speak in complete sentences using accurate sentence structure, (ii) vocabulary ability, (iii) ability to recall words, (iv) ability to formulate ideas from

isolated facts, and (v) ability to tell stories and relate experiences. Each aspect is rated on a five-point scale, which point here is described as the dimension of the aspect.

The child's awareness of himself in relation to his environment is considered in the four aspects of learning of the third area, which aspects are (i) promptness, (ii) spatial orientation, (iii) judgement of relationships, and (iv) learning directions. Each aspect is rated on a five-point scale, and each point is here noted as the dimension of the aspect.

In the fourth area, the eight aspects of behaviour relate to the child's manner of participation in the class-room. The aspects of this area are, (i) co-operation, (ii) attention, (iii) ability to organise, (iv) ability to cope with the new situations, (v) social acceptance, (vi) acceptance of responsibility, (vii) competition of assignments, and (viii) tactfulness. Each point is rated and is known as the dimension of the aspect.

The final area pertains to the child's balance, general co-ordination and use of hands in class room activities. Three types of motor ability are to be rated: General co-ordination, Balance and Mannual dexterity. Each aspect is rated on a five-point scale and each point is noted as the dimension of the aspect.

CHARACTERISTICS OF THE LEARNING DISABLED

In the present study, the dimension under which 50% or more than 50% of learning disabled fall is considered to be the significant or notable characteristic of the disabled. The results and interpretation of each area of the scale are presented in this Chapter.

AREA I : AUDITORY COMPREHENSION AND LISTENING

As stated above, the area Auditory Comprehension and Listening enables us to evaluate the pupil as to his ability to understand, follow and comprehend spoken language in the class room. The four aspects of the area were evaluated by the teachers on a five-point scale and the percentages of pupils falling under each dimension of the aspect of the area is presented in Table 27. Table 27 (a) and Table 27 (b) show the percentages of boys and girls falling respectively under each dimension of the aspects of the above area.

TABLE 27

AREA I : AUDITORY COMPREHENSION AND LISTENING

Percentages of pupils falling under each dimension of the aspects of the AREA I (Boys & Girls) : No.50

ASPECT OF THE AREA	DIMENSION OF THE ASPECT				
	1	2	3	4	5
(i)	29.2	57.5	10.4	3.0	-
(ii)	27.6	69.2	3.2	-	-
(iii)	33.7	52.1	14.2	-	-
(iv)	26.0	51.0	23.0	-	-

TABLE 27 (a)

AREA I : AUDITORY COMPREHENSION AND LISTENING

Percentages of Boys falling under each dimension of the aspect of the AREA I (BOYS) : No.26

ASPECT OF THE AREA	DIMENSION OF THE ASPECT				
	1	2	3	4	5
(i)	23.8	62.4	12.4	1.4	-
(ii)	14.9	76.7	8.4	-	-
(iii)	28.5	60.2	11.3	-	-
(iv)	21.6	51.4	27.0	-	-

TABLE 27 (b)

AREA I : AUDITORY COMPREHENSION AND LISTENING

Percentages of Girls falling under each dimension of the aspects of the AREA I (GIRLS) : No.24

ASPECT OF THE AREA	DIMENSION OF THE ASPECT				
	1	2	3	4	5
(i)	32.8	54.6	12.6	-	-
(ii)	22.4	62.6	15.0	-	-
(iii)	31.2	54.1	14.7	-	-
(iv)	19.6	53.4	27.0	-	-

ASPECT (i) : ABILITY TO FOLLOW DIRECTIONS

A look at the Table 27 shows that 57.5% of the sample were found to be following simple oral directions, provided individual help is given. If such help is not provided, most probably they may even get confusion in following such directions. The results show that there are 29.2% of such children in this sample. This particular result reveals that once a child is identified as learning disabled, he or she needs indivudal help till they are able to remember and follow directions skilfully by themselves. When the result is further examined sex-wise, it is found that 62.4% of boys and 54.6% of girls belong to this dimension, which shows that there is no any difference on this aspect among boys and girls. Thus we may conclude that learning disabled pupils cannot follow the class room direction unless or otherwise they are given individual help, failing they always get confused or may not be able to follow the directions.

CHARACTERISTIC NO. 1 : Needs individual help to follow and remember the class room directions.

ASPECT (ii) : COMPREHENSION OF CLASS DISCUSSION

Table 27 shows the percentages of pupils falling under each dimension of the above aspect and Table 27 (a) and Table 27 (b) show the percentages sex-wise. From the Tables, it is understood that 69.2% of the pupils, 76.7% of boys and 62.6% of girls fall under the dimension of the aspect

that these children listen to the class but rarely comprehends well the discussions of the class room. The dimension also points out the minds of these children often wanders from discussions. There are even 27.6% of pupils who are always inattentive and sometimes unable to follow and understand the classroom discussions. The result that the minds of the children often wanders from discussions shows that these children also are almost inattentive to the discussions of the class room. Though they appear to be listening to the class room, their minds wander elsewhere reveals that they are physically present but mentally absent. The result is same in the case of both the boys and girls. Hence it may be concluded that the in-attention to class room is a significant characteristic of a learning disabled child.

CHARACTERISTIC NO.2 : In-attentive to the class room discussion.

ASPECT (iii) : ABILITY TO RETAIN ORALLY GIVEN INFORMATION

As regards to this aspect, Table 27 reveals that 52.1% of disabled pupils under study could retain simple ideas and procedure unless they are repeated often. About 33.7% of them had total lack of recall and hence possessed very poor memory. The two groups could also be described as having poor memory power. From this we understand that these children need constant drilling of the contents taught in the class room.

The result is same when viewed through both the boys and girls (60.2% and 54.1%). Thus poor memory could be considered as the most significant characteristic of these children.

CHARACTERISTIC NO.3 : The learning disabled children possess poor memory. They could retain things if repeated often.

ASPECT (iv) : COMPREHENSION OF WORD MEANING

51% of the disabled pupils fall under the second dimension of the aspect which shows that these children fail to grasp even simple word meanings. They are found even to be misunderstanding words. 51.4% of boys and 53.4% of girls also show the same characteristic. The poor grasping power of understanding the simple words might have thus made them to be under-achievers. One cannot be academically good unless he or she understands all grade level vocabulary.

CHARACTERISTIC NO.4 : The learning disabled pupil fails to grasp simple word meanings and misunderstands the words.

AREA II : SPOKEN LANGUAGE

The percentages of learning disabled children falling under each dimension of the aspect of the area are presented in Table 28. Table 28 (a) and Table 28 (b) show the percentages of the disabled falling under each dimension sex-wise.

TABLE 28

AREA II : SPOKEN LANGUAGE

Percentages of pupils falling under each dimension of the aspects of the AREA II (Boys & Girls) : No.50

ASPECT OF THE AREA	DIMENSION OF THE ASPECT				
	1	2	3	4	5
(i)	21.6	55.3	23.7	-	-
(ii)	12.2	54.7	33.1	-	-
(iii)	16.0	52.4	31.6	-	-
(iv)	10.6	49.2	40.2	-	-
(v)	10.6	55.3	34.1	-	-

TABLE 28 (a)

AREA II : SPOKEN LANGUAGE

Percentages of boys falling under each dimension of the aspects of the AREA II (Boys) : No.26

ASPECT OF THE AREA	DIMENSION OF THE ASPECT				
	1	2	3	4	5
(i)	24.2	55.6	20.2	-	-
(ii)	12.1	52.4	35.5	-	-
(iii)	16.2	48.9	34.9	-	-
(iv)	6.2	49.5	44.3	-	-
(v)	8.9	56.2	34.9	-	-

TABLE 28 (b)

AREA II : SPOKEN LANGUAGE

Percentages of Girls falling under each dimension of the aspects of the AREA II (Girls) : No.24

ASPECT OF THE AREA	DIMENSION OF THE ASPECT				
	1	2	3	4	5
(i)	19.9	58.2	21.9	-	-
(ii)	13.6	55.4	31.0	-	-
(iii)	14.8	52.6	32.6	-	-
(iv)	15.4	52.8	21.8	-	-
(v)	10.2	55.8	34.0	-	-

There are five aspects in this area. The child's oral speaking abilities are evaluated through those aspects. As per the authors of the scale, use of language in the class room and ability to use vocabulary and language in story form are basic to this ability.

ASPECT (i) : ABILITY TO SPEAK IN COMPLETE SENTENCES USING ACCURAGE SENTENCE STRUCTURE

Table 28, Table 28 (a) and Table 28 (b) show the percentages of pupils falling under each dimension of the aspect of the Area II. 55.3% of the sample fall under

second dimension, which reveals that these children frequently uses incomeplete sentences. They even commit numerous grammatical mistakes. The result is same when boys and girls are separately considered (Boys : 55.6% and Girls : 58.2%). 24.2% of these pupils were found to be always using incomplete sentences with grammatical errors. The findings show that inability to speak in complete sentences must be another parameter for their disability. One cannot learn anything properly unless he or she could always speak and write in correct sentences without any grammatical mistakes.

CHARACTERISTIC NO. 5 : Inability to speak in complete sentences with correct sentence structure.

ASPECT (ii) : VOCABULARY ABILITY

54.7% of pupils were found to have limited vocabulary including simple nouns. However, 33.1% of these disabled pupils possessed adequate vocabulary for age and grade. When viewed the results in the sex-wise direction, 52.4% of boys and 55.4% of girls were found to have limited vocabulary. It is very important to note the pupils should be trained to possess above average vocabulary when they could use numerous precise descriptive words. Then only they can overcome with the learning problems. Table 28, Table 28 (a) and Table 28 (b) show the percentages of the above pupils falling under the second dimension of the aspect.

CHARACTERISTIC NO. 6 : Possess limited vocabulary.

ASPECT (iii) : ABILITY TO RECALL WORDS

Table 28, Table 28 (a) and Table 28 (b) show that 52.4% of learning disabled pupils, 48.9% boys of the disabled and 52.6% of girls fall under the dimension which describes that these children often gropes for words to express himself. In other words, they search for correct words and hence find it difficult to recall the appropriate words.

CHARACTERISTIC NO. 7 : Gropes for correct words to express himself. In other words, they have inability to recall words to express.

ASPECT (iv) : ABILITY TO FORMULATE IDEAS FROM ISOLATED FACTS

As regards to this aspect, the pupils were found to have difficult in relating isolated facts. Their ideas were incomplete and scattered. However, percentages presented in Table 28 and Table 28 (a) clearly show that good percentages of pupils were also found who could relate facts into meaningful ideas which were adequate for their age and grade. But in the case of girls only 21.8% of them only were found to fall under third dimension. They were found to experience more difficulty in relating isolated facts than the boys. However, it may be accepted in general that these children experience difficulty in bringing forth their ideas in order to relate the facts appropriately.

CHARACTERISTIC NO. 8 : Inability to relate facts appropriately.

ASPECT (v) : ABILITY TO TELL STORIES AND RELATE EXPERIENCES

A pupil capable of telling stories well could relate ideas in a logical and meaningful manner. Such ability helps the pupil to relate the experiences logically and meaningfully. But in the present sample, 55.3% of the identified learning disabled, 56.2% boys of them and 55.8% girls had difficulty in relating ideas in logical sequence. They could not narrate a comprehensive story because of their inability to relate experiences or ideas in a meaningful manner. This is a hindrance to their academic life as one has to be logical and meaningful in presenting matters. A close look at the previous characteristic and this one reveals that these children are incapable of relating facts and ideas appropriately.

CHARACTERISTIC NO. 9 : Inability to relate ideas in a meaningful manner.

AREA III : ORIENTATION

This area explores the child's awareness of himself in relation to his environment. This area, as stated comprises of four aspects. The aspects touch the time concept, knowledge of direction and the concepts of relationships. Very interesting results were obtained. Table 29, Table 29 (a) and Table 29 (b) show the percentages of pupils falling under each dimension of the aspects of the area.

TABLE 29

AREA III : ORIENTATION

Percentages of pupils falling under each dimension of the aspects of the AREA III (Boys & Girls) : No.50

ASPECT OF THE AREA	DIMENSION OF THE ASPECT				
	1	2	3	4	5
(i)	11.1	30.3	58.1	-	-
(ii)	6.1	25.2	68.7	-	-
(iii)	5.0	44.6	50.4	-	-
(iv)	8.4	40.3	51.3	-	-

TABLE 29 (a)

AREA III : ORIENTATION

Percentages of boys falling under each dimension of the aspects of the AREA III (Boys) : No.26

ASPECT OF THE AREA	DIMENSION OF THE ASPECT				
	1	2	3	4	5
(i)	5.4	30.2	64.4	-	-
(ii)	4.8	27.4	67.8	-	-
(iii)	4.6	35.2	60.2	-	-
(iv)	7.1	33.8	59.1	-	-

TABLE 29 (b)

AREA III : ORIENTATION

Percentages of girls falling under each dimension of the aspects of the AREA III (Girls) : No.24

ASPECT OF THE AREA	DIMENSION OF THE ASPECT				
	1	2	3	4	5
(i)	10.6	34.8	54.6	-	-
(ii)	3.2	22.8	74.0	-	-
(iii)	8.1	38.4	53.5	-	-
(iv)	11.6	48.7	39.7	-	-

ASPECT (i) : PROMPTNESS

Table 29 shows that 58.1% of pupils fall under the third dimension of the aspect, which shows that the learning disabled pupils are average in promptness and understand the meaning of time at their age level and grade level. This prompts us to understand that they attempt to the best of their ability to keep up the schedules and try to avoid doing things late. This is really an interesting characteristic which guides the educationists to further motivate or encourage them to be skilful at handing schedules. The percentages of boys and girls falling under this dimension are parallel.

64.4% of boys and 54.6% of girls belong to this category (Table 29 (a) and Table 29 (b). Thus they are not late to their schedules and do not entirely lack grasp of meaning of time.

CHARACTERISTIC NO. 10 : Average understanding of the concept of time (capable of understanding the meaning of time).

ASPECT (ii) : SPATIAL ORIENTATION

As regards to the aspect 63.7% of these pupils could maneuver in familiar locations. To some extent, they were able to navigate around class-room or school playground or neighbourhood to an extent which are familiar locations to them. The results when viewed sex-wise seem to be parallel as 67.8% of boys and 74% of girls fall under this dimension.

CHARACTERISTIC NO. 11 : Ability to maneuver in familiar locations only.

ASPECT (iii) : JUDGEMENT OF RELATIONSHIPS

The results obtained in this study reveal that the learning disabled children possess average ability in judging the relationship. The ability is just at the level of their age and the grade. 50.4% of learning disabled pupils, 60.2% of boys and 53.5% of girls fall under this dimension (Tables 29, 29 (a) and 29 (b). These children could possess average ability to differentiate big and small, far and close and light and little.

CHARACTERISTIC NO. 12 : Average ability in the judgement of relationships.

ASPECT (iv) : LEARNING DIRECTION

The learning disabled children are generally not confused with the directions such as right and left, north and south. But they have average sense of such directions. It is evident by the result that 51.3% of these children were found falling under this category. In other words, they do not have good sense of direction. They may or may not confuse with the directions, however, they are average in ability to distinguish such directions.

CHARACTERISTIC NO. 13 : Exhibits average ability in distinguishing the directions.

AREA IV : BEHAVIOUR

Gearheart (1973) pointed out that the learning disabled exhibit certain characteristicssuch as hyper-activity, in-attention, lack of co-ordination, memory disorders, etc. He adds that it is obvious that the combination of these various and many other characteristics lead to real problems for the child. Lerner (1976) states that hyperkinetic children have an extremely short attention span and are likely to talk too much in class, and constantly fight with friends, siblings, and class-mates. Their behaviour is described as impulsive or driven. This type of behaviour is mostly observed in learning disabled children. In the present

investigation also many interesting results were obtained as regards to behaviour of the learning disabled pupils. The eight aspects of behaviour comprising this area relate to the childs manner of particiaation in the class room. The child's co-operation, attention, ability to organise, ability to cope with new situations, social acceptance, acceptance of responsibility, completion of assignments and tactfulness are the eight parameters studied under this area.

TABLE 30

AREA IV

Percentages of pupils falling under each dimension of the aspects of the AREA IV (Boys & Girls) : No.50

ASPECT OF THE AREA	DIMENSION OF THE ASPECT				
	1	2	3	4	5
(i)	9.2	30.7	60.1	-	-
(ii)	12.7	37.1	50.2	-	-
(iii)	13.2	35.7	51.1	-	-
(iv)	10.2	28.7	61.1	-	-
(v)	9.5	22.3	68.2	-	-
(vi)	12.8	35.0	52.2	-	-
(vii)	11.7	31.8	56.5	-	-
(viii)	10.2	24.7	65.1	-	-

TABLE 30 (a)

AREA IV : BEHAVIOUR

Percentages of boys falling under each dimension of the aspects of the AREA IV (Boys) : No.26

ASPECT OF THE AREA	DIMENSION OF THE ASPECT				
	1	2	3	4	5
(i)	9.2	22.8	6.8	-	-
(ii)	19.0	34.6	46.4	-	-
(iii)	15.8	34.6	49.6	-	-
(iv)	6.2	25.1	68.7	-	-
(v)	5.8	30.2	64.0	-	-
(vi)	8.7	35.8	55.5	-	-
(vii)	9.6	39.4	51.0	-	-
(viii)	7.2	20.3	72.5	-	-

TABLE 30 (b)

AREA IV : BEHAVIOUR

Percentages of girls falling under each dimension of the aspects of the AREA IV (Girls) : No.24

ASPECT OF THE AREA	DIMENSION OF THE ASPECT				
	1	2	3	4	5
(i)	9.8	31.8	58.4	-	-
(ii)	7.8	30.6	61.6	-	-
(iii)	11.2	32.8	56.0	-	-
(iv)	8.3	27.5	64.2	-	-
(v)	3.5	24.3	72.2	-	-
(vi)	8.1	34.0	57.9	-	-
(vii)	12.2	41.6	46.2	-	-
(viii)	5.2	26.4	68.4	-	-

The percentages of learning disabled pupils falling under each dimension of the aspects of the AREA are presented in Table 30. Table 30 (a) and Table 30 (b) show the percentages of boys and girls falling under each dimension. It is interesting to note that all pupils, even boys and girls separately fall under the third dimension of each aspect in the area. The same trend was observed even in the area 'ORIENTATION'.

ASPECT (i) : CO-OPERATION

60.1% of pupils fall under third dimension which reveals that the learning disabled pupils have the quality of waiting for their turn. But they may not co-operate well. Their co-operation is found to be average at their age level and grade level. This is really very encouraging trait of the children, since something can be done for them to promote the behaviour of co-operation by adult (teacher) encouragement or any motivation, which would in turn help the child to promote his academic standard. 68% of boys and 58.4% of girls fall under this dimension.

CHARACTERISTIC NO. 14 : Co-operates at the age level and grade level - waits for his turn.

ASPECT (ii) : ATTENTION

Contradictory to the results observed in the review, 50.2% of pupils were found to be attentive adequately. However, 37% of pupils were also found to be rarely listening and their

attention frequently wandering. In other words, the attention span is not above average and it is not long attention span. Hence it may be observed that in this study the attention span of these is not short as observed in the earlier studies but adequate. This is also an encouraging observation of the behaviour of these children. This result is supported by the percentages of boys and girls falling under this dimension. 46.4% of boys and 61.6% of girls were found to belong to this dimension. Here, it noticed that boys percentage is low when compared with girls. 34.0% of boys belong to the category who rarely listens and whose attention frequently wanders. This shows that the attention of boys might be distractible to an extent when compared with the girls.

CHARACTERISTIC NO. 15 : The span of attention is adequate but not upto the mark.

ASPECT (iii) : ABILITY TO ORGANISE

A pupil to succeed in his academic line should possess the quality of completing the assignments given to him in a highly organised and meticulous manner. In the present study, the learning disabled were found to be not so bad in this aspect. Though they do not possess this quality as expected above, they were found to possess ability to maintain average organisation of work and they were also found to be careful. 51.1% of pupils and 49.6% of boys and 56% of girls belong to this dimension. However, a considerable

percentage of pupils and boys were also found to be often disorganised in manner of work; they were inexpert and careless.

Thus it is accepted that they possess only average ability organising things but not at the expected level.

CHARACTERISTIC NO. 16 : Average ability to organise and complete the work assigned.

ASPECT (iv) : ABILITY TO COPE UP WITH NEW SITUATION

The aspect examines the ability of the child as regard to degree of adaptation to new situations. We also understand here whether child lacks self control.

In the present study, though the learning disabled pupils do adapt so easily and quickly, they do not become excitable or over-react with new situation. Their adaptation was found to be adequate to their age and grade as we observe that 61.1% of children fall under this dimension. 68.7% of boys and 64.2% of girls belong to this category. There is no sign of self confidence among them.

CHARACTERISTIC NO. 17 : Adapts adequately to new situations at an average level.

ASPECT (v) : SOCIAL ACCEPTANCE

It is observed that 68.2% of learning disabled pupils are liked by others but not to a great extent. This reveals that these children show social acceptance which is plus point.

When the result is viewed sex-wise, 64% of boys and 72.2% of girls were found to be liked by others at their age and grade levels.

CHARACTERISTIC NO. 18 : The learning disabled were found to be liked by others at an average level.

ASPECT (vi) : ACCEPTANCE OF RESPONSIBILITY

The acceptance of responsibility was also found to be average which is adequate to their age and grade levels. Though they do not take initiative themselves to undertake any responsibility, they do not avoid to undertake any responsibility. They certainly accept responsibility which behaviour of them is to be appreciated. 52.2% of pupils under study, 55.5% of boys and 57.9% of girls were found to have possessed this behaviour.

CHARACTERISTIC NO. 19 : The learning disabled pupils accept responsibility adequately.

ASPECT (vii) : COMPLETION OF ASSIGNMENTS

Any one to show perfect academic progress should complete the assignment given by the teachers without being supervised. He or she should complete them voluntarily. In the present study, though they do not fail to complete the given assignment, they have average ability to follow through on assignments. This ability was found among 56.5% of pupils under study. 51% of boys and 46.2% of girls showed this trait.

However, good percentage of boys and girls were found to be (39.4% and 41.6%) seldom finishing their assignments even with guidance. Thus it may be carefully noted that these pupils are not up to the mark in completing the assignments, which behaviour might be their cause for their academic failure. Here the attention of teachers and educators is to be brought to focus. As stated earlier, there will be a chance for the learning disabled pupils to fall in the regular academic stream, if provided any specialised instruction or guidance. So if they are guided properly as and when required, these children might complete their assignments regularly which might help them in improving their academic work.

CHARACTERISTIC NO. 20 : Average ability to follow through on assignments.

ASPECT(viii) : TACTFULNESS

65.1% of learning disabled pupils in the present study were found to be possessing average tactfulness. Of course, they are not rude rather disregards others feelings. They were found to be occasionally socially inappropriate. The percentage of boys seems to be 72.5% and that of girls 68.4%.

CHARACTERISTIC NO. 21 : Average tactfulness and occasionally socially inappropriate.

AREA V : MOTOR

A child's problem in learning can be traced to an inadequate development of the general motor system. Such children need more practice and experience in perfecting motor skills. Getman et al (1968) suggested activities for six areas of development : general co-ordination, practice in balance, practice in eye-hand co-ordination, practice in eye-movement, practice in form recognition and practice in visual memory. Four motor generalisations are discussed by Kephart as important to success in school : balance and maintenance of posture, contact, locomotion and receipt and propulsion. The positive relationship of each of these generalisations to learning was discussed by Kephart in his study (Kephart, 1963).

In the present study too, the child's balance, general co-ordination and use of hands in class-room activities were studied. As a child may have no motor difficulties or may have one type of difficulty or sometimes the combination of the above three, namely, general co-ordination, balance and mannual dexterity, great care was taken by the teachers in rating the motor ability of the pupil. Tables 31, 31 (a) and 31 (b) show the results.

TABLE 31

AREA V : MOTOR

Percentages of pupils falling under each dimension of the aspects of the AREA V (Boys & Girls) : No.50

ASPECT OF THE AREA	DIMENSION OF THE ASPECT				
	1	2	3	4	5
(i)	9.6	25.0	65.4	-	-
(ii)	6.5	20.5	73.0	-	-
(iii)	5.0	18.0	77.0	-	-

TABLE 31 (a)

AREA V : MOTOR

Percentages of Boys falling under each dimension of the aspects of the AREA V (Boys) : No.26

ASPECT OF THE AREA	DIMENSION OF THE ASPECT				
	1	2	3	4	5
(i)	12.8	18.7	68.5	-	-
(ii)	4.2	22.8	73.0	-	-
(iii)	8.1	14.7	77.2	-	-

TABLE 31 (b)

AREA V : MOTOR

Percentages of Girls falling under each dimension of the aspects of the AREA V : (Girls) No.24

ASPECT OF THE AREA	DIMENSION OF THE ASPECT				
	1	2	3	4	5
(i)	3.2	31.4	65.4	-	-
(ii)	5.6	20.3	74.1	-	-
(iii)	6.4	19.3	74.3	-	-

ASPECT (i) : GENERAL CO-ORDINATION

The subjects of the present study were found to be average in general co-ordination. They sometimes looked to be outstanding while running, climbing, hopping and walking but not graceful. However, the co-ordination was not at all awkward. 65.4% of pupils fall under this category. The same trait was observed in the case of boys and girls when viewed sex-wise. 68.5% of boys and 65.4% of girls showed the same trend.

CHARACTERISTIC NO. 22 : Average co-ordination but not graceful.

ASPECT (ii) : BALANCE

As stated earlier, balance of the child is an important requisite to success in school. The pupils in the present study possess average balance but not outstanding. They have adequate equilibrium only. Thus they may not be well in activities requiring balance. 73% of pupils in the present study have the ability to do activities with average balance. They were found to maintain adequate equilibrium. In this aspect 73% of boys and 74.1% of girls show the same trend.

CHARACTERISTIC NO. 23 : Average ability to balance while doing activites.

ASPECT (iii) : ABILITY TO MANIPULATE (MANNUAL DEXTERITY)

77% of the learning disabled were found to have adequate dexterity for the age. They were able to manipulate well. This is really an excellent quality which is needed for the progress in the academic line. They would certainly come to the expected level with little guidance as they have capacity ti manipulate well the given equipment. 77.2% of boys and 74.3% of girls fall under this category.

CHARACTERISTIC NO. 24 : Possesses adequate dexterity and manipulates well.

CHAPTER V

SUMMARY & CONCLUSION

The present research is designed to identify rural children with learning disabilities. The research further attempts to study the characteristics of the learning disabled children. In the present study, any pupil who qualifies for the label 'learning disabled' is the one who is experiencing serious academic difficulties despite adequate intellectual endowment and the absence of academically significant sensory impairments or physical disabilities.

In this investigation, pupils from rural area of age group 9-11 years were chosen as the subjects, as it is observed that during the early ages, five to ten years old range, the child's own basic potentials express themselves more clearly and are less overlaid by the secondary effects of experience of success or failure than in older children.

In a research of this type, the co-operation of pupils, teachers and headmasters is indispensable. The authorities of the department of Education also figure because their official permission is an important technical requirement. Fortunately, the experience of the present investigator in this matter was one of total satisfaction. All the concerned persons showed a great deal of interest and enthusiasm.

In particular, the headmasters considered this type of research so valuable that they readily rendered their co-operation in the arrangements required. They induced teachers to extend their co-operation too.

The investigation was conducted on a sample of 923 pupils from 20 elementary schools from the Panchayat Union of Chittalapakkam in the state of Tamil Nadu. Care was taken to choose the sample of schools from the different areas of the union so that the sample represents the entire union. In order to choose the normal and the above normal intelligent pupils from among 923 pupils, Raven's Coloured Progressive Matrices Test was administered. An Achievement Test was constructed, standardised and administered to the above sample. But due to various reasons, a few children were absent and finally the Achievement Test could be administered to 720 pupils only. After identifying 133 learning disabled pupils among them, the PUPIL PERSONAL DATA SCHEDULE developed by the investigator was administered to them to collect data relating to their identifying information, birth history, health history, developmental history and their educational and home factors. After administering the PUPIL BEHAVIOUR RATING SCALE to the above 133 pupils, 50 hard-core learning

disabled pupils were identified. The characteristics of these children in terms of learning and behaviour were studied using the Pupil Behaviour Rating Scale. The data were statistically treated to study the characteristics of the children.

In this chapter, the summary of findings is presented and discussed at length.

SUMMARY OF FINDINGS

The following is a summary of the main findings of the present investigation.

PREVALENCE OF THE LEARNING DISABLED

In the present study, it was found that 18.5% of the research population were found to be learning disabled.

The study also reveals that the prevalence of hard-core case of the learning disabled was 6.94% of the research population. In other words, with the more stringent criteria, the study revealed that approximately one-third of those initially identified fell into the category of the learning disabled.

CHARACTERISTICS OF LEARNING DISABLED

I BASIC VARIABLES CHARACTERISTIC OF LEARNING DISABILITY

a) PUPIL RELATED : 1) Poor Study Habits, 2) Negative attitude towards studies.

b) PARENT RELATED : Low Socio-economic Status of parents.

c) SCHOOL RELATED : 1) Lack of facilities for early identification of learning disabled, 2) Lack of facilities for specialised instruction for learning disabled.

II LEARNING AND BEHAVIOUR CHARACTERISTICS

The following learning and behaviour characteristics have been observed in the present study.

1) Inability to follow and remember the class room directions unless individual help is provided.
2) In-attentive to the class room discussion.
3) Inability to retain things unless repeated often.
4) Inability to grasp simple word meanings; misunderstands the words.
5) Inability to speak in complete sentences with correct sentence structure.
6) Possesses limited vocabulary.
7) Inability to recall words to express.
8) Inability to relate facts appropriately.
9) Inability to relate ideas in a meaningful manner.
10) Average ability in promptness.

11) Ability to manoeuvre in familiar locations only.

12) Average ability in judging relationships.

13) Average ability to distinguish the directions.

14) Co-operates with others at his age and grade levels; waits for his turn.

15) Attends adequately to important aspects--but attention span is not unto the mark.

16) Average ability to organise the work assigned.

17) Adapts adequately to new situations.

18) Liked by others but average social acceptance.

19) Adequate acceptance of responsibility.

20) Average ability to complete the given assignment.

21) Average tactfulness - occasionally socially inappropriate.

22) Average co-ordination while performing activities, but not graceful.

23) Average ability to balance while doing activities but not outstanding.

24) Adequate dexterity, manipulates well the given equipment.

DISCUSSION

Perhaps the most important point of departure in the present investigation is the early identification of the children suffering from learning disability. The present investigator, as stated in the earlier chapter, is of the opinion that there should be programmes for early identification of such children to shorten the time required

to remediate the problem. It is found that the early identification would prevent their maladaptive behaviour patterns or any inefficient motoric responses. Sooner the high-risk learning disabled children are recognised, the greater the chances of preventing the failure.

Many researchers pointed out that the children with learning disabilities were identified primarily at the elementary school stage, since such disabilities are most visible during this stage in the form of deficiencies in reading, calculating, spelling, etc. They also strongly recommended that a comprehensive approach to this field must start as early in life as possible.

As stated earlier in this report, if this area is neglected any more, the country may face a high drop-out rate of pupils at the elementary stage of education. Even many studies conducted abroad proved that between 85% to 90% of all juveniles sentenced to correctional schools suffered from clinically provable learning disabilities.

It is observed that in India, the involvement of researchers in this field is not satisfactory and no educational services are provided by the schools to these unfortunate lot of children. It is also noticed that no teacher programmes are existent in this direction. There is no legislation in the country to take utmost care of these children.

The present study revealed that 18.5% of research population suffered from learning disabilities. With more stringent criteria, the study shows that the prevalence of learning disability was 6.94% of the research population. This result is in par with the results obtained at the international level as reviewed in the earlier chapter.

This shows that the field needs the immediate attention of the departments of education, researchers, administrators and parents of our country to identify these children to bring them immediately to the main stream of education before they become drop-outs or juveniles. They should be provided with appropriate preventive services.

As regards to the characteristics of these children, many interesting results were obtained which guide us to tackle them scientifically in order to save them from their academic failures.

The investigator divided the characteristic observed in this study into two categories. 1) Basic characteristic, and 2) Learning and behavioural characteristics.

Normally a question would arise as to the relative contribution of teaching facilities in schools in comparison to the personal variables such as intelligence, study habits and socio-economic status.

In the present investigation, it is observed that the disability of these children in basically due to three factors though they are normal in intelligence, which factors, the author termed as basic characteristics. The author in his previous study on the relationship of a few selected variables to the academic achievement (Ramoji Rao, 1976) found the correlation between intelligence and achievement as .44. This shows that the contribution of study habits, socio-economic status and school facilities may join together to promote the academic strength of the child. In the same study, it was observed that the variable socio-economic status of pupils has a high correlation co-efficient of .77 with achievement. When the effects of study habits and intelligence are partialled out, the above correlation did not vary to any great extent. This shows that socio-economic status has a large relationship to achievement. He further found a correlation of .45 between study habits and achievement, which relationship increases to .55 when intelligence is held constant. In other words, contribution of the variable, study habits is more to achievement when compared with intelligence.

In the present study too, most significant and meaningful observations were made in this direction. The data collected by the Pupil's Personal Data Schedule revealed that the pupils of the present study had poor study habits and showed negative attitude towards studies. Secondly, as the pupils hail from the rural area and they belonged to low socio-economic group, they could not be provided with any facilities by their parents to promote their study habits by providing them with necessary study equipment, study rooms and study atmosphere. The previous finding of the author that the variable, study habits, correlates with the variable socio-economic status looks to be most acceptable in the light of the present observation.

As regards to school related variables, the schools chosen for the study have no facilities to identify the learning disabled pupils at the early stage. Even though any such children were traced by chance, there were no facilities to provide any specialised instruction to them to bring them into main stream of education. Thus it may be concluded that the three basic characteristics that might be responsible for the disability of these pupils are 1) Poor study habits, 2) Low socio-economic status, and 3) Lack of facilities in schools to identify and deal with these children.

At this stage, it would be advantageous to discuss the learning and behaviour characteristics in the light of the results obtained in the present study. The children of the present sample showed two different trends regarding these characteristics.

As regards to the ability to their auditory comprehension and listening and the ability to spoken language, they were found to be below average. When the results were further examined, it was found that their behaviour, orientation and motoric responses, though were not upto the mark, they showed above average ability at their age and grade levels.

They were found to be inattentive to the classroom discussion, as such they were unable to follow and remember the class room directions unless they are individually helped by the teachers often. They were even unable to retain the orally given information in the class room and grasp even the simple word meanings since the attention span of these children to the class room work was short. Hence the variable INATTENTION TO THE CLASS ROOM WORK seems to be a significant characteristic. The results further reveal that these children are unable to speak in complete sentences whenever they want to express anything they have in their minds. They possessed limited vocabulary.

They grope for ideas. They fail to relate the facts appropriately. Thus another significant characteristic observed in this study is the POOR SPEAKING ABILITY.

It is obvious that any child would have developed learning disability if he was inattentive to the class room situation and could not express his problems and ideas orally in proper language to his teacher in the class room. Thus the teacher should take the initiative to promote interest in such child to attend the class work through necessary motivations. Secondly, the child should be taught the necessary vocabulary at the age level and grade level to express in correct words.

As regards to their behaviour, orientation and motoric responses, interesting results were observed.

The subjects under investigation possessed average abilities on all the aspects of there three areas which looks to be a plus point to them to overcome with their learning disabilities, provided the teachers and the persons interested do understand them in right perspective.

It may be recalled that the birth history, development history, health history and home background of the children in the sample were found to be normal and satisfactory. The children even joined the school at right age and showed positive attitude to go to school.

All these factors lead us to an understanding that it is the ability of the teacher to identify and teach such children with a clear cut knowledge of their characteristics that counts much, rather than the inability of the child to learn. The child may therefore require specialised instruction in order to permit the use of his or her full intellectual potential and abilities such as the above which are pertinent to the academic achievement.

The observations made in this study guide us to deal with a learning disabled child through three different angles. In the first place, the government should provide these rural children mid-day meals, free supply of books and other necessary study equipment so that they may overcome with the problem of low socio-economic status of their parents. This might help us to promote the study activities of these pupils both at school and at home to a great extent.

Secondly, the teachers should be made responsible to cultivate healthy study habits among these children through necessary motivation which in turn might promote a positive attitude towards studies among them.

Finally, the role of the administrators in the departments of education and the heads of schools comes into picture. The schools should identify the learning

disabled children as early as possible and provide specialised instruction so that the disability may disappear. Everyone should note that the problem of these children is an educational but not a psychological or a medical problem. Teachers should note that these children possess average behavioural characteristics which may be utilised in the right perspective to put them on to the main line so that they may overcome their learning problems.

Thus the responsibility of helping these children ultimately rests with the government, administrators and teachers since a learning disability is not a complete lack in the child's ability to learn as observed through their learning and behaviour characteristics but it is a lack in the educator's ability to identify and teach them with specialised educational programmes.

In this connection, the author adds that it is not an attack on teachers or administrators but it is a matter of pointing out that all too little is known about a learning child and that the little that we do know has not been adequately disseminated.

It may therefore be concluded that an immediate attention of the policy makers, the administrators, the teachers and the teacher educators is required to implement and induct the above findings into our educational system to save this unfortunate lot from becoming juveniles or drop-outs.

[illegible] SUGGESTIONS

1) A suitable legislation may be enacted in the country [illegible] services for learning disabled children.

2) A variety of educational service systems and placement facilities should be developed by the administrators for diagnosing and treating children with learning problems. Among the systems of educational services to be developed in schools for teaching children with learning disabilities may be residential schools, special day schools, self-contained class rooms, resource rooms, main streaming programmes and itinerant programmes in which an itinerant teacher travels to several schools and teaches children individually or in groups.

3) The diagnostic and treatment services for children with learning disabilities should not only be offered in school settings but also by social workers and guidance counsellors. Such inter-disciplinary services would help these children to a greater extent.

4) There should be excellent programmes for the teacher trainees in this field and a good length of continuous research work should be encouraged by involving the teachers and teacher educators.

REFERENCES

ALAN O. ROSS : Learning Disabilities, the unrealised potential, McGraw-Hill Book Company, New York, 1977.

BATEMAN, BARBARA : "An Educator's View of a diagnostic approach to Learning Disorders" in Janet W. Lerner, Children with Learning Disabilities", P-74, Houghton Mifflin Co., Boston, 1976.

BUKTENICA, NORMAN : "Identification of Potential Disorders", Journal of Learning Disabilities, 4, 7 (1971), 379-383.

DENHOFF, E., PETER HAINSWORTH & MARIAN HAINSWORTH : Learning Disabilities and early childhood education : "An information processing approach". PP 111-150 in H. Myklebust, Vol.II, New York, Grune & Stratton, 1971.

DUDLEY HAGGER, T. : Learning Disabilities in Australia, in Reading Disabilities-an international perspective, Edited by Lester Tarnopol and Muriel Tarnopol, University Park Press, Maryland, 1976.

GEARHEART, B.R. : "Learning Disabilities Educational Strategies", The C.V. Mosby Company, Saint Louis, 1973.

GOODMAN LIBBY, MANN LESTER : Learning Disabilities in the Secondary School, Issues and Practices, Grune & Stratton, New York, 1976.

JANET W. LERNER : Children with Learning Disabilities, Houghton Mifflin Company, Boston, 1976.

JANSEN, M., HANSEN, M. et al : Special Education in Denmark, in Reading Disabilities - An Internal Perspective - Edited by Lester Tarnopol and Muriel Tarnopol, University Park Press, Maryland, 1976.

JOEP J. DUMONT : Learning Disabilities in the Netherlands, in Reading Disabilities, 1976.

KASS, C.E. & H.R. MYKLEBUST : "Learning Disabilities : An Educational Definition", Journal of Learning Disabilities, 2, No.7 (July 1969), 377-379.

KEOGH, BARBARA ed : Early identification of children with potential learning problems, "Journal of Special Education", 4, 3 (1970), 309-363.

KIRK, S.A. : Educating exceptional children, Houghton Mifflin Company, Boston, 1972.

KIRK, SAMUEL, A., and WINIFRED, D. KIRK : Psycholinguistic learning disabilities : Diagnosis and Remediation, Urbana, Ill : University of Illinois Press, 1971.

LARRY A. FAAS : "Learning Disabilities - A Competency Based approach", Houghton Mifflin Company, Boston, 1976.

LESTER TARNOPOL & MURIEL TARNOPOL	:	"Reading Disabilities - An International Perspective, University Park Press, Baltimore, Maryland, 1976.
LOUISE BATES AMES	:	Learning Disabilities : The developmental point of view, in Progress in Learning Disabilities, Volume 1, Edited by Helmer R. Myklebust, Grune & Stratton, INC, New York, 1968.
LOVITT, THOMAS C	:	"Assessment of children with learning disabilities" - Exceptional children 34 (1967), in children with learning disabilities by Janet W. Lerner, Houghton Mifflin Company, Boston, 1976.
MARIANNA KLEES	:	"Learning Disabilities in Belgium" in Reading Disabilities - an international perspective, Edited by Lester Tarnopol and Muriel Tarnopol, University Park Press, Maryland, 1976.
MATEJCEK, Z, DYSLEXIA	:	Diagnostic and treatment findings in Reading Disabilities - an internal perspective, Edited by Lester Tarnopol and Muriel Tarnopol, University Park Press, Maryland, 1976.
MYKLEBUST, H. & BOSHES	:	"Minimal Brain Damage in Children", PP 80-81 in Janet W. Lerner, "Children with Learning Disabilities", Houghton Mifflin Company, Boston, 1976.

NATIONAL ADVISORY COMMITTEE : On Hnadicapped Children - Special Education for handicapped children in Children with Learning Disabilities, Janet W. Lerner, Houghton Mifflin Company, Boston, 1976, P-11.

OTHMAR KOWARIK : "Reading-Writing problems in Austria", Published in Reading Disabilities - an international perspective, Edited by Lester Tarnopol and Muriel Tarnopol, University Park Press, Maryland, 1976.

RAIJA SYVALAHTI : Reading and Writing disabilities in Finland in Reading Disabilities in internal perspective, Edited by Lester Tarnopol and Muriel Tarnopol, University Park Press, Maryland, 1976.

RAMOJI RAO, Y. : A Study of the relationship of a few selected variables to the academic achievement indices of secondary schools, An unpublished Ph.D. Thesis, University of Madras, 1976.

VALETT, R.E. : Effective teaching - A guide to diagnostic-perspective task analysis in "Learning Disabilities", Larry A. Faas, Houghton Mifflin Company, U.S.A.,1976,P-16.

WALLACE, G. and J. KANFFMAN : Teaching children with learning problems : Merrill, 1973.

WALZER, S. and J.B. RICHMOND : "The Epidemiology of Learning Disorders" in Learning Disabilities, Larry A. Faas, Houghton Mifflin Company, U.S.A., 1976, P-16.

APPENDIX I

PUPIL BEHAVIOUR RATING SCALE

Name .... No .... School .... Grade ....

Sex .... Date .... Teacher ....

1 AUDITORY COMPREHENSION AND LISTENING

	1	2	3	4	5
Ability to follow directions	Always confused, Cannot or is unable to follow directions	Usually follows simple oral directions but often needs individual help	Follows directions that are familiar and/or not complex	Remembers and follows extended directions	Unusually skillful in remembering and following directions
Comprehension of class discussion	Always inattentive and /or unable to follow and understand discussions	Listens but rarely comprehends well ' mind often wanders from discussion	Listens and follows discussions according to age and grade	Understands well and benefits from discussions	Becomes involved and shows unusual understanding of material discussed
Ability to retain orally given information	Almost total lack of recall, poor memory	Retains simple ideas and procedures if repeated often	Average retention of materials , adequate memory for age & grade	Remembers procedures and information from various sources , good immediate and delayed recall	Superior memory for both details and content
Comprehension of word meaning	Extremely immature level of understanding	Fails to grasp simple word meanings, misunderstands words at grade level	Good grasp of grade level vocabulary for age and grade	Understands all grade level vocabulary as well as higher level word meaning	Superior understanding of vocabulary , understands many abstract words

II SPOKEN LANGUAGE

	1	2	3	4	5
Ability to speak in complete sentences using accurate sentence structure					
	Always uses incomplete sentences with grammatical errors	Frequently uses incomplete sentences and or numerous grammatical errors	Uses correct grammar, few errors of omission or incorrect use of prepositions, verb tense, pronouns	Above average oral language, rarely makes grammatical errors	Always speaks in grammatically correct sentences
Vocabulary ability					
	Always uses immature or improper vocabulary	Limited vocabulary including primarily simple nouns, few precise, descriptive words	Adequate vocabulary for age and grade	Above-average vocabulary, uses numerous precise descriptive words	High level vocabulary, always uses precise words to convey message, uses abstraction
Ability to recall words					
	Unable to call forth the exact word	Often gropes for words to express himself	Occasionally searches for correct word but adequate for age and grade	Above-average ability, rarely hesitates on a word	Always speaks well; never hesitates or substitutes words
Ability to formulate ideas from isolated facts					
	Unable to relate isolated facts	Has difficulty relating isolated facts, ideas are incomplete and scattered	Usually relates facts into meaningful ideas, adequate for age and grade	Relates facts and ideas well	Outstanding ability in relating facts appropriately
Ability to tell stories and relate experiences					
	Unable to tell a comprehensible story	Has difficulty relating ideas in logical sequence	Average ability to tell stories	Above average, uses logical sequence	Exceptional ability to relate ideas in logical meaningful manner

III ORIENTATION

	1	2	3	4	5
Promptness					
	Lacks grasp of meaning of time, always late or confused	Poor time concept, tends to dawdle, often late	Average understanding of time for age and grade	Prompt, late only with good reason	Very skillful at handling schedules, plans and organizes well
Spatial orientation					
	Always confused, unable to navigate around classroom or school, playground or neighbourhood	Frequently gets lost in relatively familiar surroundings	Can maneuver in familiar locations, average for age and grade	Above average ability, rarely lost or confused	Never lost, adapts to new locations; Situations, places
Judgement of relationships: big, little; far, close; light, heavy					
	Judgements relationships very inadequate	Makes elementary judgements successfully	Average ability in relation to age and grade	Accurate judgements but does not generalize to new situations	Unusually precise judgements, generalizes to new situations and experiences
Learning directions					
	Highly confused, unable to distinguish directions as right, left, north and south	Sometimes exhibits directional confusion	Average, uses R vs. L, N-S-E-W	Good sense of direction, seldom confused	Excellent sense of direction

IV BEHAVIOUR

	1	2	3	4	5
Co-operation					
	Continually disrupts classroom, unable to inhibit responses	Frequently demands spotlight, often speaks out of turn	Waits his turn, average for age and grade	Cooperates well, above average	Cooperates without adult encouragement
Attention					
	Is never attentive, very distractible	Rarely listens, attention frequently wanders frequently wanders	Attends adequately for age and grade	Above average, almost always attends	Always attends to important aspects; long attention span
Ability to organize					
	Is highly disorganized, very solvently	Often disorganized in manner of working; inexact, careless	Maintains average organization of work, careful	Above-average ability to organize and complete work, consistent	Always completes assignments in a highly organized and meticulous manner
Ability to cope with new situations: parties trips, unanticipated changes in routine					
	Becomes extremely excitable, totally lacking in self control	Often over-reacts, new situations disturbing	Adapts adequately for age and grade	Adapts easily and quickly with self confidence	Excellent adaptation, utilizing initiative and independence

(Contd.)

1	2	3	4	5
Social acceptance				
Avoided by others	Tolerated by others	Liked by others ; average for age and grade	Well liked by others	Sought by others
Acceptance of responsibility				
Rejects responsibility , never initiates activities	Avoids responsibility ; limited acceptance of role for age	Accepts responsibility , adequate for age and grade	Enjoys responsibility , above average , frequently takes initiative or volunteers	Seeks responsibility , almost always takes initiative with enthusiasm
Completion of assignments				
Never finishes, even with guidance	Seldom finishes, even with guidance	Average ability to follow through on assignments	Above-average ability to complete assignments	Always completes assignments without supervision
Tactfulness				
Always rude	Usually disregards other's feelings	Average tactfulness ; occasionally socially inappropriate	Above average tactfulness , rarely socially inappropriate	Always tactful , never socially inappropriate

V MOTOR

1	2	3	4	5
General Coordination : running, climbing, hopping, walking				
Very poorly co-ordinated , clumsy	Below average co-ordination, awkward	Average coordination for age , outstanding but not graceful	Above-average coordination , does well in these activities	Exceptional ability , excels in this area
Balance				
Very poor balance	Below-average ' falls frequently	Average balance for age , not outstanding but adequate equilibrium	Above-average , does well in activities requiring balance	Exceptional ability excels in balancing
Ability to manipulate utensils and equipment : manual dexterity				
Very poor in manual manipulation	Awakard in manual dexterity	Adequate dexterity for age, manipulates well	Above-average manual dexterity	Almost perfect performance , readily manipulates new equipment

APPENDIX I

PUPIL BEHAVIOUR RATING SCALE

பெயர் . ... எண் .... பள்ளி .... தகுதி . ...

ஆண் / பெண் . ... தேதி .... உபாத்தியாயர் . ...

1. வாய்மொழிப் பயிற்சியைக் கேட்டு புரிந்துக்கொள்ளும் திறமை. (Auditory Comprehension and Listening)

	1	2	3	4	5
விதிமுறைகளைக் கடைபிடித்து செயல்படும் திறன்கள் :	எப்போதுமே குழம்பிக் கொள்பவன், புரிந்துக் கொள்ளும் சக்தியற்றவன் அல்லது புரிந்துகொள்ள முடியாதவன்	சாதாரணமாக எளிதான வாய்மொழி விதிகளை பின்பற்றுவான் ஆனால் அநேகமாக பிறருடைய உதவியை நாடுவான்	சுலபமான மற்றும் பழக்கப்பட்ட விதிமுறைகளை மட்டுமே கடைபிடிப்பான்	விளக்கமான விதிமுறைகளை நினைவில் வைத்து அதன் வழி செயல்படுபவன்	நினைவாற்றலிலும் விதிமுறைகளைக் கடைபிடிப்பதிலும் அசாதாரணத் தன்மையுள்ளவன்
வகுப்புக் கலந்துரையாடல்களைப் புரிந்துக் கொள்ளுதல் :	எப்போதுமே கவனித்து, புரிந்துகொண்டு பின்பற்றும் சக்தியில்லாதவன்	கேட்பான், ஆனால் கவனம் செலுத்தாததனால் அரிதாக சொல்வதைப் புரிந்துக் கொள்வான்	வயதிற்கும், வகுப்பிற்கும் தகுந்த உரையாடலாக இருப்பின் கேட்பான், கடைபிடிப்பான்	நன்கு புரிந்துகொண்டு அதனால் பயனடைவான்	கலந்துரையாடலில் தன்னை மிகவும் ஈடுபடுத்திக்கொண்டு விவாதிக்கப்பட்ட கருத்துக்களை மிகவும் நன்குக புரிந்துக் கொள்வான்
வாய்மொழிக் கருத்துக்களை மனதில் கொள்ளும் திறன் :	மொத்தத்தில் ஞாபக சக்தியே இல்லாதவன் அல்லது குறைந்த ஞாபக சக்தியுடையவன்	சாதாரண யோசனைகளையும், முறைகளையும் பல முறை எடுத்துச் சொன்னால் மட்டுமே அதனை மனதில் பதியவைத்துக் கொள்வான்	வயதிற்கும், வகுப்பிற்கும் தகுந்த சராசரி நினைவாற்றல் உள்ளவன்	பல இடங்களில் கேட்கும் கருத்துக்களையும், விதிமுறைகளையும் நன்கு நினைவு கொள்வான். தற்போதைய மற்றும் பழைய விஷயங்களையும் நன்கு நினைவில் வைத்துக் கொள்வான்	விவரங்களையும், கருத்துக்களையும் சிறந்த முறையில் ஞாபகம் வைத்துக்கொள்வான்
சொற்பொருட்களைப் புரிந்துக் கொள்ளுதல் :	புரிந்துக் கொள்ளும் சக்தி ... முதிர்ச்சி அடையாதவன்	சுலபமான வார்த்தைகளுக்கும் பொருள் புரிந்துக் கொள்ள முடியாதவன் மற்றும் வகுப்பிற்குரிய வார்த்தைகளை தவறான முறையில் புரிந்துக் கொள்பவன்.	வயதிற்கும், வகுப்பிற்கும் தகுந்த வார்த்தைகளின் பொருளை நன்குக புரிந்து கொள்பவன்	வகுப்பிற்கேற்ற வார்த்தைகளையும், அதற்கும் மேற்பட்ட வார்த்தைகளையும் புரிந்துக் கொள்பவன்	வகுப்பிற்கேற்ற வார்த்தைகளையும் கருத்தில்லாத வார்த்தைகளையும் மிக எளிதில் புரிந்துக் கொள்பவன்

2. பேச்சு மொழி (Spoken Language)

சரியான வாக்கிய அமைப்பை உபயோகித்து முழுமையான வாக்கியங்களை பேசும் திறமை :

1	2	3	4	5
எபபோதும இலககணப பிழைகளோடு சோநத முழுமையிலலாத வாககி யஙகளையே பேசுவான	முழுமையிலலாத இலகக ணப பிழைகளோடு கூடிய வாககியஙகளையே அடிக கடி பேசுவான	சரியான இலககணததை உபயோகிபபான ஆனால தொழில பெயா, காலம முதலியவறறில சில வறறை தவறாக உபயோ கிபபான	பேசசு மொழியில மிகவும சிறநத திறமையுளளவன ஆனால எபபோதாவது சில இலககணப பிழைக ளோடு பேசுவான	எபபோதும இலககண முறைகளோடு சரியான வாககியஙகளை பேசுவான.

நிறைய வார்த்தைகளைத் தெரிந்திருக்கும் திறமை :

1	2	3	4	5
வயதிறகு ஒததுவாாததும, முறையறறதுமான வாாத தைகளை உபயோகிபபான	பெயா, குணம சமபநத மான வாாததைகளை மற றும விளககமாக விவரிகக பயனபடும வாாததைகளை யும குறைவான அளவில தெரிநது வைததிருபபான	வயதிறகும, வகுபபிறகும ஏறற போதுமான வாாத தைகளை அறிநதிருபபான.	விளககமான நிறைய வாாததைகளை மிக அதிக மான அளவில அறிநதிருப பான	வாாததைகளைத தெரிந திருககும திறமையில மிக வும சிறநதவன எபபோ தும சரியான வாாததை கள மூலம செயதிகளைத தெரிவிபபான

வார்த்தைகளை நினைவு கூறும் திறன் ;

1	2	3	4	5
சரியான வாாததையை நினைவுகூற முடியாதவன.	அடிககடி தன மனக கருததை வெளிபபடுததும வாாததைகள கிடைககா மல தேடுபவன	தகுநத நினைவாறறல இருககும ஆனால, எப போதாவது சரியான வாாததை கிடைககாமல தேடுபவன	சிறநத நினைவாறறல உள ளவன ஆனால வாாத தையை வெளிபபடுதத எப போதாவது தயஙகுவான	எபபோதுமே தயகக மினறி வாாததைகளை யாறறுமல சரியான முறை யில நனறாக சொலவான

பல விவரங்களை ஒன்று சேர்த்து சரியான முறையில் கருத்துக்களை உருவாக்கும் திறமை :

1	2	3	4	5
விவரஙகளை ஒனறு சோக கும திறமையிலலாதவன	விவரஙகளை ஒனறு சோகக சஷடபபடுவான யோச னைகள, மறறும கருததுக கள முழுமையிலலாமலும சிதறியும கிடககும	சாதாரணமாக அவனு டைய வயது, மறறும வகுபபிறகு ஏறற முறை யில விவரஙகளை ஆாதத முளள கருததுககளாகவும, யோசனைகளாகவும, புரிந துகொளளும திறமை யுளளவன	விஷயஙகளையும, யோசனை களையும மிகவும நனறாக சமபநதப படுததுவான	விஷயம, யோசனைகளை சம பநதப படுததுவதில மிக வும சிறநதவன

அனுபவ நிகழ்ச்சிகளையும், கதைகளையும் சொல்லும் திறன் :

1	2	3	4	5
ஒரு கதையும சொலலத திறமையிலலாதவன	தன கருததுககளை சரி யான முறையில எடுததுக கூறத தெரியாதவன	கதைகளைச சொலவதில சராசரி திறமையுளளவன	கதை மறறும நிகழசசி களை சரியான முறையில சொலவதில மிக அதிக மான திறமையுளளவன	கருத்துக்களை அர்த்த முளளதாகவும, சரியான முறையில சொலவதில மிகவும சிறநத திறமை யுளளவன

5. விழிப்புணர்ச்சி (Orientation)

	1	2	3	4	5
காலம் தவறுமை :	காலததின பொருளைப புரிநதுக கொளளத தெரியாதவன எபபோதுமே தாமதமாக வருபவன அலலது காலததின தனமையறியாது குழமபிக கொளபவன	காலததின தனமையை யறியாதவன எபபோதும தாமதிபபவன நேரததை வீணடிபபவன	வயதிறகும, வகுபபிறகும ஏறற அளவில காலததின தனமையை புரிநதுக கொளபவன.	காலம தவறுதவன. ஒரு வேளை தவறினுல அது தகுநத காரணமுடையதாக இருககும.	குறிபபிடட திடடஙகளை நடததிக காடடுவதில மிகவும திறமை வாயநதவன.
இடம் பொறுத்து விழிப்புணர்ச்சி :	எபபோதுமே குழமபிக கொள்பவன வகுபபு, பளளி விளையாடுமிடம, மறறும சுறறு புறததின இடம அறியாமல குழமபிக கொளபவன	பழககபபடட இடஙகளில் கூட அடிககடி காணுமற போயவிடுவான	பழககபபடட இடங்களை அறிநது வைததிருபபதில வயது மறறும வகுபபிறகேறப திறமையுளளவன	மிக அதிக திறமையுளளவன அரிதாகவே எஙகாவது காணுமற போயவிடுவான அலலது குழமபிக கொளவான	எபபோதுமே தவறமாடடான இடஙகளை மறறும சூழநிலைகளுககு ஏறப நடநதுககொளவான
சிறியது, பெரியது, தொலைவு, அருகே, இலேசானது, பளுவானது என்பதன் உறவுகளை அறிந்திருக்கும் திறமை :	உறவுகளை அறிநதுக கொளளும சகதியிலலாதவன.	சாதாரண உறவுகளைப புரிநதுகொளவதிலவெறறியடைபவன	வயதிறகும, வகுபபிறகும ஏறற இமமாதிரியான உறவுகளை சராசரியாக அறிநது கொணடிருபபவன	சரியாகப புரிநதுக கொளபவன ஆனுல புதிய சூழநிலைகளுககுப பயனபடுதத தெரியாதவன	உறவுகளைப புரிநதுக கொளளும் ஆறறலில மிகவும சிறநதவன
வழிமுறைகளை அறியும் திறன் :	வடககு, தெற்கு, வலது, இடது இவைகளுககுரிய வேறுபாடுகளை கூட தெரிநதுகொளள முடியாமல அலலது இயலாமல மிகவும அதிகமாகக குழமபிக கொளபவன	எபபோதாவது திசைகளை அறிநது கொளவதில சிறு குழபபம அடைவான	திசைகளைபபறறி சராசரியாகப புரிநதுக கொளபவன	திசைகளை அலலது வழிமுறைகளை நனருக அறிநதிருநதும எபபோதாவது குழமபிக கொளபவன	வழிமுறைகளைப பறறி மிகவும அதிகமான அறிவாறறல உடையவன

ஈ. நடத்தை (Behaviour)

1	2	3	4	5
ஒத்துழைப்பு :				
எபபோதும வகுபபிற்கு இடைஞசலாக இருபபான செயகளை கடடுப்படுததமுடியாதவன.	தனனேயே எலலோரும கணகாணிகக வேணடு மெனறு விருமபுபவன தன முறை வருவதறகுளளாக வும, எபபோதும பேசிக கொணடிருபபவன	வகுபபிறகும, வயதிறகும ஏறற நிதானமும, பொறு மையும உளளவன	மிகவும சிறநத முறையில ஒததுழைதது நடபபவன	பெரியவாகளுடைய ஊகக மும, துணையும இலலாம லேயே மிகவும நனறுக ஒத துழைபபவன
கவனம் :				
எபபோதுமே கவனிகக மாடடான கவனம அடிக கடி திசைமாறும,	கவனம அடிககடி திசை மாறுவதால அரிதாகவே கவனிபபான	தன வயதிறகும, வகுபபிற கும ஏறற அளவிறகு கவ னம செலுததுவான	கூடுமான வரையில எப போதும மிக நனறுக கவ னிபபான	எபபோதும முககியமான விஷயஙகளை மிக உனனிப பாகவும, நீணட நேரமும கவனிபபான
உருவாக்கும் திறமை ;				
எதையுமே ஒழுங்காக உரு வாகக முடியாது	அநேகமுறை பொறுபபில லாமையாலும, அஜாககிர தையாலும வேலைச செயயு முறையில எதையுமே ஒழுங காக உருவாகக முடியாது	வேலை செயவதிலும, உரு வாககுவதிலும சராசரி திற மையுளளவன எபபோ தும ஜாககிரதையாக இருப பவன	வேலை செயவதிலும, உரு வாககுவதிலும சிறநத திறமைமிககவன ஸதிர மாக வேலை செய பவன	கொடுககபபடட வேலைகளை மிக நுணுககமாகவும, சிறநத முறையிலுமசெயது முடிபபவன
புதிய சூழ்நிலைகளுக்கு ஏற்ப ஒத்துப்போகும் திறமை :				
மிகவும உணாசசி வசபபடு பவன மொததததில தனனை கடடுபபடுததிக கொளளும திறமையிலலா தவன	புது சூழநிலைகளில அள விறகு மீறி நடநதுக கொளபவன இதனால மிக வும தொநதரவாக இருக கும	வயதிறகும, வகுபபிறகும ஏறப புதிய சூழநிலைகளில அனுசரிதது நடநதுகொள பவன	தன நமபிககையுடன சுலப மாக உடனடியாக சூழ நிலைகளுககேறப தனனை அமைததுக கொளபவன	தன சுய முயறசியில சுதந திரமாக இதுபோனற சூழ நிலைகளில மிகவும நனறுக ஒததுபோகும
சமூக வாழ்க்கை :				
எலலோராலும ஒதுககபபடு பவன	பிறரால பொறுததுப போகக கூடியவன	வயதிறகும, வகுபபிறகும தகுநதவாறு மறறவாக ளால விருமபபபடுபவன	எலலோராலும மிகவும விருமபப படுபவன.	மறறவாகளால எபபோ துமே வேணடபபடுபவன

4. நடத்தை (Behaviour)—(Contd)

பொறுப்புகளை உணர்பவன் :

1	2	3	4	5
பொறுபபுககளை மறுபப வன எநத செயலகளையும ஆரமபிகக விருமபமாட டான	பொறுபபுகளிலிருநது தப பிததுக கொளபவன, தன வயதிறகுடபடட பொறுப புகளைக குறைநத அள வில ஏறறுககொளபவன	வயதிறகும, வகுபபிறகும தகுதத தன பொறுபபு களை உணாநது ஒததுக கொளபவன	மிகவும விருமபி முனவநது தாஞகவே பொறுபபேறறு சிறநத முறையில சாரி யததை முடிபபான	பொறுபபுகளை முன வநது ஏறறுக கொளவான, கூடு மானவரையில எபபோதும ஊககததோடு த லை மை ஏறறு நடததுவான

கொடுக்கப்பட்ட வேலைகளை முடித்தல் :

1	2	3	4	5
பிறருடைய உ த வி க ள இருநதாலும கூட எபபோ தும காரியஙகளை முடிகக மாடடான	பிறருடைய உதவி இருந தாலுமே அரிதாகவே காரி யஙகளை முடிபபான	கொடுதத வே லை க ளை புரிநது கொளவதறகுரிய சராசரி திறமையுடைய னை	வேலைகளைச செயவதற குரிய திறமை மிகவும உள ளவன	மேறபாாவை ஏதுமிலலா மலே அனைததும முடிபப வன

சமயோசித புத்தி ;

1	2	3	4	5
எபபோதுமே முரடடுத தனமாக நடநதுககொள பவன.	சாதாரணமாக மறறவாக ளின உணாசசிகளைப புரிந துககொணடு மதிககத தெரியாதவன	சராசரியான சமயோசித புதகி இருநதும, சில சம யஙகளில சமுகததில முறையாக நடநதுக கொளளமாடடான	மிக அதிகமான சமயோ சித புததி உளளவன மிக வும அரிதாகவே சமூகத தில முறைகேடாக நடந துக கொளபவன	எபபோதுமே சமயோசித திறமையுளளவன சமுகத தில முறைகேடாக எப போதுமே நடககமாட டான

5. இயங்கும் சக்தி (Motor)

இணைத்து இயங்குவதில் பொதுத் திறமை : (ஓடுதல், ஏறுதல், இறங்குதல், நொண்டுதல், நடத்தல் முதலியன)

1	2	3	4	5
குறைநத திறமையுளள வன சுததமாகவும, முறையாகவும இயஙகத தெரியாதவன	சராசரிககு குறைவான திறமையுளளவன ஆனால அசிஙகமாக இருககும	வகுபபிறகும, வயதிறகும ஏறப சராசரியாக நடப பான இயஙகுமபோது சரியாக இருககும ஆனால அழகாக இருககாது	மிகவும சிறநத முறையில இயஙகத தெரிநதவன.	தனிபபடட திறமையுளள வன இதில எலலோரை யும மிஞசி விடுவான

சமநிலை :

1	2	3	4	5
மிகவும குறைவானவன	சராசரிககு குறைநத சம நிலை யுளளதால அவன அடிககடி கீழே விழுநது விடுவான	வயதிறகேறப சராசரி சம நிலையுளளவன மிகவும சிறநத முறையில இலலா விடடாலும போதுமான சமநிலை உடையதாய இருபபவன,	சராசரிககு அதிகமான சமநிலை யுளளவன	இவவிஷயததில தனிப படட மிக அதிகத திறன உளளவன

பண்டங்கள், சாதனங்கள் முதலியவற்றை கையாளுதல் :

1	2	3	4	5
பொருளகளை கையாளும திறமை யிலலாதவன	மிக அசிஙகமான முறை யில கையாளுபவன	வயதிறகுத தககபடி கையாளுபவன	மிக அதிக திறமையும சிறநத முறையில கையா ளுபவன	மிகவும சிறநத முறையில கையாளுவதுடன புதிய பொருடகளையும கையா ளும திறமையுடையவன

PUPIL PERSONAL DATA SCHEDULE - APPENDIX III

THE INSTITUTE OF EDUCATIONAL RESEARCH
NCERT - ID RESEARCH PROJECT
PERSONAL DATA SCHEDULE

A PARENTAL REPORT

I IDENTIFYING INFORMATION

Name of the child .... Sex ....

Age .... Mother tongue .... Name of the

School ....

Place .... Class .... Home address .....

....

Father's/Guardian's Name, Education, Occupation and Income

....

Mother's Name, Education, Occupation and Income ....

....

Number of Brothers .... Sisters ....

Birth order of the child ....

II BIRTH HISTORY

a) MATERNAL HISTORY

i) Whether married in relation : YES/NO

ii) Prolonged infertility : YES/NO

iii) Abortions ... : YES/NO

b) PREGNANCY (Mother's condition during pregnancy)

i) Any serious illness/infection : YES/NO

iii) Diabetes ... : YES/NO

iv) Any strong medication : YES/NO

c) BIRTH CONDITIONS

i) Normal ... : YES/NO

ii) Matured birth ... : YES/NO

iii) Any unusual condition of the mother during delivery as transfusion of blood, prolonged : YES/NO ruptured membranes, severe bleeding, difficult or prolonged labor

iv) Any unusual condition of the child as,

a) Extreme unevenness in development : YES/NO

b) Congenital deformity : YES/NO

c) Serious head injury or concussion : YES/NO

d) High fever with convulsions : YES/NO

e) Prolonged period of unconsciousness: YES/NO

f) Jaundice/operation/respiratory problems ... : YES/NO

III DEVELOPMENTAL HISTORY

i) Physical growth for his age : NORMAL/UNUSUAL

ii) Teething structure : NORMAL/UNUSUAL

iii) Age of sitting (after 1½ yrs. of age) ... : NORMAL/UNUSUAL

iv) Age of first words (after 2 years of age) ... : NORMAL - YES/NO

v) Age of walking (after 2 yrs.of age): NORMAL - YES/NO

vi) Speech (After 3 years of age) (Stuttering, Stammering, lisping) : NORMAL/DIFFICULT

vii) Handedness ... : LEFT/RIGHT

IV HEALTH HISTORY (PRESENT)

i) Habits of walking ... : NORMAL/UNUSUAL
ii) Arm swing ... : Whether equal on both sides/fails to swing on one side
iii) Habits of eating ... : NORMAL/UNUSUAL
iv) Habits of sleeping ... : NORMAL/DISTURBED
v) Toilet Habits ... : NORMAL/UNUSUAL
vi) Somatic complaints and other illness :

Indigestion, whooping, cough, fever, primary complex, cold, constipation, allergy, diptheria, head-ache, stomach-ache, thumb-sucking, bed-wetting, rocking, tapping of fingers and feet, hair twisting and pulling, day dreaming, etc.

V EDUCATIONAL FACTORS

i) Age at which the child joined the school ....
ii) School experiences : Skipped classes : YES/NO
Repeated classes : YES/NO
iii) Frequent absenteeism ... : YES/NO
iv) Child's attitude towards studies : NEGATIVE/POSITIVE
v) Child's attitude towards teacher : POSITIVE/NEGATIVE
vi) Child's attitude towards school : POSITIVE/NEGATIVE
vii) Is there any regular time schedule for studies ... : YES/NO
viii) Does he seek any special help in his studies ... : YES/NO

VI HOME FACTORS

i) Foster Home ... : YES|NO
ii) Broken Home ... : YES/NO
iii) Unstable Home ... : YES/NO
iv) Over Expectations ... : YES/NO
v) High Expectations ... : YES/NO
vi) Undue Petting ... : YES/NO
vii) Authoritarian atmosphere ... : YES/NO
viii) Rejection by Parents ... : YES/NO
ix) Neglect by Parents ... : YES/NO

ITEM ANALYSIS - VALIDITY INDICES (APPENDIX IV)

ITEMS SELECTED FOR THE FINAL FORM OF THE ACHIEVEMENT SUB-TEST - VALIDITY INDICES

1 TAMIL SUB-TEST

PART	Selected item No. as per Test used in Pilot Study (Ref: Appendix-I)	New number assigned for the selected item (Ref: Appendix-III)	Discriminatory Index (Validity Index)
I (a)	2	1	.65
	3	2	.71
	4	3	.56
	7	4	.60
	8	5	.71
I (b)	2	1	.61
	3	2	.77
	4	3	.79
	7	4	.63
	6	5	.48
II (a)	1	1	.86
	2	2	.81
	4	3	.82
	5	4	.82
	8	5	.80
II (b)	3	1	.86
	5	2	.86
	7	3	.86
	8	4	.88
	10	5	.84

PART	Selected item No. as per Test used in Pilot Study (Ref: Appendix-I)	New number assigned for the selected item (Ref: Appendix-III)	Discriminatory Index (Validity Index)
III (a)	3	1	.84
	5	2	.86
	7	3	.82
	9	4	.88
	10	5	.86
III (b)	1	1	.75
	4	2	.75
	5	3	.80
	7	4	.75
	8	5	.79
IV (a)	1	1	.73
	2	2	.72
	3	3	.66
	4	4	.72
	5	5	.66
V	2	1	.71
	3	2	.84
	4	3	.77
	6	4	.63
	7	5	.60

PART	Selected item No. as per Test used in Pilot Study (Ref: Appendix-I)	New number assigned for the selected item (Ref: Appendix-III)	Discriminatory Index (Validity Index)
VI (a)	1	1	.77
	2	2	.77
	3	3	.75
	4	4	.80
	5	5	.77
VI (b)	1	1	.75
	2	2	.70
	3	3	.75
	4	4	.73
	5	5	.79

II ENGLISH SUB-TEST

PART	Selected item No. as per Test used in Pilot Study (Ref: Appendix-I)	New number assigned for the selected item (Ref: Appendix-III)	Discriminatory Index (Validity Index)
I (a)	1	1	.36
	6	2	.21
	8	3	.43
	9	4	.30
	10	5	.31
I (b)	1	1	.66
	2	2	.78
	6	3	.66
	9	4	.61
	10	5	.61
II	1	1	.82
	2	2	.86
	3	3	.86
	4	4	.84
	5	5	.84
	6	6	.79
	7	7	.84
	8	8	.79
	9	9	.75
	10	10	.82

PART	Selected item No. as per Test used in Pilot Study (Ref: Appendix-I)	New number assigned for the selected item (Ref: Appendix-III)	Discriminatory Index (Validity Index)
III (a)	1	1	.32
	2	2	.29
	3	3	.53
	4	4	.44
	5	5	.44
III (b)	1	1	.37
	3	2	.73
	6	3	.63
	7	4	.37
	9	5	.43
IV (a)	2	1	.81
	4	2	.81
	5	3	.84
	7	4	.73
	3	5	.55
IV (b)	1	1	.66
	3	2	.44
	5	3	.73
	6	4	.30
	8	5	.43

PART	Selected item No. as per Test used in Pilot Study (Ref: Appendix-I)	New number assigned for the selected item (Ref: Appendix-III)	Discriminatory Index (Validity Index)
V (a)	1	1	.58
	2	2	.68
	3	3	.73
	4	4	.63
	5	5	.30
	6	1	.77
	12	2	.72
	15	3	.73
	17	4	.80
	19	5	.72

II MATHEMATICS SUB-TEST

PART	Selected item No. as per Test used in Pilot Study (Ref: Appendix-I)	New number assigned for the selected item (Ref: Appendix-III)	Discriminatory Index (Validity Index)
	1	1	.68
	2	2	.34
	3	3	.38
	4	4	.47
	5	5	.34
	6	6	.54
	7	7	.53
	8	8	.48
	9	9	.37
	10	10	.57
	11	11	.41
	13	12	.51
	16	13	.48
	18	14	.45
	20	15	.42
	25	16	.48
	26	17	.43
	27	18	.41
	31	19	.31
	32	20	.32

IV SCIENCE SUB-TEST

Part	Selected item No. as per Test used in Pilot Study (Ref: Appendix-I)	New number assigned for the selected item (Ref: Appendix-III)	Discriminatory Index (Validity Index)
I	1	1	.53
	2	2	.66
	3	3	.51
	4	4	.60
	5	5	.58
	6	6	.45
	7	7	.51
	8	8	.34
	9	9	.68
	10	10	.66
II	1	1	.67
	2	2	.60
	5	3	.51
	6	4	.42
	7	5	.70
	8	6	.66
	11	7	.56
	13	8	.38
	14	9	.49
	15	10	.52

V HISTORY & GEOGRAPHY SUB-TEST

PART	Selected item No. as per Test used in Pilot Study (Ref: Appendix-I)	New number assigned for the selected item (Ref: Appendix-III)	Discriminatory Index (Validity Index)
I	1	1	.21
	2	2	.37
	3	3	.44
	4	4	.25
	5	5	.29
II	3	1	.48
	4	2	.30
	5	3	.37
	1	4	.33
	8	5	.41
III	2	1	.36
	5	2	.38
	6	3	.51
	7	4	.49
	8	5	.29
	2	6	.30
	3	7	.29
	4	8	.42
	5	9	.21
	10	10	.29

NCERT RESEARCH PROJECT (1980-82)
ACHIEVEMENT TEST - ENGLISH

Name of the Pupil : Class
Name of the School and Place : Age Sex.

I. a. Match the meanings of the following:

1. Afraid - Fight
2. Delay - Fear
3. Quarrel - Late
4. Prepare - Big
5. Large - Make
- Finish
- Joy.

I. b. Match the opposites of the following:

1. Beautiful - Sad
2. Small - That
3. Happy - Ugly
4. Yesterday - Big
5. This - Tomorrow
- Short
- Large

I. Read the following passage and answer the questions given below:

Our Village is fifteen Kilometres away from the sea. The Climate is warm. Our fields are green. We grow paddy in the fields. April, May and June are hot months. The days are very hot. We cannot go without umbrellas. The sun shines brightly. The nights are also hot. We cannot go without umbrellas. In April and May we have got holidays. We play at home. In the last week of May, the first rain falls. In July, August and September we get heavy rains. In October, November and December, the climate is cool.

Questions:

1. Where is our village ? ______
2. How is the Climate ? ______
3. Where do we grow paddy ? ______
4. Name the months which are hot ? ______
5. How does the sun shine ? ______
When do we have holiday ? ______
Where do we play ? ______